जैन स्तोक मंजूषा

(भाग ८)



प्रकाशक

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

समता भवन, बीकानेर(राज.)

* जैन स्तोक मजूषा
  (भाग ८)

* मूल्य – 22 रुपये

* अर्द्ध मूल्य – 11 रुपये

* प्रकाशक–
  श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ
  समता भवन, बीकानेर– 334005 (राज)

* लेजर टाईप सेटिग
  अमित कम्प्यूटर्स एण्ड प्रिन्टर्स
  बागडी मोहल्ला, बीकानेर (राज)

* आवरण
  सुधा ग्राफिक्स, बीकानेर

* मुद्रक
  सांखला प्रिन्टर्स
  चन्दन सागर,
  बीकानेर (राज)

प्रकाशकीय

गणधरो द्वारा ग्रथित आगम ग्रन्थो का अध्ययन और अनुशीलन जन सामान्य के लिए दुरुह है। किन्तु कोई भी जिज्ञासु पाठक सूक्ष्मार्थ प्रतिपादक इन विशालकाय ग्रन्थो से सरलता से तत्त्वज्ञान प्राप्त कर सके इसलिए शास्त्रो मे आये हुए मूल पाठो के आधार पर 'स्तोको–थोकडो' का सकलन हुआ इनमे विशेष रूप से भगवती सूत्र और प्रज्ञापना सूत्र के स्तोको का सकलन दृष्टिगत होता है। इन स्तोको की वाचना, पृच्छना, पारियट्टणा और अनुप्रेक्षा करके अनेक भव्य आत्माओ ने तलस्पर्शी तत्त्वज्ञान रहस्य प्राप्त किया है।

भगवती और प्रज्ञापना सूत्र के थोकडो का सर्वप्रथम व्यवस्थित प्रकाशन श्री अगरचन्द भैरूदान सेठिया जैन पारमार्थिक सस्था द्वारा हुआ। इसमे श्रद्धेय स्व आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा के शिष्य शास्त्रमर्मज्ञ प रत्न श्री पन्नालालजी म सा तथा सुश्रावक श्री हीरालालजी मुकीम को सैकडो थोकडे कठस्थ थे उनको भी श्री जेठमल जी सेठिया ने लिपिबद्ध करवाया। तत्पश्चात् भगवती सूत्र के थोकडो के नौ भागो मे तथा प्रज्ञापना सूत्र के थोकडो के तीन भागो मे विभाजित कर प्रकाशित करवाया। अनेक सत–सती एव मुमुक्षु भव्य जन इन थोकडो से लाभान्वित हुए।

इन थोकडो को कठस्थ करने से तथा चिन्तन, मनन अन्वेषण करने से शास्त्रो के गहन विषयो पर भी सरलता से अधिकार प्राप्त हो जाता है। इस बात का परीक्षण जब परम पूज्य समता विभूति समीक्षण ध्यान योगी आचार्य भगवन श्री नानालालजी म सा तथा शास्त्रज्ञ, तरुणतपस्वी अवधूत साधक

श्रद्धेय युवाचार्य श्री रामलाल जी म सा ने किया तो एक योजना बनी कि विद्यार्थी जीवन के प्रारम्भ मे ही थोकडे स्मरण करने के सस्कार डालना आवश्यक है। इधर श्री साधुमार्गी जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड द्वारा भी नवीन पाठ्यक्रम निर्धारण की माग जब परम श्रद्धेय आचार्य श्री जी म सा एवं परम श्रद्धेय युवाचार्य श्री म. सा के समक्ष रखी गयी तब आचार्य देव ने नवीन पाठ्यक्रम निर्धारण के लिए श्री युवाचार्य प्रवर को सकेत किया। संकेतानुसार श्रद्धेय युवाचार्य प्रवर ने उपस्थित सन्त–सती वर्ग के परामर्श से नवीन पाठ्यक्रम का निर्माण किया और उसमे अपने पूर्व चिन्तन का अनुसरण करते हुए थोकडो को भी एक महत्त्वपूर्ण स्थान दिया। अपनी विलक्षण प्रज्ञा से श्रद्धेय युवाचार्य श्री जी म सा ने विद्यार्थियो के परीक्षा स्तर को दृष्टि मे रखते हुए उनके अनुकूल थोकडो की नवीन सयोजना की।

श्रद्धेय युवाचार्य प्रवर की इस सयोजना को विद्यार्थियो की सुविधा के लिए प्रकाशित करवाने का निर्णय श्री अ भा साधुमार्गी जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड ने लिया और वह जैन स्तोक मंजूषा के रूप मे पाठको के समक्ष प्रस्तुत है।

धनराज बेताला
सयोजक

मिगसर सुदी ११
वि०स० २०५३
सन् १९९६

श्री साधुमार्गी जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड, बीकानेर

अर्थ सहयोगी

देशनोक निवासी श्री मोतीलालजी दुगड आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी म सा एव श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ बीकानेर के स्थापना काल से ही एकनिष्ठ सुश्रावक है। श्रीमद् जवाहराचार्य, श्री गणेशाचार्य, श्री नानेशाचार्य एव युवाचार्य श्री राममुनि के श्रद्धालु भक्तो मे श्री दुगडजी का परिवार अग्रणी है। शासननिष्ठ श्री मोतीलालजी दुगड के चार पुत्रो—श्री सुन्दरलालजी दुगड, श्री सोहनलालजी दुगड, श्री पूनमचन्द दुगड एव श्री कौशल कुमार दुगड मे श्री सुन्दरलालजी ज्येष्ठ पुत्र है तथा सघ एव समाज के कर्मठ कार्यकर्त्ताओ मे महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

श्री सुन्दरलालजी दुगड जैन समाज के उन युवा उद्योगपतियो मे प्रमुख है, जिन्होने विगत एक दशक मे अपने अथक परिश्रम, कौशल, प्रतिभा तथा उदारता से न केवल औद्योगिक जगत मे विशिष्ठ स्थान बनाया है अपितु अपनी धर्मनिष्ठा, सदाचारिता एव दु खकातरता से शिक्षा और सेवा के क्षेत्र मे भी अनुकरणीय आदर्श स्थापित किया है।

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ के पूर्व उपाध्यक्ष श्री सुन्दरलालजी दुगड अनेक सामाजिक, शैक्षणिक, धार्मिक तथा सेवा सस्थानो के सम्प्रति ट्रस्टी, अध्यक्ष, मत्री आदि विभिन्न पदो पर कार्यरत है एव घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है। श्री दुगड ने भवन निर्माण का कार्यारम्भ कर व्यवसाय जगत मे प्रवेश किया एव आर डी बिल्डर्स की स्थापना की,

किन्तु अपनी दूरदर्शिता कार्यकुशलता त्वरित निर्णय क्षमता तथा प्रतिभा के बल पर आज दैनिक बगला अखबार सोनार बगला एव जूट आदि मिलो का सचालन कर रहे है। आर डी बिल्डर्स नामक इनकी कम्पनी आर डी.बी इण्डस्टीज लि मे परिवर्तित होकर औद्योगिक जगत मे पैर जमाकर इनके गतिशील चुम्बकीय व्यक्तित्व की कहानी कह रही है।

युवा उद्योग रत्न श्री सुन्दरलालजी दुगड समय की नब्ज पहचानने वाले प्रगतिशील विचारो के धनी है। 'दिया दूर नही जात' के पथ का अनुसरण करने वाले श्री दुगड ने अपनी जन्मभूमि देशनोक मे समता–शिक्षा–सेवा सस्थान की स्थापना मे प्रमुख भूमिका का निर्वहन किया है। कपासन (उदयपुर) मे आचार्य नानेश रूप रेखा प्राणी रक्षालय की स्थापना भी इनके अनुदान से हुई है।

हसमुख, मिलनसार, विनम्र श्री दुगड का व्यक्तित्व प्रदर्शन, विज्ञापन एव पाखड से सर्वथा दूर सरलता सादगी और उदारता से समन्वित कलकत्ता के जैन अजैन समाज मे अत्यन्त लोकप्रिय है। अनेक राजनेताओ से घनिष्ठ सम्बन्ध होने पर भी ये एक निरभिमानी निष्काम कर्मठ कार्यकर्त्ता के रूप मे जाने पहचाने जाते है, धर्म और सेवा का कलकत्ता मे ऐसा कोई सस्थान तथा सगठन नहीं है जो इनके उदार सहयोग एव सक्रिय व्यक्तित्व से लाभान्वित नहीं होता हो।

श्री दुगड जी के अर्थ सहयोग से प्रकाशित यह पुस्तक इनकी प्रशस्त एव प्रगाढ धर्म भावना का प्रतीक है। इस सहयोग हेतु हम इनके हृदय से आभारी है।

***

अनुक्रमणिका

जैन स्तोक मंजूषा
भाग - ८

१. नरकलोकादि सात द्वार का थोकड़ा
(भगवतीसूत्र, शतक तेरहवा, उद्देशा चौथा)

श्री भगवतीजी सूत्र के १३वे शतक के चौथे उद्देशे मे नरकलोक आदि ७ द्वार का थोकडा चलता है, सो कहते है –

१ नैरयिक्द्वार , २ स्पर्शद्वार ,३ प्रणिधिद्वार ,४ निरयान्तद्वार , ५ लोकमध्यद्वार,६ दिशाविदिशाद्वार, ७ अस्तिकायप्रवर्तनद्वार ।

१ नैरयिकद्वार– अहो भगवन् ! नरक कितनी कही गई है ? हे गौतम ! नरक सात कही गई है – रत्नप्रभा यावत् तमतमाप्रभा।

तमतमाप्रभा नामक सातवीं नरक मे * ५ नरकावास है। वे नरकावास छठी नरक के नरकावासो से १ महा लम्बे-चौडे , २ महा विस्तार वाले, ३ महा अवकाश वाले , ४ महा शून्यस्थान वाले

** इन ५ नरकावासो मे से अपइट्ठाण नामक बीच का नरकावास छठी नरक के नरकावासो से छोठा है, लेकिन यहां समुच्चय बोल लिया है, इसलिए अलग नही कहा है।*

(जीव थोडे हैं और स्थान बहुत खाली) हैं। उन नरकावासों मे रहने वाले जीव १ महाकर्म वाले, २ महाक्रिया वाले, ३ महा-आश्रव वाले , ४ महावेदना वाले , ५ अल्पऋद्धि वाले , ६ अल्पद्युति वाले है।

छठी नरक मे पाच कम एक लाख नरकावास है । ये नरकावास सातवीं नरक के नरकावासो से १ अल्प लम्बे-चौडे , २ अल्प विस्तार वाले, ३ अल्प अवकाश वाले, ४ अल्प शून्यस्थान वाले (जीव बहुत हैं और खाली स्थान थोडा) है। इन नरकावासो मे रहने वाले जीव सातवीं नरक के नारकी जीवो से १ अल्पकर्म वाले, २ अल्पक्रिया वाले, ३ अल्प-आश्रव वाले, ४ अल्पवेदना वाले, ५ महाऋद्धि वाले, ६ महाद्युति वाले है। इसी तरह यावत् पहली नरक तक कह देना चाहिये।

२ स्पर्शद्वार– अहो भगवन् ! नारकी जीव वहा की पृथ्वी का कैसा स्पर्श अनुभव करते है ? हे गौतम ! वे नारकी जीव वहा की पृथ्वी का अनिष्ट यावत् अमनोज्ञ स्पर्श अनुभव करते है। इसी तरह वे जीव वहा के पानी * यावत् वनस्पतिकाय का भी अनिष्ट यावत् अमनोज्ञ स्पर्श अनुभव करते है।

३ प्रणिधिद्वार– अहो भगवन् ! सात नारको की मोटाई-

** यहा ' यावत्' शब्द से तेजस्काय और वायुकाय का ग्रहण किया गया है । बादर तेजस्काय सिर्फ अढाई द्वीप मे ही होती है। इसलिए नरक मे बादर तेजस्काय नही होती परन्तु वहा पर अग्नि के समान अन्य उष्ण वस्तु होती है। इसलिए नरक के जीव तेजस्काय के स्पर्श का अनुभव करते है।*

पोलाई (चौडाई) कैसी है ? हे गौतम ! पहली नरक दूसरी नरक की अपेक्षा जाडाई मे मोटी + है और चारो दिशाओ मे लम्बाई-पोलाई मे छोटी है। इसी तरह दूसरी नरक तीसरी नरक से जाडाई मे मोटी है और चार दिशाओ मे लम्बाई-पोलाई मे छोटी है। इसी तरह सातवीं नरक तक कह देना चाहिये।

४ निरयातद्वार– अहो भगवन् ! नरकावासो के आसपास जो पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक जीव है, वे कैसे कर्म वाले यावत् कैसी वेदना वाले है ? हे गौतम ! वे जीव महाकर्म , महाक्रिया, महा-आश्रव और महावेदना वाले है ।

५ लोकमध्यद्वार– अहो भगवन् ! लोक का मध्यभाग कहा है ? हे गौतम ! समुच्चय लोक का मध्यभाग पहली नरक के नीचे आकाश (आन्तरे) में असख्यातवें भाग जाने पर है। अधोलोक (नीचालोक) का मध्यभाग चौथी नरक के आकाशखण्ड का कुछ अधिक अर्द्धभाग जाने पर है। ऊर्ध्वलोक (ऊचा लोक) का मध्यभाग पाचवे देवलोक की तीसरी रिष्ट नामक पडतल (प्रतर) मे

+ पहली नरक जाडाई मे एक लाख अस्सी हजार योजन प्रमाण है व दूसरी नरक जाडई मे एक लाख बत्तीस हजार योजन प्रमाण है । पहली नरक लम्बाई और पोलाई (चौडाई) मे एक रज्जु (राजु) प्रमाण है इसलिए छोटी है और दूसरी उससे अधिक प्रमाण वाली है (अढाई राजू की लम्बी-चौडी है)। तीसरी नरक ४ राजू की लम्बी-चौडी है, चौथी नरक ५ राजू की लम्बी-चौडी है, पाचवी नरक ६ राजू की लम्बी-चौडी है, सातवी नरक ७ राजू की लम्बी-चौडी है।

है। तिर्यग्लोक (तिर्छालोक) का मध्यभाग मेरुपर्वत के बीचोबीच (रत्नप्रभापृथ्वी के ऊपर दो क्षुद्र प्रतर ऊपर और नीचे है, उनके बीच मे + आठ रुचक) प्रदेश है, वहा है।

६ दिशाविदिशाद्वार– मेरु पर्वत के बीचोबीच आठ रुचक प्रदेशों से दस दिशाए निकली हैं। दस दिशाओ के नाम इस प्रकार है – १ इन्द्रा (पूर्वदिशा), २ अग्निकोण (पूर्वदक्षिण के बीच), ३ जम्मा (दक्षिणदिशा), ४ नैऋत्यकोण (दक्षिणपश्चिम के बीच), ५ वारुणी (पश्चिमदिशा), ६ वायव्यकोण (पश्चिमउत्तर के बीच), ७ सोमा (उत्तरदिशा), ८ ईशानकोण (उत्तरपूर्व के बीच), ९ विमला (ऊचीदिशा), १० तमा (नीचीदिशा)। इन दस दिशाओ के नाम वाले दस देव दिशाओ के मालिक है। दस दिशाए रुचक प्रदेशों से निकली है। रुचक प्रदेशो से इनकी आदि (शुरुआत) है। चार दिशाए आदि (शुरु) मे दो प्रदेशी है फिर आगे दो दो प्रदेश विस्तार वाली होती गई हैं। लोक आसरी असख्यात प्रदेशी है और आलोक आसरी अनन्त प्रदेशी है। लोक आसरी सादि -सान्त (आदि-अन्तसहित) है और अलोक आसरी सादि-अनन्त (आदि सहित और अन्त रहित) है। लोक आसरी मुरज (मृदंग) के आकार है और अलोक आसरी गाडी के ऊध (आगे के हिस्से) के आकार है।

चार विदिशाये रुचक प्रदेशो से निकली हैं, रुचक प्रदेश से उनकी आदि (शुरुआत) है। वे आदि मे एक प्रदेश वाली है और

+ रत्नप्रभापृथ्वी के ऊपर ही दोनों क्षुद्र प्रतर है। ये प्रतर सबसे छोटे है। इनके बीचोंबीच ही आठ रुचक प्रदेश हैं।

फिर आगे उत्तरोत्तर वृद्धि रहित लोक अलोक तक चली गई है। लोक आसरी असंख्यात प्रदेशी है , सादि-सान्त है। अलोक आसरी अनन्त प्रदेशी है, सादि-अनन्त है। टूटी हुई मुक्तावली (मोती की माला) के आकार है।

विमला (ऊचीदिशा), तमा (नीचीदिशा) रुचक प्रदेशो से निकली है। रुचक प्रदेशो से इनकी आदि है। आदि (शुरु) मे ये चार प्रदेशी है । दो प्रदेश की चौडी है। उत्तरोत्तर वृद्धि रहित लोक अलोक तक चली गई है। लोक आसरी असख्यात प्रदेशी और सादि-सान्त है। अलोक आसरी अनन्त प्रदेशी और सादि-अनन्त है। ये रुचक प्रदेशो के आकार वाली है।

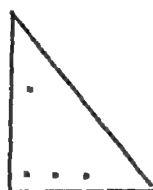
७ अस्तिकायप्रवर्तनद्वार – अहो भगवन् ! लोक क्या है ? हे गौतम ! लोक पचास्तिकाय रूप है। धर्मास्तिकाय गतिलक्षण है। जीवो के गमनागमन , भाषा , नेत्र उघाडने , मन-वचन-काय योग मे सहायक है। इसी प्रकार दूसरे भी जो गमनशील पदार्थ है वे सभी धर्मास्तिकाय से प्रवृत्ति करते है। अधर्मास्तिकाय स्थितिलक्षण है। जीवो को खडा रहने मे , बैठने मे , सोने मे , मन स्थिर करने मे सहायक है। इसी प्रकार दूसरे भी जो स्थिर पदार्थ है वे सभी अधर्मास्तिकाय से प्रवृत्ति करते है। आकाशास्तिकाय अवगाहनालक्षण है। जीवो के लिए और अजीवो के लिए आश्रय रूप है। जीवास्तिकाय उपयोगलक्षण है। ज्ञान और दर्शन उपयोग रूप है। पुद्गलास्तिकाय ग्रहणलक्षण है। इससे जीवो के इन्द्रिय, शरीर आदि बनते है।

२. प्रदेशस्पर्शना ओघाया का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक तेरहवा, उद्देशा चौथा)

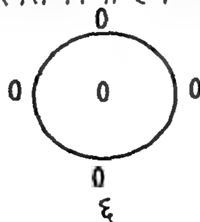
१ अस्तिकाय प्रदेशस्पर्शनाद्वार– अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश ने धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शा है ? हे गौतम ! + जघन्य ३ , उत्कृष्ट ६ , प्रदेशो को स्पर्शा है , धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश ने अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को

+ यहां जघन्य पद लोकान्त के कोण मे होता है। उस भूमि के नजदीक छोटी कोटडी के कोण के समान होता है। जैसे कि–



यहां धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश ने धर्मास्तिकाय के ऊपर के एक प्रदेश को और पास के दो प्रदेशो को स्पर्श किया है। इस प्रकार धर्मास्तिकाय के तीन प्रदेशो को स्पर्श किया है ।

उत्कृष्ट पद मे चार दिशाओ के चार प्रदेशो को तथा ऊर्ध्वदिशा के एक प्रदेश को और अधोदिशा के एक प्रदेश को, इस प्रकार छह प्रदेशो को स्पर्श किया है। जैसे–



स्पर्शा है ? — जघन्य ४ , उत्कृष्ट ६ प्रदेशो को स्पर्शा है । धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश ने आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शा है ? आकाशास्तिकाय के ७ प्रदेशो को स्पर्शा है।
* धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश ने जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शा है ? जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय के अनन्त प्रदेशो को स्पर्शा है।

— जिस प्रकार जघन्य पद मे धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश ने धर्मास्तिकाय के तीन प्रदेशो को स्पर्शा है, उसी प्रकार अधर्मास्तिकाय के तीन प्रदेशो को स्पर्शा है और धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश के स्थान मे रहे हुए अधर्मास्तिकाय के एक प्रदेश को स्पर्शा है, ये सब मिलाकर चार प्रदेशो को स्पर्शा है।

उत्कृष्ट पद मे छह दिशा के छह प्रदेश और अधर्मास्तिकाय के एक प्रदेश के स्थान मे रहे हुए धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश, इस प्रकार सात प्रदेशो को स्पर्शा है। लोकान्त मे भी अलोकाकाश होने से पूर्वोक्त सात आकाशास्तिकाय के प्रदेशो को स्पर्शा है। सर्व दिशाओ मे आकाश होने से आकाशास्तिकाय मे जघन्य स्पर्शना नही होती है।

** धर्मास्तिकाय का जहा एक प्रदेश है वहा और उसके पास मे अनन्त प्रदेश होने से वह जीवो के अनन्त प्रदेशो को स्पर्शता है। इसी प्रकार पुद्गलास्तिकाय के अनन्त प्रदेशो को भी स्पर्शता है।*

* धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश ने काल के कितने प्रदेशो को स्पर्शा है ? काल को कदाचित् स्पर्शता है और कदाचित् नहीं स्पर्शता है, यदि स्पर्शता है तो नियमा (अवश्य) अनन्त समयों को स्पर्शता है।

अहो भगवन्! अधर्मास्तिकाय के एक प्रदेश ने धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शा है ? हे गौतम! + जघन्य ४, उत्कृष्ट ७ प्रदेशो को स्पर्शा है। अधर्मास्तिकाय के एक प्रदेश ने अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शा है ? अधर्मास्तिकाय के एक प्रदेश ने अधर्मास्तिकाय के जघन्य ३, उत्कृष्ट ६ प्रदेशो को स्पर्शा है। आकाशास्तिकाय से लेकर काल तक धर्मास्तिकाय के माफिक कह देना चाहिये।

अहो भगवन्! आकाशास्तिकाय के एक प्रदेश ने धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शा है ? हे गौतम! कदाचित् स्पर्शता है (लोक आसरी)। कदाचित् नहीं स्पर्शता है (अलोक आसरी),

---

** अद्धासमय सिर्फ समयक्षेत्र (अढाई द्वीप) मे ही होता है। क्योकि जहा सूर्य की गति है (सूर्य चलता है) वहीं पर समय आदि काल होता है। इसलिए अद्धासमय को धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश कदाचित् स्पर्शता है और कदाचित् नहीं स्पर्शता है। यदि स्पर्शता है तो अनन्त अद्धासमयों को स्पर्शता है। क्योकि वह अनादि होने से अनन्त समयों को स्पर्शता है।*

+ जिस प्रकार धर्मास्तिकाय के प्रदेश की स्पर्शना का कथन किया गया है, उसी प्रकार अधर्मास्तिकाय के प्रदेश की स्पर्शना का भी कथन कर देना चाहिए।

यदि स्पर्शता है तो * जघन्य एक दो तीन चार और उत्कृष्ट सात प्रदेशो को स्पर्शता है। इसी तरह अधर्मास्तिकाय का भी कह देना चाहिये। अहो भगवन् ! आकाशास्तिकाय के एक प्रदेश ने आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शा है ? हे गौतम ! छह प्रदेशो को स्पर्शा है। अहो भगवन् ! आकाशास्तिकाय के एक

** आकाशास्तिकाय का एक प्रदेश लोक मे रहे हुए धर्मास्तिकाय के प्रदेशो को स्पर्शता है और अलोक मे धर्मास्तिकाय नही होने से नहीं स्पर्शता । यदि स्पर्शता है तो जघन्य पद मे (१) लोकान्त मे रहे हुए धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश को स्पर्शता है। (२) वक्रगत (टेढा रहा हुआ) आकाशप्रदेश धर्मास्तिकाय के दो प्रदेशो को स्पर्शता है। (३) आकाशास्तिकाय के प्रदेश के साथ रहा हुआ प्रदेश और एक पास का प्रदेश और एक ऊपर का या नीचे का प्रदेश, इस तरह धर्मास्तिकाय के तीन प्रदेशो को स्पर्शता है। (४) लोकान्त के कोण मे रहा हुआ आकाशप्रदेश वह तदाश्रित प्रदेश, ऊपर का प्रदेश या नीचे का प्रदेश और दो दिशाओ मे रहे हुए दो प्रदेश, इस प्रकार धर्मास्तिकाय के चारो प्रदेशो को स्पर्शता है। (५) जो आकाशप्रदेश ऊपर के , नीचे के और दो दिशाओ मे रहे हुए दो प्रदेशो को तथा वही पर रहे हुए धर्मास्तिकाय के प्रदेश को स्पर्शा है, वह पाच प्रदेशो को स्पर्शता है। (६) जो आकाशप्रदेश ऊपर के, नीचे के तथा तीन दिशाओ के और वहीं पर रहे हुए धर्मास्तिकाय के प्रदेश को स्पर्शता है वह छह प्रदेशो को तथा (७) जो आकाशप्रदेश ऊपर के, नीचे के, चार दिशाओ के तथा वहीं पर रहे हुए धर्मास्तिकाय के प्रदेश को स्पर्शता है, वह सात प्रदेशो को स्पर्शता है। जिस प्रकार धर्मास्तिकाय का कहा, उसी प्रकार अधर्मास्तिकाय का कह देना चाहिए।*

प्रदेश ने जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शा है ? हे गौतम ! जीवास्तिकाय के प्रदेशो को कदाचित् स्पर्शता है, कदाचित् नही स्पर्शता है, यदि स्पर्शता है तो नियमा अनन्त प्रदेशों को स्पर्शता है। इसी तरह पुद्‌गलास्तिकाय के प्रदेशो की और अद्धाकाल के समयो की स्पर्शना कह देनी चाहिए ।

अहो भगवन् ! जीवास्तिकाय के एक प्रदेश ने धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों को स्पर्शा है ? हे गौतम ! जघन्य ४ उत्कृष्ट सात प्रदेशो को स्पर्शा है। इसी तरह अधर्मास्तिकाय कह देना चाहिये। अहो भगवन् ! जीवास्तिकाय के एक प्रदेश ने आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शा है ? हे गौतम ! आकाशास्तिकाय के सात प्रदेशो को स्पर्शा है। जीवास्तिकाय, पुद्‌गलास्तिकाय और काल धर्मास्तिकाय की तरह कह देना चाहिये। (जीवास्तिकाय और पुद्‌गलास्तिकाय के अनन्त प्रदेशों को स्पर्शा है। काल को कदाचित् स्पर्शता है, कदाचित् नही स्पर्शता, यदि स्पर्शता है तो नियमा अनन्त समयो को स्पर्शता है)।

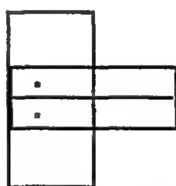
अहो भगवन् ! पुद्‌गलास्तिकाय के एक प्रदेश ने धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शा है ? हे गौतम ! धर्मास्तिकाय से लेकर काल तक सब अधिकार जीवास्तिकाय की तरह कह देना चाहिये ।

अहो भगवन् ! पुद्‌गलास्तिकाय के दो प्रदेशो ने धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों को स्पर्शा है ? हे गौतम ! पुद्‌गलास्तिकाय के दो प्रदेशो ने धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय

के * जघन्य ६-६ प्रदेशो को , उत्कृष्ट १२-१२ प्रदेशो को स्पर्शा है। पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेशो ने आकाशास्तिकाय के

* *यहा चूर्णिकार का मत इस प्रकार है–लोकान्त मे द्विप्रदेशी स्कन्ध एक प्रदेश को अवगाहन करके रहा हुआ है, तो भी उस प्रदेश को प्रति द्रव्य की अवगाहना होती है । इस नयमत की विवक्षा से अवगाह प्रदेश एक होते हुए भी भिन्न मानने से उसने दो प्रदेशो को स्पर्शा है तथा उसके ऊपर का अथवा नीचे का जो प्रदेश है वह भी नय के मत से दो प्रदेशो का स्पर्शता है और पास के दो परमाणु एक एक प्रदेश को स्पशति है, इस प्रकार धर्मास्तिकाय के छह प्रदेशो को द्विप्रदेशी स्कन्ध स्पर्शता है । यदि नय के मत का आश्रय न लिया जाय तो द्विप्रदेशी स्कन्ध चार प्रदेशो को स्पर्शता है।*

इस विषय मे वृत्तिकार का मत इस प्रकार है–

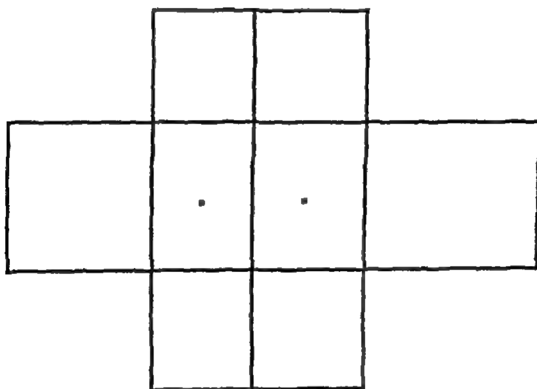


यहा पर जो दो बिंदिया लगी हुई है, उन्हे दो परमाणु (द्विप्रदेशी) समझना चाहिए, उसमे से इस तरफ का परमाणु इस तरफ के धर्मास्तिकाय के प्रदेशो को स्पर्शता है और दूसरी तरफ का परमाणु दूसरी तरफ के धर्मास्तिकाय के प्रदेशो को स्पर्शता है, ये दो प्रदेश हुए। जिन दो प्रदेशो मे दो परमाणु स्थापित किये हुए है, उनके आगे के दो प्रदेशो को स्पर्शता है। ये चार प्रदेश हुए। दो अवगाहे हुए

१२ प्रदेशों को स्पर्शा है । पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेशो ने जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय के अनन्त प्रदेशो को स्पर्शा है। पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेशो ने काल को कदाचित् स्पर्शा है और कदाचित् नहीं स्पर्शा है। यदि स्पर्शा है तो नियमा अनन्त समयों को स्पर्शा है।

प्रदेशो को स्पर्शता है । इस प्रकार छह प्रदेशो को स्पर्शता है।

उत्कृष्ट १२ प्रदेशों को स्पर्शता है, वह इस प्रकार है–



द्विप्रदेशावगाढ होने से अवगाहना के दो प्रदेश, दो प्रदेश ऊार के और दो प्रदेश नीचे के, पास के दो-दो प्रदेश तथा उत्तर और दक्षिण का एक एक प्रदेश, ये सब मिलाकर १२ प्रदेश हुए। यह उत्कृष्ट १२ प्रदेशो को स्पर्शता है ।

पुद्गलास्तिकाय के तीन प्रदेशो ने धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय के * जघन्य ८-८ प्रदेशो को, उत्कृष्ट १७ - १७ प्रदेशो को स्पर्शा है। आकाशास्तिकाय के १७ प्रदेशो को स्पर्शा है, शेष जीवास्तिकाय , पुद्गलास्तिकाय और काल का कथन पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेशी माफिक कह देना चाहिए।

पुद्गलास्तिकाय के चार प्रदेशो ने धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय के जघन्य १० - १० प्रदेशो को, उत्कृष्ट २२ - २२ प्रदेशो को स्पर्शा है । आकाशास्तिकाय के २२ प्रदेशो को स्पर्शा है। शेष जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और काल का कथन पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेशी माफिक कह देना चाहिए।

** पुद्गलास्तिकाय के तीन प्रदेश एक प्रदेशावगाढ होते हुए भी पूर्वोक्त नय के मत से अवगाहे हुए तीन प्रदेश, ऊपर के या नीचे के तीन प्रदेश और पास के दो प्रदेश, इस प्रकार धर्मास्तिकाय के आठ प्रदेशों को स्पर्शता है। यहा जघन्य पद मे विवक्षित परमाणु को दुगुणे करके उनमे दो और मिला देने चाहिए, उतने प्रदेशो को स्पर्शता है। उत्कृष्ट पद में विवक्षित परमाणु से पाच गुणा करके उनमे दो और मिला देना चाहिए। उतने प्रदेशो को स्पर्शता है। जैसे– एक प्रदेश की स्पर्शना निकालनी हो तो एक को दुगुणा करने से दो हुए। उनमे दो और मिला देने से चार हुए। इस प्रकार एक परमाणु जघन्य चार प्रदेशो को स्पर्शता है। उत्कृष्ट पद मे एक परमाणु को पाच गुणा करने से पाच हुए। उनमे दो और मिला देने से सात हुए। इस प्रकार एक परमाणु उत्कृष्ट सात प्रदेशो को स्पर्शता है। इसी प्रकार द्विप्रदेशी, तीनप्रदेशी आदि के विषय मे जान लेना चाहिए।*

पुद्गलास्तिकाय के पांच प्रदेशो ने धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय के जघन्य १२ - १२ प्रदेशों को स्पर्शा है, उत्कृष्ट २७ - २७ प्रदेशो को स्पर्शा है। आकाशास्तिकाय के २७ प्रदेशो को स्पर्शा है। बाकी जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और काल का कथन पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेशी की तरह कह देना चाहिए।

पुद्गलास्तिकाय के छह प्रदेशो ने धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय के जघन्य १४ - १४ प्रदेशों को स्पर्शा है और उत्कृष्ट ३२ - ३२ प्रदेशो को स्पर्शा है। आकाशास्तिकाय के ३२ प्रदेशो को स्पर्शा है। शेष जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और काल का कथन पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेशी की तरह कह देना चाहिए।

पुद्गलास्तिकाय के सात प्रदेशो ने धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय के जघन्य १६ - १६ प्रदेशो को स्पर्शा है, उत्कृष्ट ३७ - ३७ प्रदेशो को स्पर्शा है। आकाशास्तिकाय के ३७ प्रदेशो को स्पर्शा है । शेष जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और काल का कथन पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेशी की तरह कह देना चाहिए।

पुद्गलास्तिकाय के आठ प्रदेशो ने धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय के जघन्य १८ - १८ प्रदेशो को स्पर्शा है। उत्कृष्ट ४२ - ४२ प्रदेशो को स्पर्शा है। आकाशास्तिकाय के ४२ प्रदेशो को स्पर्शा है। शेष जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और काल का कथन पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेशी की तरह कह देना चाहिए।

पुद्गलास्तिकाय के ९ प्रदेशो ने धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय के जघन्य २० - २० प्रदेशो को स्पर्शा है, उत्कृष्ट

४७ - ४७ प्रदेशो को स्पर्शा है। आकाशास्तिकाय के ४७ प्रदेशो को स्पर्शा है। शेष जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय व काल का कथन पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेशी की तरह कह देना चाहिए।

पुद्गलास्तिकाय के दस प्रदेशो ने धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय के जघन्य २२ - २२ प्रदेशो को स्पर्शा है, उत्कृष्ट ५२ - ५२ प्रदेशो को स्पर्शा है । आकाशास्तिकाय के ५२ प्रदेशो को स्पर्शा है। शेष जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और काल का कथन पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेशी की तरह कह देना चाहिए।

अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के * सख्यात प्रदेशो ने धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शा है ? हे गौतम ! जघन्य पद मे उन्हीं सख्यात प्रदेशो को दुगुना करके दो और जोड देना और उत्कृष्ट पद मे उन्हीं सख्यात प्रदेशो को पाच गुणा करके दो और जोड देना । इतने प्रदेशो को स्पर्शा है। जिस प्रकार धर्मास्तिकाय का कहा है उसी तरह अधर्मास्तिकाय का भी कह देना

** दस से ऊपर की सख्या सख्यात मे गिनी जाती है। जैसे कि बीस प्रदेशो का एक स्कन्ध लोकान्त के एक प्रदेश मे रहा हुआ है। वह किसी एक नय की अपेक्षा से जघन्य पद मे ४२ प्रदेशो को (बीस अवगाहे हुए प्रदेशो को और ऊपर या नीचे के बीस प्रदेशो को तथा पास के दो प्रदेशो को = ४२) स्पर्शता है और उत्कृष्ट पद मे १०२ प्रदेशो को (२० अवगाहे हुए प्रदेश, २० नीचे के, २० ऊपर के , २० पूर्व के , २० पश्चिम के, १ दक्षिण का, १ उत्तर का, ये सब मिलकर १०२ हुए।) स्पर्शता है। (टीका)*

चाहिए। पुद्गलास्तिकाय के संख्यात प्रदेशो ने आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों को स्पर्शा है ? उन्हीं सख्यात को पांच गुणा करके दो और जोड देना चाहिए, उतने प्रदेशो को स्पर्शा है । पुद्गलास्तिकाय के संख्यात प्रदेशों ने जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शा है ? अनन्त प्रदेशो को स्पर्शा है। इसी तरह पुद्गलास्तिकाय के अनन्त प्रदेशों को स्पर्शा है। पुद्गलास्तिकाय के संख्यात प्रदेशो ने कितने अद्धासमयों को स्पर्शा है ? कदाचित् स्पर्शा है और कदाचित् नहीं स्पर्शा है । यदि स्पर्शा है तो नियमा अनन्त अद्धासमयो को स्पर्शा है।

अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के असंख्यात प्रदेशों ने धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शा है ? हे गौतम ! जघन्य पद मे उन्हीं असंख्यात को दुगुना करके उसमें दो और जोड देना, उतने प्रदेशो को स्पर्शा है। उत्कृष्ट पद मे उन्हीं असंख्यात को पाच गुणा करके दो और जोड देना, उतने प्रदेशो को स्पर्शा है। बाकी सारा कथन सख्यात की तरह कह देना चाहिए।

अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के अनन्त प्रदेशो ने धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शा है ? हे गौतम ! जैसे असंख्यात का कहा है, वैसे ही अनन्त का भी कह देना चाहिए * ।

** यहां पर इतनी विशेषता है कि जैसे जघन्य पद मे ऊपर और नीचे के अवगाढ प्रदेश औपचारिक (कल्पित) है, वैसे ही उत्कृष्ट पद में जानना चाहिए। क्योंकि अवगाह से निरुपचरित (वास्तविक) लोक मे अनन्त आकाशप्रदेश नही होते है, किन्तु असख्यात ही होते है। (टीका)*

+ आकाशास्तिकाय मे जघन्य नही कहना किन्तु सब जगह उत्कृष्ट ही कहना चाहिए।

पुद्गलास्तिकाय — के दो प्रदेशो से लेकर अनन्त प्रदेश तक जघन्य मे दुगुने से दो प्रदेश अधिक को स्पर्शा है और उत्कृष्ट मे पाच गुणा से दो प्रदेश अधिक को स्पर्शा है। जैसे दो प्रदेशी ने जघन्य ६ को स्पर्शा है (२ X २ = ४ + २ = ६)। उत्कृष्ट १२ को स्पर्शा है (२ X ५ = १० + २ = १२)

पुद्गलास्तिकाय के प्रदेश	धर्मास्तिकाय के प्रदेश		अधर्मास्तिकाय के प्रदेश		आकाशास्तिकाय के प्रदेश
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य उत्कृष्ट
१	४	७	४	७	७
२	६	१२	६	१२	१२
३	८	१७	८	१७	१७
४	१०	२२	१०	२२	२२
५	१२	२७	१२	२७	२७
६	१४	३२	१४	३२	३२
७	१६	३७	१६	३७	३७
८	१८	४२	१८	४२	४२
९	२०	४७	२०	४७	४७
१०	२२	५२	२२	५२	५२

+ आकाशास्तिकाय का जघन्य पद नहीं होता, उत्कृष्ट पद ही होता है, क्योकि आकाशास्तिकाय सब जगह विद्यमान है।

— पुद्गलास्तिकाय का सख्यात प्रदेशी असख्यात प्रदेशी या अनन्त प्रदेशी जो धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय के प्रदेश अवगाहने मे दुगने से दो अधिक कहे है, वह अलग-अलग आकाशप्रदेश अवगाहने की अपेक्षा से कहा गया है। लेकिन इस तरह से तो आकाशप्रदेश के ऊपर भी असख्यात, अनन्त प्रदेश तक बैठ सकते है। पास मे अलोक आ जाने से जघन्य कहा गया है।

प्रदेश	धर्मास्तिकाय		अधर्मास्तिकाय	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
धर्मास्तिकाय का १ प्रदेश	३	६	४	७
अधर्मास्तिकाय का १ प्रदेश	४	७	३	६
आकाशास्तिकाय का १ प्रदेश	१-२-३-४ भजना	७	१-२-३-४ भजना	७
जीवास्तिकाय का १ प्रदेश	४	७	४	७
पुद्‌गलास्तिकाय का १ प्रदेश	४	७	४	७
काल का समय	७		७	

लोकान्त में धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय आदि द्रव्यो के तीन दिशा में अलोक आ जाता है। इनमें जघन्य स्पर्शना का वर्णन इसी अपेक्षा से जानना चाहिए।

आकाशास्तिकाय जघन्य उत्कृष्ट	जीवास्तिकाय जघन्य उत्कृष्ट	पुद्गलास्तिकाय जघन्य उत्कृष्ट	काल ज उत्कृष्ट
७	अनन्त	अनन्त	सिय स्पर्शे सिय नहीं स्पर्शे, यदि स्पर्शे तो अनन्त
७	अनन्त	अनन्त	,, ,,
६	अनन्त (भजना)	अनन्त (भजना)	,, ,,
७	अनन्त	अनन्त	,, ,,
७	अनन्त	अनन्त	,, ,,
७	अनन्त	अनन्त	,, ,,

अहो भगवन् ! काल के एक समय ने धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शा है ? हे गौतम ! * सात प्रदेशो को स्पर्शा है। इसी तरह अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय का कह देना चाहिए। जीवास्तिकाय और पुद्‌गलास्तिकाय के अनन्त प्रदेशो को स्पर्शा है। काल के + अनन्तानन्त समयों को स्पर्शा है।

** यहा वर्तमान समय विशिष्ट समयक्षेत्र (मनुष्यलोक) मे रहे हुए परमाणु को 'अद्धासमय' समझना चाहिए। यदि ऐसा न समझा जाय तो धर्मास्तिकाय के सात प्रदेशो को ' अद्धासमय' नही स्पर्शता है।*

यहां जघन्य पद नही होता है। क्योकि 'अद्धासमय' मनुष्यक्षेत्र के मध्यवर्ती है। जघन्य पद तो लोकान्त के विषय मे सभव है किन्तु लोकान्त के विषय में काल नही होता है। अद्धासमय विशिष्ट परमाणु द्रव्य एक धर्मास्तिकाय के प्रदेश को अवगाहे हुए है और बाकी धर्मास्तिकाय के छह प्रदेश उसकी छह दिशाओं मे रहे हुए है।

+ अद्धासमय विशिष्ट परमाणुद्रव्य को अद्धासमय कहते है। वह एक अद्धासमय पुद्‌गलास्तिकाय के अनन्त प्रदेशो को और अनन्त अद्धासमयो को (अद्धासमय विशिष्ट अनन्त परमाणुओं को) स्पर्शता है।

२ अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शता है ? हे गौतम ! एक भी प्रदेश नहीं स्पर्शता * । अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शता है ? हे गौतम ! असख्याता प्रदेशो को स्पर्शता है। इसी तरह आकाशास्तिकाय का कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शता है ? हे गौतम ! अनन्त प्रदेशो को स्पर्शता है। इसी तरह पुद्गलास्तिकाय का कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय काल के कितने समयो को स्पर्शता है ? हे गौतम ! कदाचित् स्पर्शता है और कदाचित् नहीं स्पर्शता । यदि स्पर्शता है तो नियमा (अवश्य) अनन्त समयो को स्पर्शता है।

जिस तरह धर्मास्तिकाय का कहा, उसी तरह अधर्मास्तिकाय का भी कह देना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि धर्मास्तिकाय के असख्यात प्रदेशो को स्पर्शता है, अधर्मास्तिकाय के प्रदेशो को नहीं स्पर्शता है।

अहो भगवन् ! आकाशास्तिकाय धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शता है ? हे गौतम ! धर्मास्तिकाय के असख्यात प्रदेशो को स्पर्शता है। इसी तरह अधर्मास्तिकाय का कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! आकाशास्तिकाय आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शता है ? हे गौतम ! आकाशास्तिकाय के प्रदेश को नही स्पर्शता है। अहो भगवन् ! आकाशास्तिकाय

** सम्पूर्ण धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय के प्रदेशो को नहीं स्पर्शता, क्योकि दूसरी धर्मास्तिकाय नही है।*

जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशों को स्पर्शता है ? हे गौतम ! जीवास्तिकाय के अनन्त प्रदेशों को स्पर्शता है। इसी तरह पुद्गलास्तिकाय का कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! आकाशास्तिकाय काल के कितने समयों को स्पर्शता है ? हे गौतम ! कदाचित् स्पर्शता है और कदाचित् नहीं स्पर्शता है । यदि स्पर्शता है तो नियमा अनन्त समयों को स्पर्शता है।

अहो भगवन् ! जीवास्तिकाय धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शता है ? हे गौतम ! असंख्यात प्रदेशो को स्पर्शता है। इसी तरह अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय का कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! जीवास्तिकाय जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशों को स्पर्शता है ? हे गौतम ! जीवास्तिकाय के एक भी प्रदेश को नहीं स्पर्शता है। अहो भगवन् ! जीवास्तिकाय पुद्गलास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शता है ? हे गौतम ! अनन्त प्रदेशो को स्पर्शता है। अहो भगवन् ! जीवास्तिकाय काल के कितने समयों को स्पर्शता है ? हे गौतम ! कदाचित् स्पर्शता है और कदाचित् नही स्पर्शता है। यदि स्पर्शता है तो नियमा अनन्त समयो को स्पर्शता है।

अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों को स्पर्शता है ? हे गौतम ! असख्यात प्रदेशो को स्पर्शता है। इसी तरह अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय का भी कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशों को स्पर्शता है ? हे गौतम ! अनन्त प्रदेशों को स्पर्शता है । अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय पुद्गलास्तिकाय के

कितने प्रदेशो को स्पर्शता है ? हे गौतम ! एक भी प्रदेश को नहीं स्पर्शता है। अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय काल के कितने समयो को स्पर्शता है ? हे गौतम ! कदाचित् स्पर्शता है और कदाचित् नहीं स्पर्शता है। यदि स्पर्शता है तो नियमा अनन्त समयो को स्पर्शता है।

अहो भगवन् ! काल धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शता है ? हे गौतम ! धर्मास्तिकाय के असख्यात प्रदेशो को स्पर्शता है । इसी तरह अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय का भी कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! काल जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशो को स्पर्शता है ? हे गौतम ! अनन्त प्रदेशो को स्पर्शता है। इसी तरह पुद्गलास्तिकाय का भी कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! काल काल के कितने समयो को स्पर्शता है ? हे गौतम ! एक भी समय को नहीं स्पर्शता है। *

३ - अवगाहनाद्वार - अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! एक भी नहीं अवगाहा है। अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! एक प्रदेश को अवगाहे है। इसी तरह आकाशास्तिकाय का कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश

** नोट- धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय इन तीन मे असख्यात कहना और जीवास्तिकाय पुद्गलास्तिकाय और काल मे अनन्त कहना। नवर काल मे सिय (कदाचित्) शब्द लगाना और स्वठिकाने कोई भी नहीं स्पर्शता है।*

जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशों को अवगाहे है ? हे गौतम ! अनन्त प्रदेशों को अवगाहे है। इसी तरह पुद्‌गलास्तिकाय का भी कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश काल के कितने समयो को अवगाहे है? हे गौतम ! कदाचित् अवगाहे है और कदाचित् नहीं अवगाहे है । यदि अवगाहे है तो अनन्त समयो की अवगाहे है।

अहो भगवन् ! अधर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों को अवगाहे है ? हे गौतम ! एक प्रदेश को अवगाह्या है। अहो भगवन् ! अधर्मास्तिकाय का एक प्रदेश अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! एक भी नहीं अवगाहे है। अहो भगवन् ! अधर्मास्तिकाय का एक प्रदेश आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों को अवगाहे है ? हे गौतम ! एक प्रदेश को अवगाह्या है । अहो भगवन् ! अधर्मास्तिकाय का एक प्रदेश जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! अनन्त प्रदेशो को अवगाहे है । इसी तरह पुद्‌गलास्तिकाय का भी कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! अधर्मास्तिकाय का एक प्रदेश काल के कितने समयों को अवगाहे है ? हे गौतम ! कदाचित् अवगाहे है और कदाचित् नहीं अवगाहे है। यदि अवगाहे है तो अनन्त समयों को अवगाहे है ।

अहो भगवन् ! आकाशास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! कदाचित् अवगाह्या है, कदाचित् नहीं अवगाह्या है, अगर अवगाह्या है तो एक प्रदेश को अवगाह्या है । इसी तरह अधर्मास्तिकाय का

भी कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! आकाशास्तिकाय का एक प्रदेश आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! एक भी नहीं अवगाहे है । अहो भगवन्! आकाशास्तिकाय का एक प्रदेश जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! कदाचित् अवगाहे है, कदाचित् नहीं अवगाहे है, अगर अवगाहे है तो अनन्त प्रदेशो को अवगाहे है। इसी तरह पुद्गलास्तिकाय का भी कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! आकाशास्तिकाय का एक प्रदेश काल के कितने समयो को अवगाहे है ? हे गौतम ! कदाचित् अवगाहे है, कदाचित् नही अवगाहे है, यदि अवगाहे है तो अनन्त समयो को अवगाहे है।

अहो भगवन् ! जीवास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! एक प्रदेश अवगाह्या है। इसी तरह अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय का कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! जीवास्तिकाय का एक प्रदेश जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! अनन्त प्रदेशों को अवगाहे है । अहो भगवन् ! जीवास्तिकाय का एक प्रदेश पुद्गलास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! अनन्त प्रदेशो को अवगाहे है । अहो भगवन् ! जीवास्तिकाय का एक प्रदेश काल के कितने समयो को अवगाहे है ? हे गौतम ! कदाचित् अवगाहे है और कदाचित् नहीं अवगाहे है। यदि अवगाहे है तो अनन्त समयो को अवगाहे है ।

अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! एक प्रदेश को

अवगाह्या है। इसी तरह अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय का भी कह देना चाहिये। अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय का एक प्रदेश जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! अनन्त प्रदेशो को अवगाहे है। अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय का एक प्रदेश पुद्गलास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! अनन्त प्रदेशों को अवगाहे है । अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय का एक प्रदेश काल के कितने समयो को अवगाहे है ? हे गौतम ! कदाचित् अवगाहे है और कदाचित् नहीं अवगाहे है। यदि अवगाहे है तो अनन्त समयो को अवगाहे है ।

अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाहे हैं ? हे गौतम ! सिय (कदाचित्) एक , सिय दो प्रदेश अवगाहे हैं । इसी तरह अधर्मास्तिकाय और आशास्तिकाय का भी कह देना चाहिये।

अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेश , जीवास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाहे हैं ? हे गौतम ! अनन्त प्रदेश अवगाहे हैं।

अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेश पुद्गलास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाहे हैं ? हे गौतम ! अनन्त प्रदेश अवगाहे है ।

अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेश काल के कितने प्रदेश अवगाहे है ? हे गौतम ! कदाचित् अवगाहे है, कदाचित् नहीं अवगाहे है । यदि अवगाहे है तो अनन्त समय अवगाहे है।

अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के तीन प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाहे है ? हे गौतम ! सिय एक, सिय दो , सिय

तीन * प्रदेश अवगाहे हैं। इसी तरह अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय का भी कह देना चाहिए। जीवास्तिकाय , पुद्गलास्तिकाय और अद्धासमय का कथन पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेशी की तरह कह देना चाहिए। इस तरह धर्मास्तिकाय , अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय के विषय मे एक-एक प्रदेश की वृद्धि करनी चाहिये। पुद्गलास्तिकाय , जीवास्तिकाय और अद्धासमय के विषय मे जिस तरह पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेशी का कथन किया है, उसी तरह कह देना चाहिए। यावत् दस प्रदेशो तक इसी तरह कह देना चाहिये अर्थात् जहा पुद्गलास्तिकाय के दस प्रदेश अवगाहे है वहा धर्मास्तिकाय का सिय एक प्रदेश , सिय दो प्रदेश , सिय तीन प्रदेश यावत् सिय दस प्रदेश अवगाहे है। जहा पुद्गलास्तिकाय के सख्यात प्रदेश अवगाहे है वहा धर्मास्तिकाय का सिय एक प्रदेश, सिय दो प्रदेश यावत् सिय दस प्रदेश यावत् सख्यात प्रदेश अवगाहे है। जहा पुद्गलास्तिकाय के सख्यात प्रदेश अवगाहे है वहा धर्मास्तिकाय का सिय एक प्रदेश, यावत् सिय सख्यात, सिय असख्यात प्रदेश अवगाहे है। इसी तरह अनन्त प्रदेश अवगाहे का भी कह देना चाहिये।

** जब पुद्गलास्तिकाय के तीन प्रदेश आकाशास्तिकाय के एक प्रदेश को अवगाहता है तब धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश अवगाहता है। जब आकाशास्तिकाय के दो प्रदेशो को अवगाहता है तब वे वहा धर्मास्तिकाय के दो प्रदेशो को अवगाहते है। जब आकाशास्तिकाय के तीन प्रदेशो को अवगाहता है तब वे वहा धर्मास्तिकाय के तीन प्रदेशो को अवगाहते हैं।*

अहो भगवन् ! काल का एक समय धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! एक प्रदेश को अवगाह्या है। इसी तरह अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय का भी कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! काल का एक समय जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! अनन्त प्रदेशो को अवगाहे है ? इसी तरह पुद्गलास्तिकाय और काल का भी कह देना चाहिए। (अनन्त प्रदेशो को अवगाहे है)।

४ स्कन्ध से प्रदेश आसरी– अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! एक भी नही अवगाहे है। अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों को अवगाहे है ? हे गौतम ! अनन्त प्रदेशो को अवगाहे है। इसी तरह पुद्गलास्तिकाय और काल का कह देना चाहिए। (अनन्त प्रदेशो को अवगाहे है)।

अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! असख्यात प्रदेशो को अवगाहे है । अहो भगवन् ! अधर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है । हे गौतम ! एक भी नहीं अवगाहे है। अहो भगवन् ! अधर्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! एक भी नहीं अवगाहे है। अहो भगवन् ! अधर्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है । हे गौतम ! असख्यात प्रदेशो को अवगाहे है। अहो भगवन् ! अधर्मास्तिकाय जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! अनन्त प्रदेशो को अवगाहे है। इसी तरह पुद्गलास्तिकाय और काल का भी कह देना चाहिए।

अहो भगवन् ! आकाशास्तिकाय धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! असख्यात प्रदेशो को अवगाहे है । इसी तरह अधर्मास्तिकाय का भी कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! आकाशास्तिकाय आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! एक भी नहीं अवगाहे है। अहो भगवन् ! आकाशास्तिकाय जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! अनन्त प्रदेश को अवगाहे है। इसी तरह पुद्गलास्तिकाय और काल का कह देना चाहिए।

अहो भगवन् ! जीवास्तिकाय धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! असख्यात प्रदेशो को अवगाहे है । इसी तरह अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय का भी कह देना चाहिए। जीवास्तिकाय जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! एक भी नहीं अवगाहे है। अहो भगवन् ! जीवास्तिकाय पुद्गलास्तिकाय के कितने प्रदेश को अवगाहे है ? हे गौतम ! अनन्त प्रदेशो को अवगाहे है। अहो भगवन् ! जीवास्तिकाय काल के कितने समयो को अवगाहे है ? हे गौतम ! अनन्त समयो को अवगाहे है।

अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! असख्यात प्रदेशो को अवगाहे है । इसी तरह अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय का भी कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! पुद्गलास्तिकाय पुद्गलास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है ? हे गौतम ! एक भी नहीं अवगाहे है। अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय काल के कितने समयो को अवगाहे है ? हे गौतम ! अनन्त समयो को अवगाहे है।

अहो भगवन् ! काल धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है। हे गौतम ! असंख्यात प्रदेशो को अवगाहे है। इसी तरह अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय का कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! काल जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशो को अवगाहे है । हे गौतम ! अनन्त प्रदेशो को अवगाहे है। इसी तरह पुद्गलास्तिकाय का भी कह देना चाहिए। अहो भगवन् ! काल के कितने समयो को अवगाहे है ? हे गौतम ! एक भी नहीं अवगाहे है।

३. जीव-अवगाढादि द्वार का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक तेरहवां, उद्देशा चौथा)

१ जीवावगाढद्वार– अहो भगवन् ! जहा पृथ्वीकायिक एक जीव अवगाढ (अवगाह्य) रहा हुआ है, वहा दूसरे पृथ्वीकायिक जीव कितने रहे हुए हैं ? हे गौतम ! असंख्याता रहे हुए हैं। अहो भगवन् ! वहां अप्काय के कितने जीव रहे हुए है ? हे गौतम ! असख्याता रहे हुए है। इसी तरह तेउकाय के भी असंख्यात और वायुकाय के भी असख्यात जीव रहे हुए है । वनस्पतिकाय के अनन्त जीव रहे हुए है ।

जिस तरह से पृथ्वीकायिक का कहा, उसी तरह से अप्काय, तेउकाय, वायुकाय और वनस्पतिकाय का भी कह देना चाहिए। * ये पाच स्थावर के २५ आलापक हुए।

** पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय और वायुकाय इन चार स्थावरो का स्वस्थान और परस्थान में 'असंख्यात' कहना चाहिए और वनस्पति का स्वस्थान और परस्थान मे 'अनन्त' कहना चाहिए।*

२ अस्तिकायनिषीदनद्वार– अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय के विषय क्या कोई जीव बैठने, खडा रहने, सोने, चलने मे समर्थ है ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे (कोई जीव ऐसा करने मे समर्थ नहीं)। किन्तु दीपक के प्रकाश के दृष्टात + अनुसार अनन्त जीव अवगाहे हुए हैं।

३ बहुसमद्वार– अहो भगवन् ! लोक का समभाग (प्रदेशों की वृद्धि और हानि रहित बराबर भाग) कहा पर है ? लोक का सँबसे सक्षिप्त (सकडा) भाग कहा पर है ? हे गौतम ! इस रत्नप्रभापृथ्वी के ऊपर के नीचे का जो क्षुद्र (लघु) प्रतर है, वहा लोक का समभाग * है और वही पर लोक का सबसे सक्षिप्त

+ जैसे कोई कूटागारशाला हो, वह अन्दर और बाहर से लीपी हुई हो, वह चारो ओर से ढकी हुई हो और उसके द्वार भी बन्द हो। उस कूटागारशाला के ठीक बीच मे एक दो तीन यावत् एक हजार दीपक जलाये जाय। हे गौतम ! क्या उस समय उन दीपको का प्रकाश परस्पर मिल कर तथा स्पर्श कर एक दूसरे के साथ एक रूप हो जाता है ? हा, भगवन् ! एकरूप हो जाता है। हे गौतम ! उन दीपको के उस प्रकाश पर क्या कोई पुरुष खडा रह सकता है ? बैठ सकता है ? सो सकता है ? अहो भगवन् ! णो इणट्ठे समट्ठे (कोई भी पुरुष ऐसा नहीं कर सकता है)। परन्तु उस प्रकाश मे अनन्त जीव रहे है। इसी प्रकार धर्मास्तिकायादि मे भी अनन्त जीव रहे हुए है।

** इन दोनो खुड्डाग प्रतरो से शुरू होकर नीचे प्रतरो की वृद्धि होती गई है। यह खुड्डाग प्रतर तिच्छौंलोक के सभव होते हैं, क्योकि*

(सकडा) भाग है ।

४ विषमद्वार– अहो भगवन् ! लोक का विषम (वक्र) भाग कहा पर है ? हे गौतम ! पांचवे ब्रह्मदेवलोक के रिष्टप्रतर के पास मे लोक का वक्र भाग है ।

५ लोकसस्थानद्वार– अहो भगवन् ! लोक का संठाण (संस्थान-आकार) कैसा है ? हे गौतम ! लोक का सठाण उल्टे रखे हुए शरावला के ऊपर एक सीधे रखे हुए शरावला के ऊपर उल्टा रखा हुआ शरावला के आकार है । अधोलोक का संठाण तिपाई के आकार है । तिर्च्छालोक का संठाण झालर के आकार है। ऊर्ध्वलोक का सठाण मृदग के आकार है। अलोक का सठाण पोले गोले के आकार है ।

६ अल्पबहुत्वद्वार– अहो भगवन् ! अधोलोक, तिर्च्छालोक, ऊर्ध्वलोक मे कौन किससे विशेषाधिक है ? हे गौतम ! सबसे थोडा तिर्च्छालोक है, उससे ऊर्ध्वलोक असंख्यातगुणा है, उससे अधोलोक विसेसाहिया (विशेषाधिक) है ।

४. वेदना निर्जरा का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक छठा, उद्देशा पहला)

महावेयणे य वत्थे, कद्दमखजण कए य अहिगरणी ।
तणहत्थे य कवल्ले, करण महावेयणा जीवा ।।

तिर्च्छालोक १८०० योजन का है। ८ रुचक प्रदेशों से ९०० योजन ऊपर और ९०० योजन नीचे का है। ये दोनो प्रतर सब से छोटे है, तत्त्व केवलीगम्य।

१ अहो भगवन् ! क्या जो महावेदना वाला है वह महानिर्जरा वाला है और जो महानिर्जरा वाला है वह महावेदना वाला है ? हा गौतम ! जो महावेदना वाला है वह महानिर्जरा वाला है और जो महानिर्जरा वाला है वह महावेदना वाला है ।

२ अहो भगवन् ! क्या महावेदना वाले और अल्पवेदना वाले जीवो मे जो जीव प्रशस्त निर्जरा वाला है वह श्रेष्ठ है ? हा गौतम ! महावेदना वाले और अल्पवेदना वाले जीवो मे जो जीव प्रशस्त निर्जरा वाला है, वह श्रेष्ठ है ।

३ अहो भगवन् ! क्या छठी नरक के और सातवीं नरक के नैरयिक श्रमण निर्ग्रन्थो से महानिर्जरा वाले हैं ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे (यह बात नहीं है) । अहो भगवन् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! जैसे दो वस्त्र है, उनमे से एक तो कर्दम (कीचड) के रग से रगा हुआ है, महा चिकनाई के कारण पक्का रग लगा हुआ है और एक वस्त्र खजन (काजल) के रग मे रगा हुआ है, चिकनाई नहीं लगी हुई है तो हे गौतम ! इन दोनो वस्त्रो मे से कौन सा वस्त्र कठिनता से धोया जाता है, कठिनता से दाग छुडाये जाते है, कठिनता से उज्ज्वल (निर्मल) किया जाता है और कौन सा वस्त्र सुखपूर्वक धोया जाता है यावत् सुखपूर्वक निर्मल किया जाता है ? अहो भगवन् ! कर्दम रग से रगा हुआ वस्त्र कठिनता से धोया जाता है यावत् कठिनता से निर्मल होता है और खजन रग से रगा हुआ वस्त्र सुखपूर्वक धोया जाता है यावत् सुखपूर्वक निर्मल होता है । हे गौतम ! इसी तरह नैरयिको के कर्म गाढे, चिकने, श्लिष्ट, खिलीभूत (निकाचित) किये हुए है, जिससे

और ज्योतिषी देवो मे तायत्तीसग और लोकपाल नहीं होते है, शेष तीन बोल (इन्द्र, सामानिक, अग्रमहिषी) होते है । ये सब ऋद्धि परिवार से सहित होते हैं । आवश्यकता पडने पर वैक्रिय करके देवता देवी के रूप बना सकते है ।

२ अहो भगवन् । वैक्रिय करके कितना क्षेत्र भरने की इनमें शक्ति है ? हे गौतम । * (अग्निभूति) । — जुवती-जुवाण

---

* १ इन्द्रभूति २ अग्निभूति ३ वायुभूति ये तीनो सगे भाई और गौतम गोत्री होने से तीनो को गौतम करके बोलाया है ।

— शास्त्र मे यह पाठ है–

से जहाणामए जुवइ जुवाणे हत्थेण हत्थे गिण्हेज्जा, चक्करस्स वा णाभी अरगा उत्ता सिया ।

अर्थ– जैसे जवान पुरुष काम के वशीभूत होकर जवान स्त्री के हाथ को मजबूती से अन्तर रहित पकडता है, जैसे गाडी के पहिये की धुरी आराओ से युक्त होती है, इसी तरह देवता और देवी वैक्रिय रूप करके जम्बूद्वीप को ठसाठस भर सकते हैं।

कोई आचार्य उपरोक्त पाठ का अर्थ इस तरह से करते है–

जहां बहुत से लोग इकट्ठे होते है, ऐसे मेले मे जवान पुरुष जवान स्त्री का हाथ पकड कर चलता है। इस तरह से जवान पुरुष के साथ चलती हुई भी जवान स्त्री पुरुष से अलग दिखाई देती है। इसी तरह वैक्रिय किये हुए रूप मूल रूप से (वैक्रिय करने वाले से) सयुक्त होते हुए भी अलग अलग दिखाई देते है।

के दृष्टान्त से तथा आरा-नाभि के दृष्टान्त से दक्षिणदिशा के चमरेन्द्रजी सम्पूर्ण जम्बूद्वीप को भर देते है । तिरछा असख्याता द्वीप, समुद्र भरने की शक्ति है (विषय की अपेक्षा), किन्तु कभी भरे नहीं, भरते नहीं और भरेगे नहीं ।

उत्तरदिशा के बलीन्द्रजी जम्बूद्वीप झाझेरा (कुछ अधिक) जितना क्षेत्र भर देते है । तिरछा असख्याता द्वीप, समुद्र भरने की शक्ति है (विषय की अपेक्षा), किन्तु कभी भरे नहीं, भरते नहीं और भरेगे नहीं ।

जिस तरह असुरकुमार के इन्द्र का कहा, उसी तरह उनके सामानिक और तायत्तीसग का भी कह देना चाहिये । लोकपाल और अग्रमहिषी की तिरछा सख्याता द्वीप, समुद्र भरने की शक्ति है(विषय की अपेक्षा), किन्तु कभी भी भरे नहीं, भरते नहीं, भरेगे नहीं ।

नवनिकाय के देवता, वाणव्यन्तर और ज्योतिषी देवता एक जम्बूद्वीप भर देते है । तिरछा सख्यात द्वीप, समुद्र भरने की शक्ति है (विषय की अपेक्षा), किन्तु कभी भरे नहीं, भरते नहीं, भरेगे नहीं ।

पहले देवलोक के पाचो ही बोल (इन्द्र, सामानिक, तायत्तीसग, लोकपाल, अग्रमहिषी), दो जम्बूद्वीप जितना क्षेत्र भर

जैसे बहुत से आराओ से युक्त धुरी घन होती है और उसके बीच मे पोलार बिलकुल नही रहती। इसी तरह से वैक्रिय किये हुए रूप मूल रूप से प्रतिबद्ध रहते है। ऐसे वैक्रिय रूप करके जम्बूद्वीप को ठसाठस भर देते है।

देते हैं । दूसरे देवलोक के देव, दो जम्बूद्वीप झाझेरा, तीसरे देवलोक के देव ४ जम्बूद्वीप, चौथे देवलोक के देव ४ जम्बूद्वीप झाझेरा, पांचवे देवलोक के देव ८ जम्बूद्वीप, छठे देवलोक के देव ८ जम्बूद्वीप झाझेरा, सातवें देवलोक के देव १६ जम्बूद्वीप, आठवें देवलोक के देव १६ जम्बूद्वीप झाझेरा, नवमे दसवे देवलोक के देव ३२ जम्बूद्वीप, ग्यारहवे बारहवे देवलोक के देव ३२ जम्बूद्वीप झाझेरा क्षेत्र भर देते है और शक्ति(विषय की अपेक्षा), असख्याता द्वीप, समुद्र भरने की है किन्तु कभी भरे नहीं, भरते नहीं और भरेगे नही ।

पहले दूसरे देवलोक के इन्द्र, सामानिक और तायत्तीसग इन तीन की तिरछा असख्यात द्वीप, समुद्र भरने की शक्ति है और लोकपाल तथा अग्रमहिषी की तिरछा सख्यात द्वीप, समुद्र भरने की शक्ति है । तीसरे देवलोक से बारहवें देवलोक तक सब की (इन्द्र, सामानिक, तायत्तीसग, लोकपाल, अग्रमहिषी) तिरछा असंख्यात द्वीप, समुद्र भरने की शक्ति है (विषय की अपेक्षा), किन्तु कभी भरे नहीं, भरते नहीं और भरेगे नहीं ।

गाथा–

छट्ठट्ठम मासो उ अद्धमासो वासाइं अट्ठ छम्मासा ।
तीसय कुरुदत्ताणं तवभत्त परिण्णा परियाओ ।।
उच्चत्त विमाणाणं पाउब्भव पेच्छणा य संलावे ।
किंच्चि विवादुप्पत्ती, सणंकुमारे य भवियत्तं ।।

अर्थ– श्रमण भगवान् महावीर के शिष्य तिष्यक अनगार ८ वर्ष दीक्षा पाल कर बेले-बेले तपस्या करके एक मास का

सलेखना सथारा करके आलोयणा करके काल के अवसर पर काल करके प्रथम देवलोक के तिष्य विमान मे शक्रेन्द्रजी के सामानिक देव हुए । महाऋद्धिवत हुए । इनकी वैक्रियशक्ति शक्रेन्द्रजी के माफिक है ।

श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के शिष्य कुरुदत्त अनगार ने छह मास दीक्षा पाली । तेले-तेले तपस्या करते हुए सूर्य की आतापना ली । अर्द्धमास की सलेखना सथारा करके आलोयणा करके काल के अवसर पर काल करके दूसरे देवलोक मे कुरुदत्त विमान मे ईशानेन्द्रजी के सामानिक देव हुए । महाऋद्धिवत हुए । इनके वैक्रिय की शक्ति ईशानेन्द्रजी के समान है । शक्रेन्द्रजी के विमान से ईशानेन्द्रजी का विमान करतल (हथेली) के दृष्टान्त माफक कुछ ऊचा है और शक्रेन्द्रजी का विमान उससे कुछ नीचा है । कोई काम हो तो ईशानेन्द्रजी शक्रेन्द्रजी को बुलाते हैं तब शक्रेन्द्रजी ईशानेन्द्रजी के पास दूसरे देवलोक मे जाते है । ईशानेन्द्रजी के बुलाने पर अथवा बिना बुलाने पर भी शक्रेन्द्रजी उनके पास जाते है परन्तु ईशानेन्द्र जी बुलाने पर ही पहले देवलोक मे शक्रेन्द्रजी के पास चले जाते है । इसी तरह बातचीत सलाह-मशविरा कामकाज करते है। किसी समय शक्रेन्द्रजी और ईशानेन्द्रजी दोनो मे परस्पर कोई विवाद पैदा हो जाय, तब वे दोनो इन्द्र इस तरह विचार करते है कि सनत्कुमारेन्द्रजी (तीसरे देवलोक के इन्द्र) आवे तो अच्छा हो। तब सनत्कुमारेन्द्रजी का आसन चलायमान होता है । वे आकर दोनो इन्द्रो को समझा देते हैं, उनका विवाद मिटा देते है । सनत्कुमार जी साधु साध्वी

श्रावक श्राविका इन चार तीर्थ के बडे हितकारी, सुखकारी, पथ्यकारी, अनुकपक, (अनुकम्पा करने वाले) है । नि श्रेयस् (कल्याण) चाहने वाले, हित-सुख-पथ्य चाहने वाले है । * इसलिये वे भवी, समदृष्टि, सुलभबोधि, परित्तससारी, आराधक, चरम है । सनत्कुमारेन्द्रजी की स्थिति ७ सागरोपम की है । वहा से (देवलोक से) चवकर महाविदेह क्षेत्र मे जन्म लेकर सिद्ध बुद्ध मुक्त होवेगे यावत् सब दु खो का अन्त करेगे ।

६. ग्रामादि विकुर्वणा का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक तीसरा, उद्देशा छठा)

१ अहो भगवन् ! क्या राजगृह नगर मे रहा हुआ भावितात्मा अनगार मायीमिथ्यादृष्टि वीर्यलब्धि, वैक्रियलब्धि विभगज्ञानलब्धि से वाणारसी नगरी वैक्रिय कर राजगृही नगरी का रूप जानता देखता है ? हां, गौतम ! जानता, देखता है । अहो भगवन् ! क्या वह तथाभाव (जैसा है वैसा) से जानता व देखता है या अन्यथाभाव (विपरीत) से जानता देखता है ? हे गौतम ! वह तथाभाव से नहीं जानता, नहीं देखता किन्तु अन्यथाभाव से जानता, देखता है । अहो भगवन् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! उसको विभगज्ञान, विपरीतदर्शन होने से वह अन्यथाभाव से जानता, देखता है ।

** पूर्व भव मे ये चार तीर्थ (साधु साध्वी श्रावक श्राविका) के हित, सुख, कल्याण के इच्छुक थे, ऐसी धारणा है।*

२ अहो भगवन् ! क्या वाणारसी मे रहा हुआ मायीमिथ्यादृष्टि भावितात्मा अनगार राजगृहीनगरी वैक्रिय कर वाणारसी का रूप जानता, देखता है ? हा, गौतम ! जानता देखता है यावत् उसका विभगज्ञान, विपरीतदर्शन होने से वह अन्यथाभाव से जानता, देखता है (वह इस तरह जानता है कि मै राजगृही में रहा हुआ हू और वाणारसी वैक्रिय कर वाणारसी का रूप जानता, देखता हू) ।

३ अहो भगवन् ! क्या मायीमिथ्यादृष्टि भावितात्मा अनगार राजगृही और वाणारसी के बीच मे एक बडा नगर वैक्रिय कर उसका रूप जानता व देखता है ? हा, गौतम ! वह इस तरह जानता, देखता है कि यह राजगृही है, यह वाणारसी है, यह इन दोनो के बीच मे एक बडा नगर है परन्तु वह ऐसा नहीं जानता कि यह तो मैने स्वय वैक्रिय किया है ।

इस प्रकार इन तीनो ही आलापको मे विपरीतदर्शन से तथाभाव (सच्ची बात) से नहीं जानता, नहीं देखता है किन्तु अन्यथा भाव से जानता, देखता है ।

४-५-६ चौथा, पाचवा, छठा आलापक समदृष्टि का कहना चाहिए । इन तीनो ही आलापको मे समदृष्टि अवधिज्ञानी वैक्रियलब्धिवन्त भावितात्मा अनगार सम्यक्दर्शन से तथाभाव (जैसा है वैसा ही) जानता, देखता है, अन्यथाभाव (विपरीत) नहीं जानता, नहीं देखता है ।

७ अहो भगवन् ! क्या समदृष्टि अवधिज्ञानी वैक्रिय लब्धिवन्त भावितात्मा अनगार बाहर के पुद्गलो को लिये बिना

ग्राम, नगर यावत् सन्निवेश के रूप वैक्रिय कर सकता है ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे (ऐसा नहीं कर सकता) ।

८ अहो भगवन् ! क्या समदृष्टि अवधिज्ञानी वैक्रिय-लब्धिवन्त भावितात्मा अनगार बाहर के पुद्गलो को लेकर ग्राम, नगर यावत् सन्निवेश के रूप वैक्रिय कर सकता है ? हां, गौतम ! कर सकता है, सम्पूर्ण जम्बूद्वीप को ठसाठस भरने की शक्ति है (विषय की अपेक्षा), किन्तु ऐसा कभी किया नहीं, करते नहीं और करेगे नहीं ।

७. तुल्य का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक चौदहवां, उद्देशा सातवां)

१ अहो भगवन् ! तुल्य कितने प्रकार के कहे गये है ? हे गौतम ! तुल्य छ प्रकार के कहे गये है– १ द्रव्यतुल्य, २ क्षेत्रतुल्य, ३ कालतुल्य, ४ भवतुल्य, ५ भावतुल्य, ६ संठाण (संस्थान) तुल्य ।

२ अहो भगवन् ! द्रव्यतुल्य किसे कहते हैं ? हे गौतम ! एक परमाणुपुद्गल दूसरे परमाणुपुद्गल के साथ द्रव्यतुल्य है । परन्तु परमाणुपुद्गल, परमाणुपुद्गल के सिवाय दूसरे पदार्थों के साथ द्रव्यतुल्य नहीं है। जैसे एक परमाणुपुद्गल दो प्रदेशी स्कन्ध, तीन प्रदेशी स्कन्ध यावत् दस प्रदेशी स्कन्ध वगैरह के साथ मे द्रव्यतुल्य नहीं है । इसी तरह दो प्रदेशी स्कन्ध (अन्य) दो प्रदेशी स्कन्ध के सिवाय दूसरे पदार्थ के साथ द्रव्य से तुल्य नहीं है । इसी

तरह तीन प्रदेशी स्कन्ध तीन प्रदेशी स्कन्ध के सिवाय यावत् दस प्रदेशी स्कन्ध दस प्रदेशी स्कन्ध के सिवाय दूसरे पदार्थ के साथ द्रव्यतुल्य नहीं है । तुल्य सख्यात प्रदेशी स्कन्ध तुल्य सख्यात प्रदेशी स्कन्ध के साथ तुल्य है । तुल्य सख्यात प्रदेशी स्कन्ध तुल्य सख्यात प्रदेशी स्कन्ध के सिवाय दूसरे पदार्थ के साथ द्रव्यतुल्य नहीं है । इसी तरह तुल्य असख्यात प्रदेशी स्कन्ध, तुल्य अनन्त प्रदेशी स्कन्ध का कह देना चाहिए ।

३ अहो भगवन् ! क्षेत्रतुल्य किसे कहते हैं ! हे गौतम ! एक आकाशप्रदेश मे रहा हुआ पुद्गलद्रव्य, एक आकाशप्रदेश मे रहे हुए पुद्गलद्रव्य के साथ मे क्षेत्रतुल्य है । परन्तु एक आकाशप्रदेश मे रहा हुआ पुद्गलद्रव्य दो आकाशप्रदेशो मे रहे हुए पुद्गलद्रव्य के साथ तुल्य नहीं है । इसी तरह दस आकाशप्रदेश यावत् असख्यात आकाशप्रदेश तक कह देना चाहिए । दो आकाशप्रदेश ओघाया पुद्गल दो आकाशप्रदेश ओघाया पुद्गलद्रव्य क्षेत्र की अपेक्षा तुल्य है । इस तरह यावत् तुल्य असख्यात आकाशप्रदेश ओघाया स्कन्ध तक कह देना चाहिए ।

४ अहो भगवन् ! कालतुल्य किसे कहते हैं ? हे गौतम ! एक समय की स्थिति वाला पुद्गलद्रव्य, एक समय की स्थिति वाले पुद्गलद्रव्य के साथ कालतुल्य है । परन्तु एक समय से अधिक स्थिति वाले पुद्गल के साथ कालतुल्य नहीं है, जैसे एक समय की स्थिति का पुद्गल दो समय की स्थिति के पुद्गल के साथ काल-तुल्य नहीं है । द्रव्यतुल्य मे कहा उस तरह सारा अधिकार कह देना चाहिए । इस तरह असख्यात समय की स्थिति वाले द्रव्य तक

१२ बोल कह देने चाहिए ।

५ अहो भगवन् ! भवतुल्य किसको कहते हैं ? हे गौतम ! जो भव से तुल्य है, उसको भवतुल्य कहते है । जैसे नारकी जीव नारकी जीव के साथ भवतुल्य है । दूसरी गति के जीवो के साथ भवतुल्य नहीं है । इसी तरह तिर्यंच, मनुष्य और देव का कह देना चाहिए ।

६ अहो भगवन् ! भावतुल्य किसे कहते हैं ? हे गौतम ! भाव के दो भेद है– अजीवभाव और जीवभाव । अजीवभाव– जैसे एक गुण कालेवर्ण का पुद्गल एक गुण कालेवर्ण के पुद्गल के साथ भावतुल्य है, परन्तु एक गुण कालेवर्ण का पुद्गल दो गुण कालेवर्ण के पुद्गल के साथ भावतुल्य नहीं है । द्रव्यतुल्य मे कहा उस तरह सारा अधिकार कह देना चाहिए । इस तरह अनन्त गुण काले तक १३ बोल कह देने चाहिए । २० X १३ = २६० आलापक हुए ।

जीव भाव के ६ भेद हैं * १ औदायिक, २ औपशमिक, ३

** १ कर्मों के उदय से उत्पन्न होने वाला जीव का परिणाम औदयिकभाव कहलाता है।*

२ कर्मो के उपशम से उत्पन्न होने वाला जीव का भाव-परिणाम औपशमिकभाव कहलाता है।

३ कर्मों के क्षय से उत्पन्न होने वाला जीव का परिणाम क्षायिकभाव कहलाता है।

४ कर्मो के क्षय तथा उपशम से उत्पन्न होने वाला जीव का परिणाम क्षायोपशमिकभाव कहलाता है। क्षायोपशमिकभाव मे सिर्फ

क्षायिक, ४ क्षायोपशमिक, ५ पारिणामिक, ६ सान्निपातिक । औदयिकभाव औदयिकभाव के साथ भावतुल्य है किन्तु दूसरे भावो के साथ भावतुल्य नहीं है । इसी तरह औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, पारिणामिक, सान्निपातिक भावो का भी कह देना चाहिए ।

७ अहो भगवन् ! सठाण (सस्थान) तुल्य किसे कहते है ? हे गौतम ! सठाण के दो भेद है – अजीवसठाण और जीवसठाण । अजीवसठाण के ५ भेद है * परिमडल, वट्ट,

---

विपाकवेदन नही होता, प्रदेशवेदन होता है। औपशमिकभाव मे विपाकवेदन और प्रदेशवेदन नही होते। क्षायोपशमिकभाव और औपशमिकभाव मे यही अन्तर है।

५ जीव का अनादि काल से जो स्वाभाविक परिणाम है वह पारिणामिकभाव कहलाता है।

६ औदयिक आदि दो तीन भावो के सयोग से उत्पन्न होने वाला परिणाम सान्निपातिकभाव कहलाता है।

** आकारविशेष को सठाण (सस्थान) कहते हैं। इसके दो भेद है– जीवसस्थान और अजीवसस्थान। अजीवसस्थान के पाच भेद है– (१) परिमण्डल– चूडी की तरह बाहर से गोल और मध्य मे पोला होता है। इसके दो भेद है– घन और प्रतर। (२) वृत्त– कुम्हार के चाक (चक्र) के समान बाहर से गोल और अन्दर से पोलाण रहित होता है। इसके दो भेद है– घन और प्रतर। इसके प्रत्येक के दो-दो भेद होते है– समसख्या वाले प्रदेशयुक्त और विषमसख्या वाले प्रदेशयुक्त। (३) त्र्यस्र-त्रिकोण आकार वाला होता है।*

(वृत्त), तंस (त्र्यस्र) चउरंस (चतुरस्र), आयत । परिमंडलसंठाण परिमंडलसंठाण के साथ संठाणतुल्य है, किन्तु दूसरे संठाणों के साथ संठाणतुल्य नहीं है । इसी तरह वट्ट, तंस, चउरंस, आयत संठाण का कह देना चाहिए ।

* जीवसंठाण के छह भेद हैं– समचतुरस्र, न्यग्रोधपरिमडल, सादि, कुब्ज, वामन, हुण्डक । समचतुरस्रसंठाण समचतुरंस्रसठाण के साथ में संठाणतुल्य है किन्तु दूसरे सठाणो के साथ संठाणतुल्य नहीं है । इसी तरह न्यग्रोधपरिमडल, सादि, कुब्ज, वामन और हुण्डक सठाण का भी कह देना चाहिये ।

कुल आलापक ३१८ (द्रव्य के १३ + क्षेत्र के १२ + काल के १२ + भव के ४ + अजीवभाव के २६० + जीवभाव के ६ + अजीवसठाण के ५ + जीवसंठाण के ६ = ३१८) हुए ।

८. अधिकरण का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक सोलहवां, उद्देशा पहला)

---

(४) चतुरस्र (चतुष्कोण) चार कोनों वाला होता है। (५) आयात-डण्डे की तरह लम्बा होता है। इसके तीन भेद है– श्रेण्यायत, प्रतरायत, घनायत। इनके प्रत्येक के दो-दो भेद है– समसंख्या वाले प्रदेशयुक्त और विषमसख्या वाले प्रदेशयुक्त। यह पांच प्रकार का संस्थान विस्रसा और प्रयोगसा होता है।

**सस्थानकर्म के उदय से जीवों का जो आकारविशेष होता है, उसको जीवसंस्थान कहते है। इसके समचौरस आदि छह भेद होते है।*

१ अहो भगवन् ! क्या अधिकरणी (एरण) पर हथौडा मारने से वायुकाय उत्पन्न होती है ? * हा गौतम ! होती है ।

२ अहो भगवन् ! क्या वायुकाय किसी दूसरे पदार्थ का + स्पर्श होने से मरती है या बिना स्पर्श हुए ही मरती है ? हे गौतम ! स्पर्श होने से मरती है, स्पर्श हुए बिना नहीं मरती है ।

३ अहो भगवन् ! जब वायुकाय मरती है तो क्या शरीर सहित भवान्तर में जाती है ? हे गौतम ! तैजस्, कार्मण की अपेक्षा शरीरसहित जाती है और औदारिक, वैक्रिय की अपेक्षा शरीररहित जाती है ।

४ अहो भगवन् ! सिगडी मे अग्निकाय कितने काल तक सचित्त रहती है ? हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट

** एरण पर हथौडा मारते समय एरण व हथौडे के अभिघात से वायुकाय उत्पन्न होती है, वह अचित्त होती है, किन्तु उससे सचित्त वायुकाय की हिसा होती है।*

स्थानागसूत्र मे पाच प्रकार की अचित्त वायु कही गयी है– जोर जोर धम धम चलने से, लोहार की धमनी से, उच्छ्वासादि से, कपडे निचोडने से या किसी वस्तु को पीसने दबाने से तथा पखे से । इन पांचो प्रकार की अचित्त वायु से सचित्त वायु की हिसा होती है।

+ पृथ्वीकायादि पाच स्थावर जीवो के साथ जब विजातीय जीवो का तथा विजातीय स्पर्श वाले पदार्थों का सघर्ष होता है, तब उनके शरीर का घात (विनाश) होता है, इस आशय को लेकर यह प्रश्न किया गया है । श्री आचारागसूत्र के 'शस्त्रपरिज्ञा' नामक पहले अध्ययन मे इसका विस्तार के साथ वर्णन किया गया है।

तीन अहोरात्र- रात-दिन तक सचित्त रहती है ।

५ अहो भगवन् ! लोह तपाने की भट्टी में लोहा की संडासी से लोह को ऊचा-नीचा करने वाले पुरुष को कितनी क्रिया लगती हैं ? हे गौतम ! उस पुरुष को कायिकी आदि * पाचो क्रिया लगती हैं । इसी तरह जिन जीवों के शरीर से लोह बना, भट्टी बनी, संडासी बनी, धमण बनी, उन सब जीवो को पांच-पाच क्रिया लगती हैं ।

६ अहो भगवन् ! लोह की भट्टी मे से लोह को सडासी से पकड कर एरण पर रखते हुए पुरुष को कितनी क्रिया लगती हैं ? हे गौतम ! कायिकी आदि पाच क्रिया लगती हैं ।

इसी तरह जिन जीवो के शरीर से लोह, सडासी, घण, हथौडा, एरण, एरण का लक्कड, गर्म लोह को ठंडा करने की कुडी और लुहारशाला (लुहार का कारखाना) बना है, उन सब जीवों को पाच-पांच क्रिया लगती हैं ।

७ अहो भगवन् ! क्या जीव + अधिकरण है या

---

१ काइया (कायिकी), २ अहिगरणिया (अधिकरणिकी), ३ पाउसिया (प्राद्वेषिकी), ४ परितावणिया (परितापनिकी), ५ पाणाइवाइया (प्राणातिपातिकी)।

+ हिसा आदि पापकर्म के कारणभूत पदार्थों को अधिकरण कहते है। अधिकरण के दो भेद है- आन्तरिक और बाह्य। शरीर,इन्द्रिया आदि आतरिक अधिकरण है । हल, कुदाला, धन-धान्य आदि परिग्रहरूप वस्तुए बाह्य अधिकरण है। यह बाह्य और आन्तरिक अधिकरण जिसके हो वह अधिकरणी कहलाता है। इसलिए सशरीरी

अधिकरणी है ? हे गौतम ! + अविरति (ममत्व) परिणाम की अपेक्षा जीव अधिकरण भी है और अधिकरणी भी है । इस तरह २४ ही दण्डक मे कह देना चाहिए ।

८ अहो भगवन् ! क्या जीव — साधिकरणी है या निरधिकरणी है ? हे गौतम ! जीव साधिकरणी है किन्तु निरधिकरणी नहीं है । इस तरह २४ ही दण्डक मे कह देना चाहिए ।

जीव के शरीरादि होने से अधिकरणी है और शरीरादि अधिकरण से कथचित अभिन्न होने से अधिकरण है अर्थात् सशरीरी जीव अधिकरण और अधिकरणी दोनो है।

+ जो जीव विरति वाला होता है, उसके शरीरादि आन्तरिक और बाह्य परिग्रहरूप वस्तुए होने पर भी उन पर ममत्व न होने के कारण वह अधिकरणी या अधिकरण नही कहलाता है। जो जीव अविरति वाला है, उसके ममत्व होने से वह अधिकरणी और अधिकरण कहलाता है।

— शरीरादि अधिकरण सहित जीव साधिकरणी कहलाता है। ससारी जीव के शरीर इन्द्रियादि रूप आन्तरिक अधिकरण तो हमेशा साथ ही रहते है। शस्त्रादि बाह्य अधिकरण निश्चित रूप से हमेशा साथ नही होते किन्तु अविरति रूप ममत्वभाव हमेशा साथ रहता है। इसलिए शस्त्रादि बाह्य अधिकरण की अपेक्षा भी जीव साधिकरणी कहलाता है। सयती (साधु) पुरुषो मे अविरति का अभाव होने से शरीरादि होते हुए भी उनमे साधिकरणपना नहीं है।

९ अहो भगवन् ! क्या जीव * आत्माधिकरणी है या पराधिकरणी है या तदुभयाधिकरणी है ? हे गौतम ! अविरति की अपेक्षा जीव आत्माधिकरणी भी है, पराधिकरणी भी है और तदुभयाधिकरणी भी है । इसी तरह २४ दण्डक में कह देना चाहिए ।

१० अहो भगवन् ! क्या जीवो का अधिकरण ∸ आत्मप्रयोग से होता ? या परप्रयोग से होता है या तदुभयप्रयोग से होता है ? हे गौतम ! अविरति की अपेक्षा तीनों से होता है । इसी तरह चौबीस ही दण्डक मे कह देना चाहिए।

** पापारम्भ में स्वयं प्रवृत्ति करना आत्माधिकरणी कहलाता है, दूसरे से पापारंभ करवाना पराधिकरणी कहलाता है, स्वयं भी पापारभ करना और दूसरों से भी करवाना तदुभयाधिरणी कहलाता है।*

∸ हिंसा आदि पाप कार्यों में प्रवृत्ति करने वाले मन के व्यापार से उत्पन्न अधिकरण आत्मप्रयोगनिर्वतित कहलाता है। दूसरे को हिसादि पाप कार्यों में प्रवृत्ति कराने से उत्पन्न हुआ वचनादि अधिकरण परप्रयोगनिर्वतित कहलाता है। आत्मा द्वारा और दूसरे की प्रवृत्ति कराने द्वारा उत्पन्न हुआ अधिकरण तदुभयप्रयोगनिर्वतित कहलाता है।

स्थावरादि जीवों मे वचनादि का व्यापार नहीं होता । इसलिए उनमें जो परप्रयोग आदि का अधिकरण कहा गया है, वह अविरतिभाव की अपेक्षा से जानना चाहिए ।

पाच शरीर, पांच इन्द्रियां और तीन योग, इन तेरह बोलो में से जो बोल जिसमे मिले, उन-उन बोलो को निपजाते (बाधते) हुए चौबीस ही दण्डक के जीव अविरति की अपेक्षा अधिकरणी भी हैं और अधिकरण भी है । आहारकशरीर प्रमादी साधु के होता है, इसलिए आहारकशरीर प्रमाद की अपेक्षा अधिकरण भी है और अधिकरणी भी है ।

९. एयणा चलणा का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक सत्रहवा, उद्देशा तीसरा)

१ अहो भगवन् ! क्या शैलेशी अवस्था को प्राप्त कर अनगार कपता है, विशेष कपता है, यावत् उन-उन भावो को परिणमता है ? हे गौतम ! परप्रयोग के बिना वह नहीं कपता यावत् उन-उन भावों को नहीं परिणमता है, क्योकि शैलेशी अवस्था मे आत्मा अत्यन्त स्थिर हो जाती है । इसलिए परप्रयोग बिना नहीं कपती ।

२ अहो भगवन् ! एजना (कपना) कितने प्रकार की है ? हे गौतम ! एजना ५ प्रकार की है– * द्रव्य-एजना, क्षेत्र-एजना,

---

** योग द्वारा आत्मप्रदेशो का अथवा पुद्गलद्रव्यो का चलना (कापना) एजना कहलाती है। उसके द्रव्यादि ५ भेद हैं– मनुष्यादि जीव द्रव्यो का अथवा मनुष्यादि जीव सहित पुद्गलो का कपन द्रव्य-एजना कहलाती है। मनुष्यादि क्षेत्र मे रहे हुए जीव का कंपन क्षेत्र-एजना कहलाती है। मनुष्यादि काल मे रहे हुए जीव का कपन काल-एजना कहलाती है। औदयिक आदि भावो मे रहे हुए जीव का कपन भाव-एजना कहलाती है। मनुष्यादि भव मे रहे हुए जीव का कंपन भव-एजना कहलाती है।*

काल-एजना, भाव-एजना, भव-एजना ।

३ अहो भगवन् ! द्रव्य-एजना के कितने भेद है ? हे गौतम ! द्रव्य-एजना के ४ भेद है– + नैरयिकद्रव्य-एजना, तिर्यंचयोनिकद्रव्य-एजना, मनुष्यद्रव्य-एजना, देवद्रव्य-एजना । इसी तरह क्षेत्र-एजना, काल-एजना, भाव-एजना और भव-एजना के चार-चार भेद होते हैं । ये एजना के २० भेद हुए । इन बीस बोलो मे जीव रहा, रहता है और रहेगा, कापा, कापता है और कापेगा ।

४ अहो भगवन् ! 'चलना' कितने प्रकार की है ? हे गौतम ! चलना तीन प्रकार की है– शरीरचलना, इन्द्रियचलना, योगचलना ।

५ अहो भगवन् ! शरीरचलना के कितने भेद है ? हे गौतम ! शरीरचलना के ५ भेद है– औदारिकशरीरचलना यावत् कार्मणशरीरचलना ।

६ अहो भगवन् ! इन्द्रियचलना के कितने भेद है ? हे गौतम ! इन्द्रियचलना के ५ भेद है– श्रोत्रेन्द्रियचलना यावत् स्पर्शेन्द्रियचलना ।

७ अहो भगवन् ! योगचलना के कितने भेद है ? हे गौतम ! योगचलना के ३ भेद हैं– मनयोगचलना, वचनयोगचलना, काययोगचलना ।

+नैरयिक जीव नैरयिक शरीर मे रहकर उस शरीर द्वारा जो एजना (कंपन) करते है, उसे नैरयिकद्रव्य-एजना कहते है। इसी प्रकार तिर्यच, मनुष्य और देव सबंधी द्रव्य-एजना भी जान लेनी चाहिए।

ये चलना के १३ बोल हुए । जीव ने इन १३ बोलो मे के बोलो को परिणमाया, परिणमाता है और परिणमावेगा । इसीलिए चला, चलता है और चलेगा । ये ३३ बोल एजना, चलना के हुए ।

८ अहो भगवन् ! १ संवेग (मोक्ष की अभिलाषा), २ निर्वेद (ससार से विरक्तता), ३ गुरु महाराज की तथा स्वधर्मियो की सेवा, ४ पापो की आलोचला (गुरु के सामने कहना), ५ निन्दा(आत्मा द्वारा दोषो की निन्दा), ६ गर्हा (गुरु के सामने अपने दोषो को प्रगट करना), क्षमापना, ८ उपशातता, ९ श्रुतसहायता-श्रुत का अभ्यास, १० भाव-अप्रतिबद्धता (हास्यदि भावो के विषय मे आसक्ति न रखना), ११ पापस्थानो से निवृत्त होना, १२ विविक्तशयनासनता (स्त्री आदि से रहित मकान और आसन का उपयोग करना), १३-१७ श्रोत्रेन्द्रियसवर यावत् स्पर्शेन्द्रियसवर, १८ योगपच्चक्खाण, १९ शरीरपच्चक्खाण, (शरीर मे आसक्ति का त्याग), २० कषायपच्चक्खाण, २१ सभोगपच्चक्खाण (साधुसमुदाय एक मडल मे बैठ कर भोजन करे उसे सभोग कहते है । जिनकल्प को स्वीकार करने वाले मुनि इसका त्याग करते है, उसे संभोगपच्चक्खाण कहते है), २२ उपधिपच्चक्खाण, (अधिक वस्त्रादि का त्याग करना), २३ भत्तपच्चक्खाण (आहार का त्याग करना), २४ क्षमा, २५ विरागता, २६ भावसत्य, २७ योगसत्य, २८ करणसत्य (प्रतिलेखनादि क्रियाओ को यथार्थ करना), २९ मनसमाधारणया (मनसगोपन-मन को वश मे रखना), ३० वयसमाधारणया (वचनसगोपन-वचन

को वश में रखना), ३१ कायसमाधारणया (कायसगोपन-काया को वश में रखना), ३२ से ४४ क्रोध का त्याग, यावत् मिथ्यादर्शनशल्य का त्याग, ४५ ज्ञान-संपन्नता, ४६ दर्शनसपन्नता, ४७ चारित्रसंपन्नता, ४८ वेदना-अहियासणया (क्षुधादि वेदना को सहन करना), ४९ मारणंतिय-अहियासणया (मारणान्तिक कष्ट आने पर भी सहनशीलता रखना) । अहो भगवन् ! इन सब पदों का अन्तिम क्या फल कहा है ? हे गौतम ! इन सब पदो का अन्तिम फल मोक्ष कहा है ।

१०. पृथ्वी-अप्-वायुकाय के उपपात के १११० आलापकों का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक सत्रहवां, उद्देशा ६ से ११ तथा शतक बीस, उद्देशा छह)

१ अहो भगवन् ! क्या पृथ्वीकायिक जीव रत्नप्रभानरक मे मारणान्तिकसमुद्घात करके सौधर्म देवलोक मे पृथ्वीकायपणे उत्पन्न हो सकते हैं ? हा, गौतम ! हो सकते हैं । अहो भगवन् ! उत्पन्न हो सकते हैं तो क्या पहले उत्पन्न होते हैं और पीछे आहार लेते हैं या पहले आहार लेते है और पीछे उत्पन्न होते है ? हे गौतम ! पहले उत्पन्न होते हैं और पीछे आहार लेते है या पहले आहार लेते है और पीछे उत्पन्न होते हैं *। अहो भगवन् !

* *जब जीव मरणसमुद्घात करके पूर्वशरीर को सर्वथा छोड कर दडी (गेद) की तरह तथा डेडका (मेढक) की तरह उछलकर एक साथ सब आत्मप्रदेशों के साथ उत्पत्तिस्थान में जाता है, तब तो*

इसका क्या कारण ? हे गौतम ! पृथ्वीकायिक जीवो मे तीन समुद्घात कहे गये है– वेदनासमुद्घात, कषायसमुद्घात और मारणान्तिकसमुद्घात । जब जीव मारणान्तिकसमुद्घात करता है तो + देशसमुद्घात भी करता है और सर्वसमुद्घात भी करता है । जब देशसमुद्घात करता है, तब पहले आहार लेता है और पीछे उत्पन्न होता है । जब सर्वसमुद्घात करता है, तब पहले उत्पन्न होता है और पीछे आहार लेता है ।

जिस तरह पहली नरक से निकलने का कहा, उसी तरह सातो नरक का कह देना । सातो नरको से निकलकर पृथ्वीकायिक जीव बारह देवलोक, नवग्रैवेयक, अनुत्तरविमान और ईषत्प्राग्भारापृथ्वी (सिद्धशिला), इन १५ स्थानो मे पृथ्वीकायपणे

पहले उत्पन्न होता है और पीछे पुद्गलग्रहण रूप आहार लेता है। जब मरणसमुद्घात करके इलिकागति से उत्पत्तिस्थान मे जाता है, तब पहले आहार लेता है और पीछे उत्पन्न होता है।

+ मारणान्तिकसमुद्घात करते ही जब जीव की मृत्यु हो जाती है तब वह इलिकागति से उत्पत्तिस्थान मे जाता है, उस समय जीव के कुछ अश पूर्व शरीर मे रहते है और कुछ अश उत्पत्तिस्थान मे जाते है, इसको देशसमुद्घात' कहते है।

जब जीव मारणान्तिकसमुद्घात से निवृत्त होकर पीछे मृत्यु को प्राप्त होता है, तब सब आत्मप्रदेशों को खीच कर डेडका (मेढक) की गति की तरह एव दडी (गेद) की तरह उछल कर साथ उत्पत्तिस्थान मे जाता है, उसे 'सर्वसमुद्घात' कहते है।

उत्पन्न होते हैं (१५ X ७ = १०५ आलापक) और इन १५ स्थानों से निकल कर पृथ्वीकायिकजीव सात नरकों मे पृथ्वीकायपणे उत्पन्न होते है (१५ X ७ = १०५ आलापक) । इस तरह दोनो मिलकर २१० आलापक हुए ।

जिस तरह नरक का कहा उसी तरह ७ नरको के छ आन्तरों मे से निकल कर १५ स्थानों में उपजने का कह देना। इसके ९० (१५ X ६ = ९०) आलापक हुए ।

जिस तरह १५ स्थानो का कहा, उसी तरह १५ स्थानो के १० आन्तरो से * निकलकर ७ नरक में उत्पन्न होने का कह देना । इसके ७० आलापक (१० X ७ = ७०) हुए । इस प्रकार पृथ्वीकाय सम्बन्धी ३७० (२१० + ९० + ७० = ३७०) आलापक हुए । जिस तरह पृथ्वीकाय के ३७० आलापक कहे उसी तरह

** पहले दूसरे और तीसरे चौथे देवलोक के बीच का १ आन्तरा*
चौथे और पाचवे देवलोक के बीच का १ आन्तरा
पाचवे और छठे देवलोक के बीच का १ आन्तरा
छठे और सातवे देवलोक के बीच का १ आन्तरा
सातवे और आठवे देवलोक के बीच का १ आन्तरा
आठवें और नवमे दसवे देवलोक के बीच का १ आन्तरा
नवमें दसवे और ग्यारहवे बारहवे देवलोक के बीच का १ आन्तरा
ग्यारहवें बारहवे देवलोक और ग्रैवेयक के बीच का १ आन्तरा
ग्रैवेयक और अनुत्तर विमान के बीच का १ आन्तरा
अनुत्तर विमान और ईषत्प्राग्भापृथ्वी के बीच का १ आन्तरा
कुल १० आन्तरा

अप्काय के ३७० और वायुकाय के ३७० आलापक कह देना चाहिये । ये कुल १११० (३७० + ३७० + ३७० = १११०) आलापक हुए ।

११. गर्भ का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र शतक पहला, उद्देशा सातवा)

१ अहो भगवन् ! महान ऋद्धि, कान्ति, ज्योति, बल, सुख और महानुभाव वाल देव अपना च्यवनकाल (मृत्युसमय) नजदीक जान कर क्या लज्जित होता है ? अरति करता है और थोडे समय तक आहार भी नहीं लेता, फिर पीछे क्षुधा (भूख) सहन नहीं होने से आहार करता है ? शेष आयु पूरी होने पर मनुष्यगति या तिर्यंचगति मे उत्पन्न होता है ? हा गौतम ! देवता अपना च्यवनकाल नजदीक जानकर पूर्वोक्त प्रकार से चिन्ता करता है कि अब मुझे इन देवता सबधी काम-भोगो को छोड कर मनुष्यादि की अशुचि पदार्थ वाली योनि मे उत्पन्न होना पडेगा और वहा वीर्य रुधिर का आहार लेना पडेगा । ऐसा सोच कर वह लज्जित होता है, घृणा करता है, अरति करता है, फिर आयु क्षय होने पर मनुष्यगति या तिर्यंचगति मे उत्पन्न होता है ।

२ अहो भगवन् ! गर्भ मे उत्पन्न होता हुआ जीव क्या इन्द्रियसहित उत्पन्न होता है या इन्द्रियरहित उत्पन्न होता है ? हे गौतम ! द्रव्येन्द्रियो (कान, आख, नाक, जीभ और स्पर्श) की अपेक्षा इन्द्रियरहित उत्पन्न होता है, क्योकि द्रव्येन्द्रिया शरीर से सबध रखती है और भावेन्द्रियो की अपेक्षा इन्द्रियसहित उत्पन्न

होता है ।

३ अहो भगवन् ! गर्भ मे उत्पन्न होता हुआ जीव क्या सशरीरी (शरीरसहित) उत्पन्न होता है या अशरीरी (शरीररहित) उत्पन्न होता है ? हे गौतम ! औदारिक, वैक्रिय, आहारक इन तीन शरीरो की अपेक्षा शरीररहित उत्पन्न होता है, क्योकि ये तीनो शरीर जीव के उत्पन्न होने के बाद उत्पन्न होते है । तैजसशरीर और कार्मणशरीर की अपेक्षा शरीरसहित उत्पन्न होता है, क्योकि ये दोनों शरीर परभव में जीव के साथ रहते है, इनका जीव के साथ अनादि संबध है।

४ अहो भगवन् ! गर्भ में उत्पन्न होता हुआ जीव सर्वप्रथम क्या आहार लेता है ? हे गौतम ! माता के रुधिर और पिता के वीर्य का सर्वप्रथम आहार लेता है । फिर माता जैसा आहार करती है, उसका एकदेश (भाग) आहार गर्भ मे रहा हुआ जीव भी करता है, क्योकि माता की नाडी का गर्भस्थ जीव की नाडी से सबध है ।

५ अहो भगवन् ! क्या गर्भ मे रहे हुए जीव के मल, मूत्र, श्लेष्म (बलगम), नाक का मैल, वमन और पित्त होते है ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे (गर्भ मे रहे हुए जीव के मल, मूत्र, श्लेष्म, नाक का मैल, वमन और पित्त नहीं होते है) । गर्भस्थ जीव जो आहार करता है वह श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रियपणे तथा हाड, मज्जा (हाड की मींजी), केश, नखपणे परिणमाता है । क्योंकि गर्भस्थ जीव कवलाहार नहीं करता है, इसलिए उसके मल मूत्रादि नहीं होते हैं । वह सर्व

आहार करता है, सर्वपरिणमाता है, सर्व उच्छ्वास-नि श्वास लेता है यावत् बार बार उच्छ्वास-नि श्वास लेता है ।

६ अहो भगवन् ! जीव के माता के कितने अंग हैं और पिता के कितने अग है ? हे गौतम ! १ मास, २ रुधिर, (लोही) और ३ मस्तक, ये तीन अग माता के है और १ हाड, २ मज्जा (हाड की मींजी) और ३ केश, दाढी, रोम, नख, ये तीन अग पिता के है ।

७ अहो भगवन् ! माता-पिता का अश (प्रथम समय का लिया हुआ आहार) सतान के शरीर के कितने काल तक रहता है ? हे गौतम ! जब तक जीव का भवधारणीय शरीर रहता है, तब तक माता-पिता का अश रहता है, परन्तु समय समय पर वह क्षीण होता जाता है यावत् आयुष्य समाप्त होने तक माता-पिता का कुछ न कुछ अश रहता ही है । इसलिए इस शरीर पर माता-पिता का बहुत बडा उपकार है, इसी से यह जीवित है, इसलिए माता-पिता के उपकार को कभी नहीं भूलना चाहिए ।

८ अहो भगवन् ! गर्भ मे मरा हुआ जीव क्या नरक मे उत्पन्न हो सकता है ? हा गौतम ! कोई जीव नरक मे उत्पन्न होता है और कोई नहीं होता ।

९ अहो भगवन् ! गर्भ मे मरा हुआ जीव किस कारण से नरक मे जाता है ? हे गौतम ! गर्भ मे मरा हुआ सज्ञी (सन्नी) पचेन्द्रिय, पूर्ण पर्याप्ति वाला वीर्यलब्धि वैक्रियलब्धि वाला जीव किसी समय अपने पिता पर चढाई कर आये हुए शत्रु को सुनकर वैक्रियलब्धि से अपने आत्मप्रदेशो को गर्भ से बाहर

निकालता है और वैक्रियसमुद्घात करके चतुरगिणी सेना तैयार करके शत्रु से सग्राम करता है । संग्राम करता हुआ वह जीव आयुष्य पूर्ण करे तो मर कर नरक से उत्पन्न होता है, क्योंकि उस समय वह जीव राज्य, धन, कामभोगादि का अभिलाषी है । अत मरकर नरक * में जाता है ।

१० अहो भगवन् ! क्या गर्भ मे रहा हुआ जीव देवता में उत्पन्न हो सकता है ? हा, गौतम ! कोई जीव देवता मे उत्पन्न होता है और कोई नहीं होता ।

११ अहो भगवन् ! गर्भ में रहा हुआ जीव मरकर किस कारण से देवता मे उत्पन्न हो सकता है ? हे गौतम ! गर्भ मे रहा हुआ संज्ञी (सन्नी) पचेन्द्रिय पूर्णपर्याप्ति वाला, जीव तथारूप श्रमण माहन के पास एक भी आर्यवचन (धर्मवचन) सुन कर परम संवेग की श्रद्धा और धर्म पर तीव्र प्रेम होने से धर्म, पुण्य, स्वर्ग, मोक्ष का अभिलाषी शुद्ध चित्त, मन, लेश्या, अध्यवसाय मे काल करे तो वह गर्भस्थ जीव मरकर स्वर्ग में उत्पन्न होता है ।

१२ अहो भगवन् ! गर्भ मे जीव किस तरह से रहता है ? क्या समचित्त रहता है या पसवाडे से रहता है या अधोमुख रहता है ? हे गौतम ! गर्भ मे जीव समचित्त भी रहता है, पसवाडे से भी रहता है और अधोमुख भी रहता है। जब माता सोती है तो गर्भ का जीव भी सोता है, जब माता जागती है तो गर्भ का जीव

** भगवतीसूत्र के चौबीसवे शतक मे कहा है कि तिर्यच जघन्य अन्तर्मुहूर्त वाला और मनुष्य जघन्य पृथक्त्वमास (२ महीने से लेकर ९ महीने तक) वाला नरक में जा सकता है।*

भी जागता है । माता सुखी रहे तो गर्भ का जीव भी सुखी रहता है और माता दु खी रहे तो गर्भ का जीव भी दु खी रहता है । प्रसव के समय मस्तक से या पैरो से गर्भ बाहर आता है । जो जीव पापी होता है वह प्रसव के समय योनि द्वार पर टेढा हो कर आता है, इससे मृत्यु को प्राप्त हो जाता है । कदाचित्, शुभ कर्म के उदय से जीवित रहे तो दुर्वर्ण, दुर्गन्ध, दु रस, दु स्पर्श वाला और अनिष्ट कान्ति, अमनोज्ञ, हीनस्वर, दीनस्वर यावत् अनादेय वचन वाला और महान दु ख मे जीवन व्यतीत करने वाला होता है। जिस जीव ने पूर्वभव मे अशुभ कर्म न बाधे हो किन्तु शुभ कर्म बाधे हो तो वह इष्ट प्रिय वल्लभ सुस्वर वाला यावत् आदेय वचन वाला और परम सुख मे जीवन व्यतीत करने वाला होता है । इसलिए शास्त्रकार फरमाते है कि जीव को सुकृत करना चाहिए जिससे क्रमश तीर्थंकर भगवान् की आज्ञा का आराधन करके मोक्ष के अक्षय सुखो को प्राप्त करे । फिर जन्म जरा मरण के दु खो से व्याप्त इस ससार मे आना ही न पडे, जन्म लेना ही न पडे और गर्भ के दु खो को देखना ही न पडे ।

धर्म करो रे जीवडा, धर्म कियां सुख होय ।
धर्म करतां जीवडा, दुखिया न दीठा कोय । ।

श्री भगवतीजी सूत्र के दूसरे शतक के पांचवें उद्देशा में

१३ अहो भगवन् ! गर्भ की स्थिति कितनी है ? हे गौतम ! उदक (पानी) गर्भ की स्थिति जघन्य एक समय, उत्कृष्ट

६ मास की । तिर्यंचणी के गर्भ की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की उत्कृष्ट ८ वर्ष की । मनुष्यणी के गर्भ की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट १२ वर्ष की । मनुष्यणी के गर्भ की कायस्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट २४ + वर्ष की है ।

१४ अहो भगवन् ! वीर्य कितने काल तक सचित्त रहता है ? हे गौतम ! तिर्यंचणी की योनि मे प्रविष्ट हुआ तिर्यंच का वीर्य और मनुष्यणी की योनि मे प्रविष्ट हुआ पुरुष का वीर्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट १२ मुहूर्त तक सचित्त रहता है, फिर विनष्ट हो जाता है ।

१५ अहो भगवन् ! एक भव में एक जीव के कितने पिता हो सकते हैं ? हे गौतम ! जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट प्रत्येक (पृथक्त्व) सौ पिता हो सकते है ।

१६ अहो भगवन् ! एक भव सबधित.एक माता की कुक्षि में कितने जीव उत्पन्न हो सकते है ? हे गौतम ! जघन्य १-२-३, उत्कृष्ट प्रत्येक (पृथक्त्व) लाख जीव उत्पन्न हो सकते है ।

१७ अहो भगवन् ! मैथुन का कैसा पाप है ? हे गौतम ! जैसे किसी भूंगली नाल मे रुई भरकर गर्म लोह की सलाई डाली जाये तो वह रुई जल कर भस्म हो जाती है, इस प्रकार का पाप

+ कोई पापी जीव माता के गर्भ मे १२ वर्ष रह कर मर जावे और फिर उसी गर्भ में अथवा अन्य स्त्री के गर्भ में उत्पन्न होकर फिर १२ वर्ष रह सकता है, इस तरह २४ वर्ष तक रह सकता है।

मैथुनसेवन करने वाले को लगता है ।

तंदुल वैयालिय पइण्णा से–

१८ अहो भगवन् ! पुत्र, पुत्री कैसे उत्पन्न होते है ? हे गौतम ! माता की दक्षिण (दाहिनी) कुक्षि मे पुत्र उत्पन्न होता है और बाई कुक्षि मे पुत्री उत्पन्न होती है, बीच मे नपुसक उत्पन्न होता है । ओज(रुधिर) अल्प और वीर्य ज्यादा हो तो पुत्र उत्पन्न होता है । ओज (रूधिर) ज्यादा और वीर्य थोडा हो तो पुत्री उत्पन्न होती है । ओज (रुधिर) और वीर्य बराबर हो तो नपुसक होता है । यदि स्त्री स्त्री को सेवन करे तो बिम्ब होता है ।

१२. वीर्य का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक पहला, उद्देशा आठवा)

१ अहो भगवन् ! जीव के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! जीव के तीन भेद है– एकान्त बालजीव, पण्डितजीव, बाल-पण्डित-जीव ।

२ अहो भगवन् ! एकान्त बालजीव, पण्डितजीव, बाल-पण्डितजीव किस गति का आयुष्य बाध कर किस गति मे जाते है ? हे गौतम ! एकान्त बालजीव (मिथ्यात्वी) चारो गति (नारकी, तिर्यंच, मनुष्य, देवता) का आयुष्य बाधता है और जिस गति का आयुष्य बाधता है, उस गति मे उत्पन्न होता है ।

३ एकान्त पण्डित मे आयुष्यबध की भजना है अर्थात् कदाचित् आयुष्यबध करता है और कदाचित् नहीं करता है, क्योकि

एकान्त पण्डितजीव की दो गति हैं– कोई जीव तो अन्तक्रिया करके उसी भव में मोक्ष चला जाता है, वह आयुष्यबंध नहीं करता है । जो अंतक्रिया नहीं करता वह वैमानिक देवगति का आयुष्यबध करके वैमानिक देवो में उत्पन्न होता है ।

४ बाल-पण्डित जीव सिर्फ वैमानिक देवगति का आयुष्य बांध कर वैमानिक देवों मे उत्पन्न होता है । नरक, तिर्यंच, मनुष्य इन तीन गतियो का आयुष्य नहीं बांधता है, क्योंकि यथारूप (साधु के आचार को शुद्ध पालने वाले) श्रमण माहन के पास एक भी आर्यवचन (धर्मवचन) सुन कर देशत (आशिक रूप से) त्याग, पच्चक्खाण करता है और देशत पाप से निवृत्त होता है । इसलिए उपरोक्त तीन गतियो का आयुष्य नहीं बाधता है ।

५ समुच्चय जीव में और मनुष्य में बाल, पण्डित और बाल-पण्डित, ये तीनों बोल पाये जाते है । तिर्यंचपंचेन्द्रिय में बाल और बाल-पण्डित ये दो बोल पाये जाते है । शेष २२ दण्डको में बाल, यह सिर्फ एक बोल पाया जाता है ।

६ अल्पाबोध (अल्पबहुत्व)– समुच्चय जीव मे सबसे थोड़े पण्डित, उनसे बाल-पण्डित असख्यातगुणा, उनसे बाल अनन्त गुणा। मनुष्य मे सबसे थोडे पण्डित, उनसे बाल-पण्डित संख्यातगुणा, उनसे बाल असंख्यातगुणा । तिर्यंचपंचेन्द्रिय में सबसे थोडे बाल-पण्डित, उनसे बाल असंख्यातगुणा ।

७ अहो भगवन् ! दो पुरुष समान (सरीखी) चमडी वाले, समान उमर वाले, समान द्रव्य वाले, समान उपकरण (शस्त्र) वाले, वे पुरुष परस्पर एक दूसरे के साथ संग्राम (लडाई)

करे तो उनमे से एक जीतता है और एक हारता है, इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! जो पुरुष सवीर्य है वह जीतता है और जो पुरुष अवीर्य है वह हारता है । जिस पुरुष ने वीर्य को बाधाकारी (बाधा पहुचाने वाले) कर्म नहीं बाधे है, नहीं स्पर्शे है, नहीं किये है यावत् वे कर्म सन्मुख नहीं आये है, उदयभाव मे नहीं आये है, किन्तु उपशमभाव मे है, वह पुरुष जीतता है । जो पुरुष अवीर्य है, वीर्य रहित कर्म बाधे है, स्पर्शे है, किये है, यावत् वे कर्म सन्मुख आये हैं, उदयभाव मे आये है, उपशात नहीं है, वह पुरुष हारता है ।

८ अहो भगवन् ! जीव सवीर्य है या अवीर्य है ? हे गौतम ! जीव सवीर्य भी है और अवीर्य भी है । अहो भगवन् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! जीव के दो भेद है– सिद्ध और ससारी । सिद्ध भगवान् तो अवीर्य है । ससारी के दो भेद है– शैलेशी-अवस्था को प्राप्त, और अशैलेशी-अवस्था को प्राप्त । शैलेशी-अवस्था को प्राप्त तो चौदहवे गुणस्थान वाले है, वे लब्धि-वीर्य की अपेक्षा तो सवीर्य हैं और करणवीर्य की अपेक्षा अवीर्य है। अशैलेशी अवस्था को प्राप्त तेरह गुणस्थान वाले जीव हैं, वे लब्धिवीर्य की अपेक्षा तो सवीर्य है और करणवीर्य की अपेक्षा जो जीव उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार-पराक्रम, इन पाचो शक्ति सहित है, वे सवीर्य है और जो पाच शक्ति रहित है वे अवीर्य है । मनुष्य के दण्डक को छोड कर बाकी २३ दण्डक के जीव लब्धि-वीर्य की अपेक्षा सवीर्य है और करणवीर्य की अपेक्षा उत्थान, कर्म आदि पाच शक्ति वाले तो सवीर्य है और पाच शक्ति रहित अवीर्य

हैं । मनुष्य में समुच्चय जीव की तरह कह देना, किन्तु सिद्ध भगवान् का कथन नहीं करना ।

१३. उच्छ्वास-निःश्वास का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक दूसरा, उद्देशा पहला)

१ अहो भगवन् ! द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय जीव आभ्यन्तर श्वासोच्छ्वास और बाहरी श्वासोच्छ्वास लेते है, इसको मै जानता हूं, देखता हू, परन्तु क्या पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय आभ्यन्तर श्वासोच्छ्वास और बाहरी श्वासोच्छ्वास लेते है । हां, गौतम ! लेते है । अहो भगवन् ! ये किसका श्वासोच्छ्वास लेते है । हे गौतम ! द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव यावत् २८८ बोल का निर्व्याघातदशा में नियमा (निश्चित रूप से) छह दिशा का, व्याघातदशा में कदाचित् तीन दिशा का, कदाचित् चार दिशा का, कदाचित् पाच दिशा का लेते है । सूत्र श्री पन्नवणाजी * के अट्ठाईसवे आहारपद माफक कह देना चाहिए ।

२ अहो भगवन् ! क्या वायुकाय, वायुकाय का श्वासोच्छ्वास लेता है ? हां गौतम ! लेता है । अहो भगवन् ! क्या वायुकाय अनेक लाखो बार मरकर वायुकाय मे उत्पन्न होता है ?

** श्री पन्नवणासूत्र के थोकडो के तीसरे भाग की प्रथमावृत्ति में पृष्ठ ६४ से ७१ तक मे और द्वितीयावृत्ति मे पृष्ठ ९५ से १०५ तक में देखिये ।*

हां, गौतम ! उत्पन्न होता है । अहो भगवन् ! क्या वायुकाय स्पर्श से मरता है या बिना स्पर्श किये ही मरता है ? हे गौतम ! वायुकाय स्पर्श से मरता है (सोपक्रमी आयुष्य की अपेक्षा), किन्तु बिना स्पर्श किये नहीं मरता । अहो भगवन् ! क्या वायुकाय स्वकाया के स्पर्श से मरता है अथवा परकाया के स्पर्श से मरता है ? हे गौतम ! वायुकाय स्वकाया के शस्त्र के स्पर्श से भी मरता है और परकाया के शस्त्र के स्पर्श से भी मरता है + । अहो भगवन् ! क्या वायुकाय शरीरसहित मरता है अथवा शरीररहित मरता है ? हे गौतम ! कथचित् (किसी अपेक्षा से) शरीरसहित मरता है और कथचित् (किसी अपेक्षा से) शरीररहित मरता है। अहो भगवन् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! वायुकाय मे चार शरीर होते है – औदारिक, वैक्रिय, तैजस, कार्मण । औदारिक और वैक्रिय शरीर की अपेक्षा शरीररहित मरता है और तैजस कार्मण शरीर की अपेक्षा शरीरसहित मरता है ।

१४. मडाई निर्ग्रन्थ का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक दूसरा, उद्देशा पहला)

१ अहो भगवन् ! मडाई (प्रासुक भोजन करने वाला) निर्ग्रन्थ, जिसने भव रोका नहीं, भव (ससार) का प्रपच रोका नहीं, ससार घटाया नहीं, ससार वेदने योग्य कर्म घटाये नहीं, ससार विच्छेद किया नहीं, ससार वेदने योग्य कर्म विच्छेद किये नहीं, प्रयोजन सिद्ध किया नहीं, कार्य पूर्ण किया नहीं, ऐसा मडाई

+ यह अर्थ टीका मे है।

(प्रासुकभोजी) निर्ग्रन्थ मरकर क्या मनुष्यभव आदि को प्राप्त करता है ? हा, गौतम ! प्राप्त करता है ।

२ अहो भगवन् ! मडाई निर्ग्रन्थ के जीव को क्या कहना चाहिए ? हे गौतम ! उसको प्राण, भूत, जीव, सत्त्व, विज्ञ, वेद कहना चाहिए । अहो भगवन् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! मडाई निर्ग्रन्थ बाह्य, आभ्यन्तर श्वासोच्छ्वास लेता है, इसलिए वह प्राण कहलाता है । वह भूतकाल मे था, वर्तमान काल मे है और भविष्य काल में रहेगा इसलिए भूत कहलाता है । वह जीता है, जीवत्व और आयुष्यकर्म का अनुभव करता है, इसलिए जीव कहलाता है । शुभाशुभ कर्मों से सयुक्त है इसलिए सत्त्व कहलाता है । तीखे, कडवे, कषैले, खट्टे और मीठे रसो को जानता है, इसलिए विज्ञ कहलाता है । सुख-दु ख को भोगता है, इसलिए वेद कहलाता है।

३ अहो भगवन् ! मडाई निर्ग्रन्थ जिसने भव रोक दिया, भवप्रपच को रोक दिया, संसार घटा दिया, ससार मे वेदने योग्य कर्म घटा दिये, संसार विच्छेद कर दिया, ससार मे वेदने योग्य कर्म विच्छेद कर दिये, प्रयोजन सिद्ध कर लिया, कार्य पूर्ण कर लिया, ऐसा मडाई निर्ग्रन्थ क्या फिर मनुष्यभव आदि को प्राप्त करता है ? हे गौतम ! ऐसा मडाई निर्ग्रन्थ मनुष्यभव आदि भवो को प्राप्त नहीं करता है ।

४ अहो भगवन् ! ऐसे मडाई निर्ग्रन्थ के जीव को क्या कहना चाहिए ? हे गौतम ! उसे 'सिद्ध' कहना, 'बुद्ध' कहना, 'मुक्त' कहना, 'पारगत' (पार पहुंचा हुआ) कहना, परम्परागत (अनुक्रम से एकपगतिये से दूसरे और दूसरे से तीसरे, इस तरह संसार के पास पहुचा हुआ) कहना । इस प्रकार उसे सिद्ध, बुद्ध मुक्त, परिनिर्वृत (परिणिव्वुडे), अन्तकृत (अन्तकडे) और सर्व दु.खों से रहित कहना चाहिए ।

१५. खंदक जी का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक दूसरा, उद्देशा पहला)

सावत्थी (श्रावस्ती) नगरी मे गर्दभाली परिव्राजक (तापस) का शिष्य स्कन्दक नाम का परिव्राजक रहता था । वह ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद ये चार वेद, पाचवा इतिहास, छठा निघटु नाम का कोष तथा वेद के छह अगो + का जानकार, स्वमत के शास्त्रो मे प्रवीण, * सारए, वारए, धारए, पारए था । श्रमण भगवान् महावीर स्वामी का श्रावक पिगल नाम का नियठा स्कन्दकजी के पास आया । उसने स्कन्दकजी से प्रश्न पूछे– १ हे स्कन्दक ! क्या लोक अन्त सहित है या अन्त रहित है ! २ जीव अन्त सहित है या अन्त रहित है ? ३ सिद्ध (सिद्धशिला) अन्त सहित है या अन्त

+ शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्दशास्त्र, ज्योतिषशास्त्र (गणितशास्त्र) ।

** सारए-(सारक)– शिष्यो को पढाने वाला। अथवा स्मारक यानी भूले हुए पाठ को याद कराने वाला।*

वारए-(बारक)– यदि कोई शिष्य अशुद्ध पाठ बोलता हो तो उसे रोकने वाला।

धारए-(धारक)–पढी हुई विद्या को सम्यक् प्रकार से धारण करने वाला। अथवा अपने पढाये हुए शिष्यो को सम्यक् प्रकार से सयम मे प्रवृत्ति कराने वाला।

पारए-(पारक)– शास्त्रो का पारगामी, शास्त्रो में निपुण ।

रहित है ? ४ सिद्ध भगवान् अन्त सहित हैं या अन्त रहित हैं ? ५ किस मरण से मरता हुआ जीव ससार घटाता है और किस मरण से मरता हुआ जीव संसार बढाता है ?

पिगल नियंठा ने ये प्रश्न स्कन्दकजी से एक बार, दो बार, तीन बार पूछे, किन्तु स्कन्दकजी कुछ भी जबाव नहीं दे सके, वे मौन रहे । उनके मन में शंका उत्पन्न हुई कि इन प्रश्नों का उत्तर यह है अथवा दूसरा है । उनके मन मे कांक्षा उत्पन्न हुई कि मै इन प्रश्नो का उत्तर कैसे दूं ? मुझे इन प्रश्नो का उत्तर कैसे आवे ? उनके मन में विचिकित्सा उत्पन्न हुई कि मै जो उत्तर दूं उससे प्रश्न करने वाले को संतोष होगा या नहीं । उनकी बुद्धि मे भेद उत्पन्न हुआ कि अब मैं क्या करू ? उनके मन में क्लेश (खिन्नता) उत्पन्न हुआ कि इस विषय मे मै कुछ भी नहीं जानता हूँ । जब स्कन्दकजी कुछ भी उत्तर नहीं दे सके तब पिंगल नियंठा वहां से चला गया ।

इसके बाद किसी समय श्रावस्ती नगरी में जहां तीन मार्ग, चार मार्ग और बहुत मार्ग बहते है, वहां लोग परस्पर बाते करते है कि श्रमण भगवान् महावीर स्वामी कयंगला (कृतागला) नगरी के बाहर छत्रपलाश उद्यान मे पधारे है । लोग भगवान् को वन्दन करने के लिए जाने लगे । यह बात स्कन्दकजी ने भी सुनी । सुनकर मन में विचार किया कि मै भगवान् के पास जाकर अपने मन की शंका निकालूं, शंका का समाधान करू । ऐसा विचार कर अपने स्थान पर गये और तापस सबंधी भण्डोपकरण लेकर भगवान् महावीर स्वामी के पास जाने के लिए रवाना हुए । उस समय

भगवान् महावीर स्वामी ने गौतम स्वामी से कहा कि हे गौतम ! आज तू अपने पूर्वसाथी को देखेगा । तब गौतम स्वामी ने पूछा कि अहो भगवन् ! मै आज किसको देखूगा ? भगवान् ने फरमाया कि हे गौतम ! तू स्कन्दक नाम के परिव्राजक को देखेगा । तब गौतम स्वामी ने पूछा कि अहो भगवन् ! वह किस लिए आता है ? हे गौतम ! पिगल नामक नियठा ने उससे पाच प्रश्न (लोक अन्त सहित है या अन्त रहित है ? इत्यादि) पूछे । उनका जवाब वह नहीं दे सका। मन मे शका, काक्षा आदि उत्पन्न हुई । इसलिए उन प्रश्नो का उत्तर पूछने के लिए वह मेरे पास आता है । फिर गौतम स्वामी ने पूछा कि अहो भगवन् ! क्या स्कन्दक आपके पास दीक्षा लेगा ? हा, गौतम ! दीक्षा लेगा । अहो भगवन् स्कन्दक कितनी देर मे आवेगा ? हे गौतम ! अभी जल्दी ही आवेगा । इसके बाद थोडी ही देर मे गौतम स्वामी ने स्कन्दकजी को आते हुए देखा । देखकर गौतम स्वामी उठकर सामने गये और बोले हे स्कन्दकजी ! तुम्हारा आना अच्छा हुआ (स्वागत है) । पिगल नाम के नियठा ने तुमसे पाच प्रश्न पूछे, जिनका जवाब तुम नहीं दे सके । उनका जवाब पूछने के लिए भगवान के पास आये हो ? हे स्कन्दकजी ! क्या यह बात सच्ची है ? हा, गौतम ! यह बात सच्ची है । तब स्कन्दकजी ने गौतम स्वामी से पूछा कि हे गौतम ! इस तरह के ज्ञानी पुरुष कौन है ? जिन्होने मेरे मन की गुप्त बात आपको कह दी, जिससे आप मेरे मन की गुप्त बात जानते है ? हे स्कन्दकजी ! मेरे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर स्वामी अरिहन्त है, जिन है, केवली है, तीनो काल की बात को

जानने वाले है, सर्वज्ञ है, सर्वदर्शी है, उन्होने तुम्हारे मन की गुप्त बात मेरे से कही है, इसलिए मै जानता हूँ। फिर गौतम स्वामी और स्कन्दकजी श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास आये । भगवान् को देखकर स्कन्दकजी हर्षित हुए, आनन्दित हुए । भगवान् की तीन बार प्रदक्षिणा कर वन्दना नमस्कार कर पर्युपासना करने लगे । तब भगवान् ने स्कन्दकजी से कहा कि हे स्कन्दक ! पिंगल नाम के नियठा ने तुमसे पांच प्रश्न पूछे, जिनका जवाब तुम नहीं दे सके । उनका जवाब पूछने के लिए मेरे पास आये हो । क्या यह बात सच्ची है ? हॉ, भगवन् ! सच्ची है । (१) हे स्कन्दक ! मैने लोक चार प्रकार का बतलाया है– द्रव्यलोक, क्षेत्रलोक, काललोक, भावलोक । द्रव्य से लोक एक है, अन्तसहित है । क्षेत्रलोक असख्यात कोडाकोडी योजन का लम्बा-चौडा है, अन्तसहित है । काल से लोक भूतकाल मे था, वर्तमानकाल मे है और भविष्यकाल में रहेगा । लोक ध्रुव है, नियत, शाश्वत, अक्षय, अव्यय, अवस्थित और नित्य है, अन्तरहित है । भाव से अनन्त वर्ण पर्याय रूप है, अनन्त गन्ध, रस, स्पर्श पर्याय रूप है, अनन्त गुरुलघुपर्याय रूप है, अनन्त अगुरुलघुपर्याय रूप है, अन्त रहित है ।

(२) जीव के चार भेद है– द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव । द्रव्य से जीव एक है, अन्तसहित है । क्षेत्र से जीव असख्यात प्रदेश वाला है, असंख्यात आकाशप्रदेश अवगाहन किये है, अन्त सहित है । काल से जीव नित्य है, अन्त रहित है । भाव से जीव के अनन्त ज्ञानपर्याय हैं, अनन्त दर्शनपर्याय हैं, अनन्त चारित्रपर्याय है,

अनन्त अगुरुलघुपर्याय है, अन्तरहित है ।

(३) सिद्धि (सिद्धशिला) के ४ भेद है– द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव । द्रव्य से सिद्धि एक है, अन्तसहित है । क्षेत्र से सिद्धि ४५ लाख योजन की लम्बी-चौडी है, १, ४२, ३०, २४९ योजन झाझेरी परिधि है, अन्तसहित है । काल से सिद्धि नित्य है, अन्तरहित है । भाव से सिद्धि अनन्त वर्ण पर्याय वाली है, अनन्त अनन्त गन्ध, रस, स्पर्श पर्याय वाली है। अनन्त गुरुलघु पर्याय रूप है, अनन्त अगुरुलघुपर्याय रूप है, अन्तरहित है (द्रव्यसिद्धि क्षेत्रसिद्धि अन्त वाली है और कालसिद्धि और भावसिद्धि अन्तरहित है), सिद्धि अन्तसहित भी है और अन्तरहित भी है ।

(४) सिद्ध के ४ भेद है– द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव । द्रव्य से सिद्ध एक है, अन्तसहित है । क्षेत्र से सिद्ध असख्यात प्रदेश वाले है, असख्यात आकाशप्रदेश अवगाहन किये है, अन्तसहित है । काल से सिद्ध आदि-सहित हैं, अन्तरहित है । भाव से सिद्ध अनन्त ज्ञानपर्याय, अनन्त दर्शनपर्याय, अनन्त चारित्रपर्याय वाले है यावत् अनन्त अगुरुलघुपर्याय वाले है, अन्तरहित है ।

(५) अहो भगवन् ! कौन से मरण से मरता हुआ जीव ससार बढाता है और कौन से मरण से मरता हुआ जीव ससार घटता है ? हे स्कन्दक ! मरण दो प्रकार का है– बालमरण, पण्डितमरण । बालमरण के १२ भेद है– १ बलन्मरण-व्रत से भृष्ट होकर तडफता हुआ मरे । २ वसट्टमरण (वशार्त्तमरण) पतगे की तरह इन्द्रियो के वशीभूत होकर मरे । ३ अन्तोसल्लमरण (अन्त शल्यमरण) लगे हुए दोषो की आलोचलना किये बिना मरे ।

४ तद्भवमरण– जिस गति से मरे वापिस उसी गति में उत्पन्न होने की चिन्तवना करता हुआ मरे, जैसे मनुष्यगति से मर कर वापिस मनुष्यगति मे उत्पन्न होने की चिन्तवना करता हुआ मरे । ५ गिरिपतनमरण– पर्वत से पड कर मरे । ६ जलप्रवेशमरण–पानी में डूब कर मरे । ८ ज्वलनप्रवेशमरण–अग्नि मे जल कर मरे । ९ विषभक्षणमरण– जहर खाकर मरे । १० सत्थोवाडण (शस्त्रावपाटन) मरण– शस्त्र से मरे । ११ वेहानसमरण- गले मे फांसी लगाकर मरे । १२ गिद्धपिट्ठ (गृध्रपृष्ठ) मरण– मरे हुए जानवर के कलेवर मे प्रवेश कर के मरे । इन बारह प्रकार के बालमरण से मरता हुआ जीव नारकी के अनन्त भव बढाता है, तिर्यंच के अनन्त भव बढाता है, मनुष्य के अनन्त भव बढाता है, देवता के अनन्त भव बढाता है, वह अनन्त काल तक ससार में परिभ्रमण करता है ।

पण्डितमरण के दो भेद है – पाओवगमण- पादपोपगमन (वृक्ष की तरह स्थिर रह कर मरना) और भक्तप्रत्याख्यान (भोजन पानी का त्याग करके मरना)। इन दोनो के दो दो भेद है – + निहारी और अनिहारी । पण्डितमरण से मरता हुआ जीव नारकी के अनन्त भव घटाता है , यावत् भवभ्रमण घटाता है, अल्प ससारी होता है ।

+ निहारी– जो सथारा ग्राम, नगर, बस्ती मे किया जाए, जिससे मृतकलेवर को बाहर ले जाकर अग्निदाहादि संस्कार करना पडे, उसे निहारी कहते है।

अनिहारी– जो सथारा ग्राम, नगर, बस्ती से बाहर जंगल आदि एकान्त स्थान में किया जाय, जिससे मृतकलेवर को बाहर ले जाने की आवश्यकता न रहे, उसे अनिहारी कहते है।

भगवान् के उपरोक्त वचनो को सुनकर स्कन्दकजी ने भगवान् के पास सयम ग्रहण किया । फिर भिक्षु की १२ पडिमा धारण कीं, गुणरत्नसवत्सर तप किया और भी अनेक प्रकार की तपस्या करके एक मास का सथारा किया । यहा का आयुष्य पूर्ण कर बारहवे देवलोक मे उत्पन्न हुए । वहा से चव कर महाविदेह क्षेत्र मे सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होवेगे यावत् सर्व दु खो का अन्त कर मोक्ष जावेगे ।

१६. पंचास्तिकाय का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक दूसरा, उद्देशा दसवा)

अहो भगवन् ! अस्तिकाय के कितने भेद है ? हे गौतम ! अस्तिकाय के ५ भेद है– धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्‌गलास्तिकाय ।

१ अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय मे कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श पाये जाते है ? हे गौतम ! धर्मास्तिकाय मे वर्ण नहीं, गन्ध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं, अरूपी शाश्वत, अवस्थित लोक द्रव्य है। धर्मास्तिकाय के ५ भेद हैं– द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, गुण । द्रव्य से धर्मास्तिकाय एक द्रव्य है । क्षेत्र से लोकप्रमाण है । काल से आदि-अन्तरहित है । भाव से अरूपी, वर्ण नहीं, गन्ध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं । गुण से चलण (गति) गुण वाला है, पानी मे मछली दृष्टात ।

२ अहो भगवन् ! अधर्मास्तिकाय मे कितने वर्ण, कितने

गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श पाये जाते है ? हे गौतम। अधर्मास्तिकाय मे वर्ण नहीं, गन्ध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं, अरूपी, अजीव, शाश्वत, अवस्थित लोकद्रव्य है । अधर्मास्तिकाय के पाच भेद है– द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, गुण । द्रव्य से अधर्मास्तिकाय एक द्रव्य है। क्षेत्र से लोकप्रमाण है । काल से आदि-अन्तरहित है । भाव से अरूपी है, वर्ण नहीं, गन्ध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं । गुण से स्थिर गुण है, थके हुए पथिक को छाया का दृष्टात ।

३ अहो भगवन्। आकाशास्तिकाय मे कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श पाये जाते है ? हे गौतम। वर्ण नहीं, गन्ध नही, रस नहीं, स्पर्श नहीं, अरूपी अजीव, शाश्वत, अवस्थित लोकालोक द्रव्य । इसके ५ भेद है– द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, गुण । द्रव्य से एक द्रव्य । क्षेत्र से लोकालोक प्रमाण । काल से आदि-अन्तरहित । भाव से अरूपी, वर्ण नहीं, गन्ध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं । गुण से अवगाहन गुण, भींत मे खूंटी का दृष्टात, दूध मे पतासे का दृष्टात, आकाश मे विकास का गुण ।

४ अहो भगवन्। जीवास्तिकाय मे कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श पाये जाते है । हे गौतम। वर्ण नहीं, गन्ध नहीं, रस नहीं, अरूपी, जीव, शाश्वत, अवस्थित लोकद्रव्य । इसके ५ भेद है– द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, गुण । द्रव्य से अनन्त जीव द्रव्य । क्षेत्र से लोकप्रमाण । काल से आदि-अन्तरहित । भाव से अरूपी, वर्ण नहीं, गन्ध नहीं, रस नहीं, स्पर्श नहीं । गुण से उपयोग गुण, चेतनालक्षण, चन्द्रमा की कला का दृष्टात ।

५ अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय मे कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श पाये जाते है ? हे गौतम ! पुद्गलास्तिकाय मे पाच वर्ण, दो गन्ध, पाच रस, आठ स्पर्श पाये जाते है । रूपी, अजीव, शाश्वत, अवस्थित लोकद्रव्य । इसके ५ भेद है– द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, गुण । द्रव्य से अनन्त पुद्गलद्रव्य, क्षेत्र से लोकप्रमाण । काल से आदि-अन्तरहित । भाव से रूपी, वर्ण है, गन्ध है, रस है, स्पर्श है । गुण से पूरण-गलन गुण, मिले बिखरे गले, बादलो का दृष्टात ।

६ अहो भगवन् ! क्या धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश को धर्मास्तिकाय कहना । २ प्रदेश, ३ प्रदेश यावत् १० प्रदेश, सख्यात प्रदेश, असख्यात प्रदेशो मे एक प्रदेश कम हो, उनको धर्मास्तिकाय कहना ? हे गौतम ! णो इणट्ठे समट्ठे (उनको धर्मास्तिकाय नहीं कहना) । अहो भगवन् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! क्या खाडे चक्र को चक्र कहना कि पूरे चक्र को चक्र कहना । इसी छत्र, चमर, वस्त्र, दण्ड, शस्त्र, मोदक (लाडू) के लिये कह देना । धर्मास्तिकाय के पूरे प्रदेश हो तो धर्मास्तिकाय कहना । जिस तरह धर्मास्तिकाय का कहा उसी तरह ७ (सातवा द्वार) अधर्मास्तिकाय का कह देना । धर्मास्तिकाय की तरह ही (आठवा द्वार) आकाशास्तिकाय का कह देना, किन्तु इतनी विशेषता है कि आकाशास्तिकाय के अनन्त प्रदेश होते हैं, उनमे से एक भी प्रदेश कम हो उसको आकाशास्तिकाय नही कहना । जिस तरह आकाशास्तिकाय का कहा उसी तरह (नववा द्वार) जीवास्तिकाय और १० (दसवा द्वार) पुद्गलास्तिकाय का कह देना ।

११ अहो भगवन् ! जीव अपना जीवपना कैसे बतलाता है ? हे गौतम ! जीव उत्थान-कर्म-बल-वीर्य-पुरुषाकारपराक्रम सहित है । मतिज्ञान के अनन्त पर्याय, श्रुतज्ञान के अनन्त पर्याय, अवधिज्ञान के अनन्त पर्याय, मन पर्यायज्ञान के अनन्त पर्याय, केवलज्ञान के अनन्त पर्याय, मति-अज्ञान के अनन्त पर्याय, श्रुत-अज्ञान के अनन्त पर्याय, विभंगज्ञान के अनन्त पर्याय, चक्षुदर्शन के अनन्त पर्याय, अचक्षुदर्शन के अनन्त पर्याय, अवधिदर्शन के अनन्त पर्याय और केवलदर्शन के अनन्त पर्याय है, उनके उपयोग को धारण करता है, उपयोग लक्षण वाला है । इन कारणों से उत्थान-कर्म-बल-वीर्य-पुरुषाकारपराक्रम द्वार जीव अपना जीवपना बतलाता है ।

१२ अहो भगवन् ! आकाशास्तिकाय के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! दो भेद है- लोकाकाश और अलोकाकाश । अहो भगवन् ! क्या लोकाकाश मे जीव है कि जीव के देश है कि जीव के प्रदेश हैं, अजीव है कि अजीव के देश हैं कि अजीव के प्रदेश है ? हे गौतम ! जीव है, जीव के देश भी हैं, जीव के प्रदेश भी है, अजीव है, अजीव के देश भी हैं, अजीव के प्रदेश भी है । अहो भगवन् ! लोकाकाश मे जीव है तो क्या एकेन्द्रिय है कि द्वीन्द्रिय है कि त्रीन्द्रिय हैं कि चतुरिन्द्रिय है कि पंचेन्द्रिय है कि अनिन्द्रिय हैं ? हे गौतम ! नियमा एकेन्द्रिय भी हैं , द्वीन्द्रिय भी हैं, त्रीन्द्रिय भी हैं , चतुरिन्द्रिय भी है, पंचेन्द्रिय भी हैं और अनिन्द्रिय भी है, इन छहो के देश भी है और प्रदेश भी हैं । अहो भगवन् ! लोकाकाश मे अजीव है तो क्या रूपी है कि अरूपी है ? हे गौतम ! रूपी भी है,

अरूपी भी है । रूपी के चार भेद – खध, देश, प्रदेश, परमाणुपुद्गल । अरूपी के पाच भेद– धर्मास्तिकाय का खध है, देश नहीं, प्रदेश है । अधर्मास्तिकाय का खध है, देश नहीं, प्रदेश है । अद्धासमय (काल) । अहो भगवन् ! क्या अलोकाकाश मे जीव है कि जीव के देश है, जीव के प्रदेश है, अजीव है कि अजीव के देश है कि अजीव के प्रदेश हैं ? हे गौतम ! जीव नहीं, जीव के देश नहीं, जीव के प्रदेश नहीं । अजीव नहीं है, अजीव के देश नहीं है, अजीव के प्रदेश नहीं है । एक अजीव द्रव्य का देश है, वह अगुरुलघु है, अनन्त अगुरुलघुगुण से सयुक्त है, सर्व आकाश के अनन्तवा भाग ऊणा (कम) है ।

१३ अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय कितना बडा है ? हे गौतम ! लोकरूप, लोकमात्र, लोकप्रमाण, लोकस्पर्शी है और लोक को स्पर्श कर रहा हुआ है । जिस तरह धर्मास्तिकाय का कहा, उसी तरह १४ (चौदहवा द्वार) अधर्मास्तिकाय, १५ (पन्द्रहवा द्वार) लोकाकाश, १६(सोलहवा द्वार) जीवास्तिकाय, १७ (सतरहवा द्वार) पुद्गलास्तिकाय का कह देना ।

अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय अधोलोक कितना स्पर्शा है ? हे गौतम ! आधा झाझेरा (सात राजु से कुछ अधिक) । अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय ऊर्ध्वलोक कितना स्पर्शा है ? हे गौतम ! आधा मठेरा (सात राजु से कुछ कम) । अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय तिर्च्छालोक कितना स्पर्शा है ? हे गौतम ! धर्मास्तिकाय के असख्यातवे भाग स्पर्शा है । अहो भगवन् ! ७ पृथ्वी, ७ घनोदधि, ७ घनवाय, ७ तनुवाय ने धर्मास्तिकाय को कितना स्पर्शा है ? हे गौतम ! धर्मास्तिकाय के असख्यातवे भाग

को स्पर्शा है । अहो भगवन् ! सात नारकी के सात आकाशान्तरो ने धर्मास्तिकाय को कितना स्पर्शा है ? हे गौतम ! धर्मास्तिकाय के सख्यातवें भाग को स्पर्शा है । अहो भगवन् ! जम्बूद्वीप आदि असख्यात द्वीप, लवणसमुद्र आदि असख्यात समुद्रों ने धर्मास्तिकाय को कितना स्पर्शा है ? हे गौतम ! धर्मास्तिकाय के असख्यातवे भाग को स्पर्शा है । अहो भगवन् ! १२ देवलोक, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर विमान, इसिपब्भारा पृथ्वी (सिद्धशिला) धर्मास्तिकाय को कितना स्पर्शा है ? हे गौतम ! धर्मास्तिकाय के असंख्यातवे भाग को स्पर्शा है ।

जिस तरह धर्मास्तिकाय से * ६७ बोल कहे, उसी तरह अधर्मास्तिकाय से ६७ बोल और लोकाकाश से ६७ बोल कह देना चाहिए । ये ६७ + ६७ + ६७ = २०१ और १७ समुच्चय के, सब मिल कर २१८ बोल हुए।

१७. कंखामोहनीय वेदने के १३ कारणों का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक पहला, उद्देशा तीसरा)

अहो भगवन् ! क्या श्रमण निर्ग्रन्थ कखामोहनीय कर्म

* १ अधोलोक, २ ऊर्ध्वलोक, ३ तिर्च्छालोक ये ३ लोक के ३ बोल, ७ पृथ्वी, ७ घनोदधि, ७ घनवायु, ७ तनुवायुं, ७ नारकी के आकाश आतरे, १ द्वीप का, १ समुद्र का, १२ देवलोक का, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर विमान, १ सिद्धशिला, ये सब मिलाकर ६७ बोल हुए।

वेदते है ? हा गौतम ! वेदते है । अहो भगवन् ! इसका क्या कारण है ? हे गौतम ! १३ कारण है –

१ नाणतरेहि (ज्ञानान्तर से) – एक ज्ञान से दूसरे ज्ञान के विषय मे शका उत्पन्न होती है, जैसे– अवधिज्ञानी १४ राजु लोक के परमाणु आदि सब रूपी द्रव्यो का जानता है और मन पर्ययज्ञानी अढाई द्वीप मे सज्ञी जीव के मन की बात को जानता है । अवधिज्ञान तीसरा ज्ञान है, वह ज्यादा जानता है और मन पर्यय ज्ञान चौथा ज्ञान है, वह कम क्यो जानता है ? ऐसी शका उत्पन्न होती है ।

इसका उत्तर– अवधिज्ञान के साथ मे अवधिदर्शन की सहायता है, इसलिए ज्यादा जानता देखता है । मन पर्ययज्ञान के साथ मे दर्शन की सहायता नहीं, इसलिए कम जानता देखता है ।

२ दसणंतरेहि (दर्शनान्तर से)– सामान्य ज्ञान को दर्शन कहते है । चक्षुदर्शन और अचक्षुदर्शन अलग क्यो कहा गया ?

इसका उत्तर– अचक्षुदर्शन सामान्य रूप से देखता है, चक्षुदर्शन विशेष रूप से देखता है ।

अथवा समकित के विषय मे शका उत्पन्न होती है, जैसे– उपशम समकित और क्षायोपशमिक समकित अलग-अलग क्यो कही गई ? उत्तर– क्षायोपशमिक समकित मे विपाक का उपशम है और मिथ्यात्व के प्रदेशो का उदय है । उपशमसमकित मे मिथ्यात्व के प्रदेशो का उदय नहीं है ।

३ चरित्ततरेहि (चरित्रान्तर से) – चारित्र के विषय मे शका उत्पन्न होती है, जैसे– सामायिकचारित्र मे सर्व सावद्य का

त्याग हो गया फिर छेदोपस्थापनीय चारित्र देने की क्या आवश्यकता है ? उत्तर– प्रथम तीर्थंकर के साधु ऋजु-जड (ऊपर से जड यानी मन्दबुद्धि होते है किन्तु भीतर से उनका हृदय सरल होता है) होते है और अन्तिम तीर्थंकर के साधु वक्र-जड (ऊपर से जड यानी मन्दबुद्धि और भीतर हृदय में छल-कपट वाले) होते है । इसलिए प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर के साधुओं को समझाने के लिए छेदोपस्थापनीयचारित्र दिया जाता है । बीच के २२ तीर्थंकरो के साधु ऋजु-प्राज्ञ (प्राज्ञ यानी ऊपर से तीक्ष्ण बुद्धि वाले और ऋजु यानी भीतर से सरलहृदय वाले) होते है । इसलिए उनके लिए सामायिकचारित्र ही कहा गया है ।

४ लिगंतरेहि (लिंगान्तर से) – प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर के साधु सिर्फ सफेद वस्त्र रखते है और बीच के २२ तीर्थंकरो के साधु पाच ही वर्ण के वस्त्र रखते है ? यह भेद क्यो ?

उत्तर– प्रथम तीर्थंकर के साधु ऋजु-जड और अन्तिम तीर्थंकर के साधु वक्र-जड होते हैं, इसलिए उनके लिए सिर्फ सफेद वस्त्र रखने की ही आज्ञा है । बीच के २२ तीर्थंकरो के साधु ऋजु-प्राज्ञ होते है, इसलिए वे पाचो रग के वस्त्र रख सकते हैं ।

५ पवयणंतरेहि (प्रवचनान्तर से)– एक तीर्थंकर के प्रवचन से दूसरे तीर्थंकर के प्रवचन मे अन्तर पडने से शंका उत्पन्न होती है, जैसे– प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर के समय में पाच महाव्रत और छठा रात्रिभोजनविरमणव्रत बतलाया गया है और बीच के २२ तीर्थंकरों के समय मे चार महाव्रत और पाचवा रात्रिभोजनविरमणव्रत बतलाया गया है, ऐसा क्यो ? ऐसी शका

उत्पन्न होवे उसका उत्तर– तीसरे प्रश्न के उत्तर के समान है । चौथे महाव्रत का पाचवे महाव्रत मे समावेश किया गया है, क्योकि स्त्री परिग्रह रूप ही है । इस कारण से बीच के २२ तीर्थंकरो के समय चार महाव्रत कहे गये है । अलग-अलग विचार करने से पाच महाव्रत हो जाते है ।

६ पावयणतरेहि (प्रावचनिकान्तर से)– प्रावचनिक अर्थात् बहुश्रुत पुरुष । एक प्रावचनिक इस तरह की प्रवृत्ति करता है और दूसरा प्रावचनिक दूसरी तरह की प्रवृत्ति करता है। इन दोनो मे कौन सी ठीक है ? ऐसी शका उत्पन्न हो, उसका उत्तर यह है कि चारित्रमोहनीय का क्षयोपशम भिन्न-भिन्न होने से तथा उत्सर्ग, अपवाद मार्ग होने से प्रवृत्ति मे अन्तर पड जाती है किन्तु वही प्रवृत्ति प्रमाण रूप है, जो आगम से अविरुद्ध है।

७ कप्पतरेहि (कल्पान्तर से)– एक कल्प से दूसरे कल्प मे अन्तर होने से शका उत्पन्न होवे, जैसे कि जिनकल्पी साधु नग्न रहते है और महाकष्टकारी क्रिया करते हैं , स्थविरकल्पी वस्त्र पात्र रखते है और अल्प कष्ट वाली क्रिया करते है तो यह अल्प कष्टकारी क्रिया कर्मक्षय मे कैसे कारण हो सकती है ?

उत्तर– जिनकल्प और स्थविरकल्प दोनो ही भगवान् की आज्ञा मे हैं और दोनो कर्मक्षय के कारण है ।

८ मग्गत्तरेहिं (मार्गान्तर से)– कोई आचार्य दो नमोत्थुण देते है और कोई आचार्य तीन नमोत्थुण देते है । कोई आचार्य अधिक कायोत्सर्ग करते है और कोई कम करते है । इनमे कौनसा मार्ग ठीक है ? ऐसी शका होवे, उसका उत्तर– गीतार्थ जिस समाचारी मे प्रवृत्ति करता है, यदि वह निषिद्ध नहीं है और

निष्पाप है तो प्रमाणयुक्त है ।

९ मयंतरेहि (मतान्तर से)– एक दूसरे आचार्य के मत में अन्तर पडने से शंका उत्पन्न होती है, जैसे कि– आचार्य सिद्धसेन दिवाकर केवलज्ञान और केवलदर्शन को एक साथ मानते है और आचार्य जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण केवलज्ञान और केवलदर्शन को एक साथ नहीं मानते, किन्तु भिन्न-भिन्न समय मे मानते है । अब शंका होती है कि इन दोनो मतों मे कौनसा मत सच्चा है ? उत्तर– जो मत आगम के अनुसार है, वही सत्य है । पन्नवणाजी के पद ३० मे इस तरह कहा है– जिस समय जानता है उस समय नहीं देखता, जिस समय देखता है उस समय नहीं जानता ।

१० भगतरेहि (भगातर से)– हिसा सबंधी ४ भागे होते है –

१ द्रव्य से हिसा, भाव से नहीं ।

२ भाव से हिसा, द्रव्य से नहीं ।

३ द्रव्य से भी नहीं, भाव से भी नहीं ।

४ द्रव्य से भी हिसा, भाव से भी हिसा ।

इन भागो मे से कोई आचार्य द्विभगी, कोई त्रिभगी और कोई चौभंगी मानते है । इनमें शका उत्पन्न होवे, उसका उत्तर– ईर्यासमिति से यतनापूर्वक चलते हुए साधु के पैर नीचे कोई कीडी आदि जीव मर जाय तो द्रव्यहिसा है । बिना उपयोग से चले तो भावहिंसा है ।

११ णयतरेहि (नयान्तर से)– एक ही वस्तु मे नित्य और अनित्य ये दो विरोधी धर्म कैसे रह सकते है ? इसका उत्तर– द्रव्यार्थिकनय की अपेक्षा से वस्तु नित्य है और पर्यायार्थिकनय की

अपेक्षा से वस्तु अनित्य है । भिन्न-भिन्न अपेक्षा से एक ही वस्तु मे भिन्न-भिन्न धर्म रह सकते है । जैसे– एक ही पुरुष अपने पिता की अपेक्षा से पुत्र है और अपने पुत्र की अपेक्षा से वह पिता है ।

१२ णियमतरेहि (नियमान्तर से)– जैसे कोई साधु अभिग्रह करता है, नवकारसी, पौरिसी आदि पच्चक्खाण करता है । इसमे शका उत्पन्न होवे कि साधु के तो सर्व सावद्य का त्याग है, फिर उसे अभिग्रह नवकारसी पौरिसी आदि करने की क्या आवश्यकता है ? इसका उत्तर– साधु विशेष प्रमाद को टालने के लिए अभिग्रह आदि करते है ।

१३ पमाणतरेहि (प्रमाणान्तर से)– शास्त्र मे कहा है कि सूर्य समभूमिभाग से आठ सौ योजन ऊपर चलता है । हमारे चक्षु, प्रत्यक्ष से प्रतिदिन सूर्य भूमि से निकलता हुआ दिखाई देता है, इनमे कौन सच्चा है ? इसका उत्तर– हमारे चक्षुप्रत्यक्ष से सूर्य पृथ्वी से निकलता हुआ दिखाई देता है यह चक्षुप्रत्यक्ष सत्य नहीं है, क्योकि सूर्य पृथ्वी से बहुत दूर है, इसलिए हमारा चक्षुभ्रम है । शास्त्र मे जो कहा है वह सत्य है ।

१८. अस्ति-नास्ति का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक पहला, उद्देशा तीसरा)

१ अहो भगवन् ! क्या * अस्ति पदार्थ अस्तिपणे परिणमता

** जो पदार्थ जिस रूप से है, उसका उसी रूप मे रहना 'अस्तिपना' है और पररूप से न रहना नास्तिपना है । प्रत्येक वस्तु अपने अपने रूप से सत् (विद्यमान) है और पररूप से असत् (अविद्यमान) है।*

है और नास्ति पदार्थ नास्तिपणे परिणमता है ? हा, गौतम ! अस्ति पदार्थ अस्तिपणे परिणमता है और नास्ति पदार्थ नास्तिपणे परिणमता है ।

२ अहो भगवन् ! जो अस्ति पदार्थ अस्तिपणे परिणमता है और नास्ति पदार्थ नास्तिपणे परिणमता है तो क्या प्रयोगसा (प्रयोग से) परिणमता है या विस्रसा (स्वाभाविक रूप से) परिणमता है ? हे गौतम ! प्रयोगसा भी परिणमता है और विस्रसा भी परिणमता है । इसी तरह गमणिज्ज (गमनीय) के भी दो आलापक कह देने चाहिए ।

१९. मोहनीयकर्म का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक पहला, उद्देशा चौथा)

कइ पयडी कह बंधइ, कइहिं च ठाणेहिं बंधइ पयडी ।
कइ वेएइ पयडी, अणुभागो कइविहो कस्स । ।

१ अहो भगवन् ! कर्म कितने हैं ? हे गौतम ! कर्म ८ है– ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयुष्य, नाम, गोत्र, अन्तराय * ।

जैसे मनुष्य मनुष्य रूप से सर्वकाल मे सत् है और मनुष्य अश्व (घोडे) रूप से सर्वकाल मे असत् है। जैसे घट (घडा) घट रूप से सत् है किन्तु घट, पट (कपडा) रूप से असत् है।

** आठ कर्मो का विस्तृत वर्णन श्री पन्नवणासूत्र के थोकडा भाग तीसरा, प्रथमावृत्ति में तेईसवें कर्मप्रकृत्ति पद मे पहले उद्देशा पृष्ठ ३३ से ४२ तक मे कहा गया है। तीसरे भाग मे द्वितीयावृत्ति मे पृष्ठ ५३ से ६४ मे है ।*

२ अहो भगवन् ! क्या जीव मोहनीय कर्म के उदय से उवट्ठाणे (उपस्थान–चारगति मे परिभ्रमण करने की क्रिया) करता है ? हा, गौतम ! करता है ।

३ अहो भगवन् ! वीर्य से उपस्थान (चार गति मे परिभ्रमण करने की क्रिया) करता है या अवीर्य से करता है ? हे गौतम ! वीर्य से करता है, अवीर्य से नहीं करता है ।

४ अहो भगवन् ! वीर्य के कितने भेद हैं ? हे गौतम ! वीर्य के तीन भेद है– बालवीर्य, पण्डितवीर्य, बालपण्डितवीर्य ।

५ अहो भगवन् ! किस वीर्य से उपस्थान करता है ? हे गौतम ! बालवीर्य से उपस्थान करता है, पण्डितवीर्य से और बालपण्डितवीर्य से उपस्थान नही करता है ।

६ अहो भगवन् ! क्या मिथ्यात्वमोहनीयकर्म के उदय से जीव अपक्रमण करता है (ऊचे गुणस्थान से नीचे गुणस्थान मे आता है) ? हा, गौतम ! करता है ।

७ अहो भगवन् ! कौनसे वीर्य से अपक्रमण करता है ? हे गौतम ! बालवीर्य से अपक्रमण करता है, + कदाचित् बालपण्डितवीर्य से भी अपक्रमण करता है किन्तु पण्डितवीर्य से अपक्रमण नहीं करता, क्योकि पण्डितवीर्य से जीव नीचे गुणस्थान से ऊचे गुणस्थान मे जाता है किन्तु ऊचे गुणस्थान से नीचे गुणस्थान मे नही

+ वाचनान्तर मे कहा है कि बालवीर्य से अपक्रमण करता है, पण्डितवीर्य से और बालपण्डितवीर्य से अपक्रमण नही करता है।

आता * ।

जिस तरह मोहनीय कर्म के उदय से दो आलापक (उपस्थान और अपक्रमण) कहे है, उसी तरह उपशान्तमोहनीयकर्म के भी दो आलापक कह देने चाहिए, किन्तु उपशातमोहनीयकर्म मे पण्डितवीर्य से उपस्थान करता है और बालपण्डितवीर्य से अपक्रमण

---

* (१) *जब दर्शनमोहनीय (मिथ्यात्वमोहनीय) कर्म का उदय होता है तब जीव बालवीर्य द्वारा उवट्ठाण करता है अर्थात् बालवीर्य के प्रयोग द्वारा जीव ससार-परिभ्रमण की क्रिया करता है। आशय यह है कि मिथ्यादृष्टि जीव बालवीर्य द्वारा मिथ्यात्व को ही पुष्ट करता है। पण्डितवीर्य द्वारा और बालपण्डितवीर्य द्वारा जीव उवट्ठाण (परलोक की क्रिया, ससार- परिभ्रमण की क्रिया) नही करता है। (२) जब जीव के मिथ्यामोहनीय का उदय होता है तब बालवीर्य द्वारा अपक्रमण करता है अर्थात् ऊपर के उत्तम गुणस्थानो से गिर कर नीचे गुणस्थानों मे आता है अर्थात् सर्वविरति सयम से, देशविरति से और समकित से गिरकर मिथ्यात्व मे आता है ।*

प्रश्न– उदय की अपेक्षा उवट्ठाएज्जा और अवक्कमेज्जा मे क्या अन्तर है ?

उत्तर-- जो जीव मिथ्यात्व मे रहे हुए है और मिथ्यात्व को ही पुष्ट करते है अर्थात् चार गति परिभ्रमण की क्रिया करते है। यह उदय की अपेक्षा उवट्ठाएज्जा है।

जो जीव उत्तम गुणस्थान (चौथा, पाचवा, छठा) से गिर कर मिथ्यात्व मे आकर चार गति परिभ्रमण की क्रिया करते है। यह उदय की अपेक्षा अवक्कमेज्जा है।

करता है + ।

उपशमभाव मे सयम की रुचि होती है । सयम लेकर विचरते हुए कदाचित् किसी जीव के मिथ्यात्वमोहनीय उदय मे आता है तब अपने आप सयम से भ्रष्ट हो जाता है और मिथ्यात्व की रुचि जगने से मिथ्यात्वी हो जाता है ।

जीव ने जो कर्म किये है, उनको आत्मप्रदेशो मे निश्चय ही वेदता है, अनुभाग और विपाको मे वेदने की भजना है । बाधे हुए कर्मो को भोगे बिना छुटकारा नहीं होता है । केवली भगवान् सब जानते है कि 'यह जीव तो तपस्या से कर्मो की उदीरणा करके कर्मो का वेदेगा (भोगेगा) और यह जीव कर्म उदय मे आने से वेदेगा ।'

+ (१) जब जीव के मोहनीयकर्म उपशात होता है तब पण्डितवीर्य द्वारा उवट्ठाण करता है अर्थात् ऊपर के उत्तम गुणस्थानो मे रहा हुआ जीव उन्ही गुणस्थानो को पुष्ट करता है।

नोट– यहा छठे गुणस्थान की अपेक्षा पण्डितवीर्य सम्भावित है।

(२) जब जीव के मोहनीयकर्म उपशात होता है तब बालपण्डितवीर्य द्वारा अपक्रमण करता है अर्थात् नीचे गुणस्थानो से ऊपर के गुणस्थानो मे जाता है। मिथ्यात्व से निकल कर समकित मे , देशविरति मे तथा सर्वविरति सयम मे जाता है।

नोट– यहा पाचवे गुणस्थान की अपेक्षा बालपण्डितवीर्य सम्भावित है और छठे गुणस्थान की अपेक्षा पण्डितवीर्य सम्भावित है।

प्रश्न –उपशम की अपेक्षा उवट्ठाएज्जा और अवक्कम्मेज्जा मे क्या अन्तर है ?

उत्तर– जो जीव उत्तम गुणस्थानो (चौथा, पाचवा, छठा) मे रहे हुए है और उन्ही गुणस्थानो की क्रिया करते है। यह उपशम की अपेक्षा उवट्ठाएज्जा है।

२०. निर्ग्रन्थ की लघुता आदि का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक पहला, उद्देशा नवमा)

१ अहो भगवन् ! क्या श्रमण निर्ग्रन्थों कि लिए लघुता, अल्पइच्छा, अमूर्च्छा, अगृद्धिपना और अप्रतिबद्धता प्रशस्त है ? हां, गौतम ! प्रशस्त है ।

२ अहो भगवन् ! क्या श्रमण निर्ग्रन्थो के लिए अक्रोधीपना, अमानीपना, अमायीपना और अलोभीपना प्रशस्त है ? हां, गौतम ! प्रशस्त है ।

३ अहो भगवन् ! क्या श्रमण निर्ग्रन्थ कखाप्रदोष (मिथ्यात्वमोहनीय) क्षीण होने पर अन्तकर और चरमशरीरी होता है ? अथवा पहले बहुत मोह वाला भी हो, परन्तु पीछे सवुडा (संवृत-संवर वाला) होकर काल करे तो सिद्ध, बुद्ध, मुक्त यावत् सब दु खो का अंत करने वाला होता है ? हां, गौतम ! होता है ।

२१. आयुष्यबंध का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक पहला, उद्देशा नववां)

१ अहो भगवन् ! अन्यतीर्थी कहते है कि एक जीव एक समय में दो आयुष्य बांधता है– इस भव का और परभव का । जिस समय इस भव का आयुष्य बाधता है, उस समय परभव का भी

जो जीव मिथ्यात्व से निकलकर उत्तम गुणस्थान मे जाकर पण्डितवीर्य और बालपण्डितवीर्य की क्रिया करते हैं, यह उपशम की अपेक्षा अवक्कम्मेज्जा है ।

आयुष्य बाधता और जिस समय परभव का आयुष्य बाधता है, उस समय इस भव का भी आयुष्य बांधता है । इस भव का आयुष्य बांधने से परभव का आयुष्य बाधता है और परभव का आयुष्य बांधने से इस भव का आयुष्य बाधता है । अहो भगवन्! क्या अन्यतीर्थियो का यह कहना सत्य है ? हे गौतम! अन्यतीर्थियो का यह कहना मिथ्या है, क्योकि एक जीव एक समय मे एक आयुष्य बांधता है– इस भव का या परभव का । जिस समय इस भव का आयुष्य बाधता है, उस समय परभव का आयुष्य नहीं बाधता और जिस समय परभव का आयुष्य बाधता है, उस समय इस भव का आयुष्य नहीं बाधता । * इस भव का आयुष्य बांधने से परभव का आयुष्य नहीं बाधता और परभव का आयुष्य बाधने से इस भव का आयुष्य नहीं बाधता ।

२२. अन्यतीर्थी का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक सातवा, उद्देशा दसवा)

राजगृह नगर के बाहर + बहुत अन्यतीर्थी रहते है ।

** मनुष्य मनुष्य का आयुष्य बाधे वह इस भव का आयुष्य कहलाता है। मनुष्य अन्य गति (नारकी, तिर्यंच, देवता) का आयुष्य बांधे, वह परभव का आयुष्य कहलाता है।*

+ १ कालोदयी, २ शैलोदायी, ३ शैवालोदायी, ४ उदय, ५ नामोदय, ६ नर्मोदय, ७ अन्यपालक, ८ शैलपालक, ९ शखपालक, १० सुहस्ती, ११ गृहपति।

२०. निर्ग्रन्थ की लघुता आदि का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक पहला, उद्देशा नवमा)

१ अहो भगवन् ! क्या श्रमण निर्ग्रन्थों कि लिए लघुता, अल्पइच्छा, अमूर्च्छा, अगृद्धिपना और अप्रतिबद्धता प्रशस्त है ? हां, गौतम ! प्रशस्त है ।

२ अहो भगवन् ! क्या श्रमण निर्ग्रन्थो के लिए अक्रोधीपना, अमानीपना, अमायीपना और अलोभीपना प्रशस्त है ? हां, गौतम ! प्रशस्त है ।

३ अहो भगवन् ! क्या श्रमण निर्ग्रन्थ कखाप्रदोष (मिथ्यात्वमोहनीय) क्षीण होने पर अन्तकर और चरमशरीरी होता है ? अथवा पहले बहुत मोह वाला भी हो, परन्तु पीछे सवुडा (संवृत-सवर वाला) होकर काल करे तो सिद्ध, बुद्ध, मुक्त यावत् सब खो का अंत करने वाला होता है ? हा, गौतम ! होता है ।

२१. आयुष्यबंध का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक पहला, उद्देशा नववां)

१ अहो भगवन् ! अन्यतीर्थी कहते हैं कि एक जीव एक समय में दो आयुष्य बांधता है– इस भव का और परभव का । जिस समय इस भव का आयुष्य बांधता है, उस समय परभव का भी

जो जीव मिथ्यात्व से निकलकर उत्तम गुणस्थान मे जाकर पण्डितवीर्य और बालपण्डितवीर्य की क्रिया करते है, यह उपशम की अपेक्षा अवक्कम्मेज्जा है ।

आयुष्य बाधता और जिस समय परभव का आयुष्य बाधता है, उस समय इस भव का भी आयुष्य बाधता है । इस भव का आयुष्य बांधने से परभव का आयुष्य बाधता है और परभव का आयुष्य बाधने से इस भव का आयुष्य बाधता है । अहो भगवन् ! क्या अन्यतीर्थियो का यह कहना सत्य है ? हे गौतम ! अन्यतीर्थियो का यह कहना मिथ्या है, क्योकि एक जीव एक समय मे एक आयुष्य बाधता है– इस भव का या परभव का । जिस समय इस भव का आयुष्य बाधता है, उस समय परभव का आयुष्य नहीं बाधता और जिस समय परभव का आयुष्य बाधता है, उस समय इस भव का आयुष्य नहीं बाधता । * इस भव का आयुष्य बाधने से परभव का आयुष्य नहीं बाधता और परभव का आयुष्य बाधने से इस भव का आयुष्य नहीं बाधता ।

२२. अन्यतीर्थी का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक सातवा, उद्देशा दसवा)

राजगृह नगर के बाहर + बहुत अन्यतीर्थी रहते है ।

** मनुष्य मनुष्य का आयुष्य बाधे वह इस भव का आयुष्य कहलाता है। मनुष्य अन्य गति (नारकी, तिर्यंच, देवता) का आयुष्य बाधे, वह परभव का आयुष्य कहलाता है।*

+ १ कालोदयी, २ शैलोदायी, ३ शैवालोदायी, ४ उदय, ५ नामोदय, ६ नर्मोदय, ७ अन्यपालक, ८ शैलपालक, ९ शखपालक, १० सुहस्ती, ११ गृहपति।

उनमे से कालोदायी भगवान् के पास आया और भगवान् से पंचास्तिकाया के विषय मे प्रश्न पूछा । भगवान् ने फरमाया कि हे कालोदायी ! पाच अस्तिकाय है– धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय । इन मे से जीवास्तिकाय जीव है, बाकी ४ अजीव है । इनमे से पुद्गलास्तिकाय रूपी है, बाकी ४ अरूपी हैं । धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, ये अजीव अरूपी है, इन पर कोई खडा रहने मे, सोने मे, बैठने मे समर्थ नहीं है । पुद्गलास्तिकाय अजीव रूपी है, इस पर कोई भी खडा रह सकता है, सो सकता है, बैठ सकता है ।

अहो भगवन् ! क्या अजीवकाय (धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय) को पापकर्म लगता है ? हे कालोदायी ! अजीवकाय को पापकर्म नहीं लगता है, किन्तु जीवास्तिकाय को पापकर्म लगता है ।

भगवान् से प्रश्नोत्तर करके कालोदायी बोध को प्राप्त हुआ । खन्दकजी की तरह भगवान् के पास दीक्षा अंगीकार की, ग्यारह अंग पढे ।

किसी एक समय कालोदायी अणगार ने भगवान् से पूछा कि अहो भगवन् ! क्या जीवो को पापकर्म अशुभफल विपाक सहित होते है ? हां, कालोदायी ! जीवो को पापकर्म अशुभ फल-विपाक सहित होते है, जैसे विषमिश्रित भोजन करते समय तो मीठा लगता है किन्तु पीछे परिणमते समय दु खरूप दुर्वर्णादि रूप होता है । इसी तरह १८ पापकर्म करते हुए तो जीव को अच्छा लगता है, किन्तु पाप के कडवे फल भोगते समय जीव दु खी होता है ।

अहो भगवन् ! क्या जीवो को शुभकर्म शुभफल वाले होते है ? हा, कालोदायी ! शुभकर्म शुभफल वाले होते है, जैसे कडवी औषधि मिश्रित स्थालीपाक (मिट्टी के बर्तन मे अच्छी तरह पकाया हुआ भोजन) खाते समय तो अच्छा नहीं लगता किन्तु पीछे परिणमते समय शरीर मे सुखदायी होता है । इसी तरह १८ पाप त्यागते समय तो अच्छा नहीं लगता परन्तु पीछे जब शुभ कल्याणकारी पुण्यफल उदय मे आता है तब बहुत सुखदायी होता है ।

अहो भगवन् ! एक पुरुष अग्नि जलाता है और एक पुरुष अग्नि बुझाता है, इल दोनो मे कौन महाकर्मी, महाक्रिया वाला, महाआस्रवी, महावेदना वाला है और कौन अल्पकर्मी अल्पक्रिया वाला, अल्पआस्रवी, अल्पवेदना वाला है ? हे कालोदायी ! जो पुरुष अग्नि जलाता है वह महाकर्मी यावत् महावेदना वाला है क्योकि वह पाच काया (पृथ्वीकाय, अप्काय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय) का महा आरम्भी है, एक तेउकाया का अल्प आरम्भी है । जो पुरुष अग्नि बुझाता है वह अल्पकर्मी यावत् अल्पवेदना वाला है, क्योकि वह पाच काया का अल्प आरम्भी है, एक तेउकाया का महा आरम्भी है, इसलिए अल्पकर्मी यावत् अल्पवेदना वाला है ।

अहो भगवन् ! क्या अचित्त पुद्‌गल अवभास करते है, उद्योत करते है, तपते है, प्रकाश करते है ? हा, कालोदायी ! अचित्त पुद्‌गल अवभास करते है यावत् प्रकाश करते है । कोपायमान तेजोलेशी लब्धिवत अणगार की तेजोलेश्या निकल कर नजदीक या दूर जहा जाकर गिरती है, वहा वे अचित्त पुद्‌गल अवभास करते है यावत् प्रकाश करते है ।

कालोदायी अणगार उपवास बेला तेला आदि तपस्या करते हुए केवलज्ञान केवलदर्शन उपार्जन कर सिद्ध बुद्ध यावत् मुक्त हुए ।

२३. छह द्रव्य का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक उन्नीसवां, उद्देशा दूसरा)

१ अहो भगवन् ! आकाश कितने प्रकार का है ? हे गौतम ! आकाश दो प्रकार का है— लोकाकाश और अलोकाकाश ।

२ अहो भगवन् ! लोकाकाश में क्या जीव है ? या जीव के देश हैं या जीव के प्रदेश है ? अजीव है या अजीव के देश हैं या अजीव के प्रदेश हैं ? हे गौतम ! लोकाकाश मे जीव भी हैं, जीव के देश भी हैं, जीव के प्रदेश भी है । अजीव भी है, अजीव के देश भी हैं, अजीव के प्रदेश भी हैं ।

३ अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय कितनी बडी है ? हे गौतम ! धर्मास्तिकाय लोकरूप, लोकमात्र, लोकप्रमाण है । सम्पूर्ण लोक को अवगाहन कर रखा है । इसी तरह अधर्मास्तिकाय, लोकाकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्‌गलास्तिकाय का कह देना चाहिए ।

४ अहो भगवन् ! धर्मास्तिकाय अधोलोक को कितना स्पर्शा है ? हे गौतम ! आधा झाझेरा (७ राजू से कुछ अधिक) स्पर्शा है । * दूसरे शतक में कहा है, उस माफक सब अधिकार

** भगवतीसूत्र के थोकड़े के प्रथम भाग के पृष्ठ ११२-११३ माफक कहना।*

यहा कह देना यावत् –

५ अहो भगवन्। ईषत्प्राग्भारापृथ्वी (सिद्धशिला) ने क्या लोकाकाश के सख्यातवे भाग को स्पर्शा है या असख्यातवें भाग वगैरह को स्पर्शा है ? हे गौतम। संख्यातवें भाग को नहीं स्पर्शा है किन्तु असख्यातवें भाग को स्पर्शा है । बहुत असख्यातवा भाग नहीं स्पर्शा, बहुत सख्यातवां भाग नहीं स्पर्शा, सर्व लोक को नहीं स्पर्शा ।

६ अहो भगवन्। धर्मास्तिकाय के अभिवचन (पर्यायवाची शब्द) + कितने है ? हे गौतम। अनेक है, जैसे कि– धर्म, धर्मास्तिकाय, प्राणातिपातविरमण यावत् मिथ्यादर्शनशल्यविरमण (१८ ही पाप का विरमण), पाच समिति, तीन गुप्ति आदि अनेक नाम है ।

७ अहो भगवन्। अधर्मास्तिकाय के कितने नाम है ? हे

+ यहा पर यह प्रश्न किया गया है कि 'धर्मास्तिकाय' शब्द के द्वारा कहे जाने वाले अर्थ के वाचक कितने शब्द है ? इसका उत्तर यह है कि धर्मास्तिकाय शब्द के प्रतिपाद्य दो अर्थ है– धर्मास्तिकायद्रव्य तथा सामान्यधर्म और विशेषधर्म। धर्मास्तिकायद्रव्यप्रतिपादक और सामान्यधर्मप्रतिपादक 'धर्म' शब्द है । 'प्राणातिपातविरमण' आदि शब्द विशेषधर्म प्रतिपादक है। इसके सिवाय सामान्य रूप से अथवा विशेष रूप से चारित्र-धर्म के प्रतिपादक जो शब्द है, वे सब धर्मास्तिकाय के अभिवचन (पर्यायवाची) शब्द कहे गये है। इसी तरह अधर्मास्तिकाय के विषय मे भी जानना चाहिए।

गौतम ! अधर्म, अधर्मास्तिकाय, प्राणातिपात से लेकर मिथ्यादर्शनशल्य तक १८ ही पाप, पाच असमिति, तीन अगुप्ति आदि अनेक नाम हैं ।

८ अहो भगवन् ! आकाशास्तिकाय के कितने नाम हैं ? हे गौतम ! आकाश, आकाशास्तिकाय, गगन, नभ, सम, विषम, खह, विहाय, वीचि, विवर, अम्बर, अम्बरस (अम्ब-जल रूपी रस जिससे प्राप्त हो), छिद्र, शुषिर, मार्ग, विमुख, अर्द, व्यर्द, आधार, व्योम, भाजन, अन्तरिक्ष, श्याम, अवकाशान्तर, अगम, स्फटिक (स्वच्छ), अनन्त आदि अनेक नाम है ।

९ अहो भगवन् ! जीवास्तिकाय के कितने नाम है ? हे गौतम ! जीव, जीवास्तिाकाय, प्राण, भूत, सत्त्व, विज्ञ, चेता, (पुद्गलो का संचय करने वाला), जेता (कर्मरूप शत्रु को जीतने वाला), आत्मा, रगण (रागयुक्त) हिडुक (गमनशील) जंतु, योनि (उत्पादक), स्वयभूति, शरीरी, नायक, अन्तरात्मा आदि अनेक नाम है ।

१० अहो भगवन् ! पुद्गलास्तिकाय के कितने नाम है ? हे गौतम ! पुद्गल, पुद्गलास्तिकाय, परमाणु, द्विप्रदेशी से लेकर अनन्तप्रदेशी आदि अनेक नाम है ।

११ अहो भगवन् ! प्राणातिपात आदि किसमें परिणमते है ? हे गौतम ! प्राणातिपात आदि १८ पाप तथा १८ पापों से विरमण, औत्पातिकी आदि चार बुद्धि, अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा, उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषाकारपराक्रम, नारकीपना, असुरकुमारपना, यावत् वैमानिकपना, ज्ञानावरणीय आदि आठ कर्म, कृष्णलेश्या आदि छह लेश्या, सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि,

चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन, आभिनिबोधिकज्ञान यावत् विभगज्ञान, आहारसज्ञा आदि ४ सज्ञा, औदारिक आदि ५ शरीर, योग तीन, साकार-उपयोग, निराकार-उपयोग आदि तथा इनके समान अन्य सब धर्म आत्मा मे परिणमते है, आत्मा के सिवाय अन्यत्र नहीं परिणमते ।

१२ अहो भगवन् ! गर्भ मे उत्पन्न होता हुआ जीव कितने वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श वाले परिणामो मे परिणमता है ? हे गौतम ! पाच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध, आठ स्पर्श वाले परिणामो से परिणमता है ।

१३ अहो भगवन् ! क्या जीव कर्मों से मनुष्य, तिर्यंच आदि अनेक रूप से परिणमता है ? हा, गौतम ! जीव और यह सारा जगत् कर्मों से विविध रूप से परिणमता है, कर्मों के बिना नहीं परिणमता है ।

२४. पढम-अपढम का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक अठारहवा, उद्देशा पहला)

जीवाहारग भवसण्णि, लेस्सा दिट्ठि य संजय कसाए ।
णाणे जोगुवओगे, वेए य सरीर पज्जत्ती ।।

अर्थ- १ जीवद्वार, २ आहारद्वार, ३ भवीद्वार, ४ सज्ञी (सन्नी) द्वार, ५ लेश्याद्वार, ६ दृष्टिद्वार, ७ सयतद्वार, ८ कषायद्वार, ९ ज्ञानद्वार, १० योगद्वार, ११ उपयोगद्वार, १२ वेदद्वार, १३ शरीरद्वार, १४ पर्याप्तिद्वार ।

१ जीवद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव जीवत्व (जीवभाव) की अपेक्षा पढम (प्रथम) * है या अपढम (अप्रथम) है ? हे गौतम ! पढम नहीं, अपढम है । इसी तरह एक जीव, बहुत जीव, और २४ दण्डक के जीव कह देना ।

अहो भगवन् ! क्या जीव सिद्धत्व (सिद्धपणा) की अपेक्षा पढम है या अपढम है ? हे गौतम ! पढम है, अपढम नहीं है । इसी तरह बहुत सिद्ध का कह देना ।

२ आहारकद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव आहारकभाव की अपेक्षा पढम है या अपढम है ? हे गौतम ! पढम नहीं, अपढम है। इसी तरह समुच्चय एक जीव, बहुत जीव और २४ दण्डक कह देना ।

अहो भगवन् ! क्या जीव अनाहारकभाव की अपेक्षा पढम है या अपढम है ? हे गौतम ! एक जीव सिय (कदाचित्) पढम,

---

* *जो जेणे पत्तपुव्वो भावो, सो तेण अपढमो होइ ।*
सेसेसु होइ पढमो, अपत्तपुव्वेसु भावेसु ।।

अर्थ– जिस जीव को जो भाव पहले प्राप्त किया हुआ है, उसकी अपेक्षा से वह अपढम (अप्रथम) कहलाता है। जैसे जीव को जीवत्व (जीवपना) अनादिकाल से प्राप्त है। इसलिए जीवत्व की अपेक्षा जीव अपढम है। जो भाव जीव को कभी प्राप्त नहीं हुए, परन्तु, पीछे प्राप्त होवें, उसकी अपेक्षा पढम (प्रथम) कहलाता है, जैसे सिद्धत्व (सिद्धपना) की अपेक्षा जीव पढम है, क्योंकि सिद्धत्व जीव को पहले कभी प्राप्त नहीं हुआ है।

(सिद्ध की अपेक्षा), सिय अपढम (विग्रहगति की अपेक्षा) घणा जीव पढमा वि, अपढमा वि, (पढम भी है अपढम भी है) । २४ दण्डक के जीव एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा अपढम हैं । सिद्ध एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा पढम है ।

३ भवीद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक की अपेक्षा पढम है या अपढम है ? हे गौतम ! भवसिद्धिक, अभवसिद्धिक समुच्चयजीव और चौवीस ही दडक एक जीव, बहुत जीव की अपेक्षा अपढम हैं । नोभवसिद्धिक - नोअभवसिद्धिक (सिद्ध) एक जीव, बहुत जीव सिद्धभाव की अपेक्षा पढम हैं, अपढम नहीं ।

४ सज्ञी (सन्नी) द्वार– अहो भगवन् ! क्या समुच्चय जीव और १६ दण्डक (५ स्थावर, ३ विकलेन्द्रिय के कुल ८ दण्डक छोडकर) के सज्ञी जीव संज्ञीभाव की अपेक्षा पढम है या अपढम है ? हे गौतम ! पढम नहीं, अपढम है । इसी तरह बहुत जीव की अपेक्षा कह देना । इसी तरह असज्ञी मे समुच्चय जीव और २२ दण्डक (ज्योतिष वैमानिक को छोडकर, क्योकि इनमे असज्ञी नहीं उपजते है) एक जीव बहुत जीव की अपेक्षा कह देना (पढम नहीं, अपढम है) । नोसंज्ञी-नोअसज्ञी जीव, मनुष्य और सिद्ध एक जीव बहुत जीव की अपेक्षा पढम है, अपढम नहीं है ।

५ लेश्याद्वार– सलेशी यावत् शुक्ललेशी (सलेशी, कृष्णलेशी यावत् शुक्ललेशी तक जितने, जितने पावे उतने दण्डक कह देना) एक जीव, बहुत जीव की अपेक्षा पढम नहीं, अपढम है । अलेशी जीव, मनुष्य और सिद्ध अलेशीभाव की अपेक्षा पढम है,

अपढम नहीं ।

६ दृष्टिद्वार– अहो भगवन् ! क्या सम्यग्दृष्टि जीव सम्यग्दृष्टि भाव की अपेक्षा पढम है या अपढम ? हे गौतम ! * सिय पढम, सिय अपढम । इसी तरह समुच्चय जीव, + १९ दण्डक कह देना । बहुत जीव आसरी पढमा वि, (प्रथम भी है), अपढमा वि (अप्रथम भी है) । सिद्ध एक जीव आसरी, बहुत जीव आसरी पढम है, अपढम नहीं । मिथ्यादृष्टि समुच्चय जीव २४ ही दण्डक मे एक जीव आसरी, बहुत जीव आसरी अपढम है । मिश्रदृष्टि समुच्चय जीव, १६ दण्डक एक जीव आसरी सिय पढम, सिय अपढम । बहुत जीव आसरी पढमा वि, अपढमा वि ।

७ सयमद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव सयतभाव की अपेक्षा पढम है या अपढम है ? हे गौतम ! समुच्चय जीव और मनुष्य तथा संयतासयत जीव, मनुष्य और तिर्यंच एक जीव आसरी सिय पढम, सिय अपढम और बहुत जीव आसरी पढमा वि अपढमा वि । असंयत समुच्चय जीव २४ दण्डक एक जीव आसरी, बहुत जीव आसरी अपढम है, पढम नहीं । नोसंयत-नो-असयत-नो - सयतासयत जीव, सिद्ध एक जीव आसरी बहुत जीव असारी पढम

** कोई जीव पहली बार सम्यग्दर्शन को प्राप्त करता है, इस अपेक्षा से वह पढम (प्रथम) है। कोई सम्यगृदृष्टि जीव सम्यग्दर्शन से गिर कर फिर सम्यगदर्शन प्राप्त करता है, इस अपेक्षा से वह अपढम (अप्रथम) है।*

+ एकेन्द्रिय जीवों को सम्यग्दर्शन प्राप्त नहीं होता। इसलिए एकेन्द्रियो के पांच दण्डक छोडकर बाकी १९ कहे हैं।

है, अपढम नहीं ।

८ कषायद्वार– अहो भगवन् ! क्या सकषायी जीव कषायभाव की अपेक्षा पढम है या अपढम है ? हे गौतम ! सकषायी, क्रोधकषायी यावत् लोभकषायी समुच्चय जीव, २४ दण्डक एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा अपढम है, पढम नहीं । अकषायी समुच्चय जीव और मनुष्य एक जीव की आसरी सिय पढम (क्योकि यथाख्यातचारित्र प्रथमबार प्राप्त किया) सिय अपढम (पडवाइ की अपेक्षा), बहुत जीव की अपेक्षा पढमा वि अपढमा वि । सिद्ध एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा पढम है, अपढम नहीं है ।

९ ज्ञानद्वार– अहो भगवन् ! क्या सज्ञानी, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी जीव ज्ञानभाव की अपेक्षा पढम है या अपढम ? हे गौतम ! सज्ञानी, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी समुच्चय जीव, १९ दण्डक, अवधि-ज्ञानी समुच्चय जीव १६ दण्डक, मन पर्ययज्ञानी समुच्चय जीव और मनुष्य एक जीव की अपेक्षा सिय पढम सिय अपढम । बहुत जीव की अपेक्षा पढमा वि अपढमा वि नवर समुच्चय ज्ञानी मे सिद्ध भगवान् एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा पढम है, अपढम नहीं । केवलज्ञानी समुच्चय जीव मनुष्य और सिद्ध एक जीव की अपेक्षा बहुत जीव की अपेक्षा पढम है, अपढम नहीं, समुच्चय अज्ञानी, मति-अज्ञानी, श्रुत-अज्ञानी समुच्चय जीव, २४ दण्डक, विभगज्ञानी समुच्चय जीव १६ दण्डक एक जीव की अपेक्षा बहुत जीव की अपेक्षा अपढम है, पढम नहीं है ।

१० योगद्वार– अहो भगवन् ! क्या सयोगी जीव पढम है या अपढम ? हे गौतम ! सयोगी, काययोगी समुच्चय जीव २४ दण्डक, मनयोगी समुच्चय जीव १६ दण्डक, वचनयोगी समुच्चय जीव १९ दण्डक, एक जीव की अपेक्षा बहुत जीव की अपेक्षा अपढम है, पढम नहीं । अयोगी जीव मनुष्य, सिद्ध एक जीव बहुत जीव पढम हैं, अपढम नहीं ।

११ उपयोगद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव उपयोग की अपेक्षा पढम है या अपढम ? हे गौतम ! सागारोवउत्ता (साकार उपयोग वाला) अणागारोवउत्ता (अनाकार उपयोग वाला) समुच्चय जीव २४ दण्डक एक जीव की अपेक्षा बहुत जीव की अपेक्षा अपढम हैं, पढम नहीं । सिद्ध भगवान् एक जीव की अपेक्षा बहुत जीव की अपेक्षा पढम हैं, अपढम नहीं ।

१२ वेदद्वार– अहो भगवन् ! क्या सवेदी जीव वेद की अपेक्षा पढम है या अपढम ? हे गौतम ! सवेदी समुच्चय जीव २४ दण्डक, स्त्रीवेदी पुरुषवेदी समुच्चय जीव १५ दण्डक, नपुंसकवेदी ११ दण्डक एक जीव की अपेक्षा बहुत जीव की अपेक्षा अपढम है, पढम नहीं । अवेदी समुच्चय जीव मनुष्य एक जीव सिय पढम सिय अपढम, बहुत जीव पढमा वि अपढमा वि । अवेदी सिद्ध एक बहुत जीव पढम है, अपढम नहीं ।

१३ शरीरद्वार– अहो भगवन् ! क्या सशरीरी जीव शरीर के अपेक्षा पढम है या अपढम है ? हे गौतम ! सशरीरी समुच्चय जीव २४ दण्डक, औदारिकशरीर समुच्चय जीव १० दण्डक,

वैक्रियशरीर समुच्चय जीव १७ दण्डक, तैजस कार्मण, शरीर समुच्चय जीव २४ दण्डक एक जीव की अपेक्षा बहुत जीव की अपेक्षा अपढम है, पढम नहीं । आहारकशरीर जीव और मनुष्य एक जीव सिय पढम सिय अपढम, बहुत जीव पढमा वि अपढमा वि । अशरीरी जीव और सिद्ध एक जीव की अपेक्षा बहुत जीव की अपेक्षा पढम है, अपढम नहीं ।

१४ पर्याप्तिद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव पर्याप्ति की अपेक्षा पढम है या अपढम है । हे गौतम ! चार पर्याप्त और अपर्याप्त समुच्चय जीव, २४ दण्डक, भाषापर्याप्त और अपर्याप्त समुच्चय जीव १९ दण्डक, मनपर्याप्त समुच्चय जीव और १६ दण्डक, एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा अपढम हैं, पढम नहीं ।

२५. चरम अचरम का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक अठारहवा, उद्देशा पहला)

जीवाहारग भव सण्णि, लेस्सा दिट्ठि य सजय कसाए ।
णाणे जोगुवओगे, वेए य सरीर पज्जत्ती ।।

अर्थ– १ जीवद्वार, २ आहारद्वार, ३ भवीद्वार, ४ सज्ञीद्वार, ५ लेश्याद्वार, ६ दृष्टिद्वार, ७ सयमद्वार, ८ कषायद्वार, ९ ज्ञानद्वार, १० योगद्वार, ११ उपयोगद्वार, १२ वेदद्वार, १३ शरीरद्वार, १४ पर्याप्तिद्वार ।

१ जीवद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव जीवभाव की

अपेक्षा + चरम है या अचरम है ? हे गौतम ! जीव जीवभाव की अपेक्षा * अचरम है, चरम नहीं । इसी तरह समुच्चय जीव और सिद्ध एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा अचरम है, चरम नहीं । २४ दण्डक के जीव एक की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम । बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि अचरमा वि ।

२ आहारकद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव आहारकभाव की अपेक्षा चरम है या अचरम ? हे गौतम ! आहारक समुच्चय जीव, २४ दण्डक एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि अचरमा वि । अनाहारक जीव और सिद्ध एक जीव की अपेक्षा बहुत जीव की अपेक्षा अचरम है, चरम नही । अनाहारक २४ दण्डक के जीव एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि अचरमा वि ।

३ भवीद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव भवसिद्धिक की

\+ *जो जं पाविहिति पुणो, भावं सो तेण अचरिमो होइ।*
अच्चत वियोगो जस्स, जेण भावेण सो चरिमो ।।

अर्थ– जो जीव जिस भाव को फिर प्राप्त करेगा, उस भाव की अपेक्षा से वह अचरम कहा जाता है और जीव का जिस भाव से एकात वियोग हो जाता है, वह चरम कहा जाता है।

** जिस भाव का सर्वदा के लिए अन्त हो जाय, वह चरम है और जिस भाव का कभी अन्त न हो , वह अचरम है। जीव के जीवत्व (जीवपना) का कभी अन्त नही होगा, इसलिए जीव का जीवपना अचरम है, चरम नही।*

अपेक्षा चरम है या अचरम है ? हे गौतम ! भवसिद्धिक एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा चरम है, अचरम नहीं । २४ दण्डक मे एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि अचरमा वि । अभवसिद्धिक समुच्चय जीव, २४ दण्डक एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा अचरम है, चरम नहीं । नोभवसिद्धिक-नोअभवसिद्धिक जीव सिद्ध एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा अचरम है, चरम नही ।

४ सज्ञीद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव सज्ञीभाव की अपेक्षा चरम है या अचरम है ? हे गौतम ! सज्ञी समुच्चय जीव १६ दण्डक और असज्ञी समुच्चय जीव २२ दण्डक एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि अचरमा वि । नोसज्ञी-नोअसज्ञी समुच्चय जीव, सिद्ध एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा अचरम है, चरम नहीं । मनुष्य (केवली की अपेक्षा से) एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा चरम है, अचरम नहीं ।

५ लेश्याद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव लेश्या की अपेक्षा चरम है या अचरम है ? हे गौतम ! सलेशी समुच्चय जीव २४ दण्डक कृष्णलेशी, नीललेशी, कापोतलेशी समुच्चय जीव, २२ दण्डक, तेजोलेशी समुच्चय जीव, १८ दण्डक, पद्मलेशी, शुक्ललेशी समुच्चय जीव ३ दण्डक एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि अचरमा वि । अलेशी समुच्चय जीव और सिद्ध एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा अचरम है चरम नहीं । अलेशी मनुष्य एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की

अपेक्षा चरम है, अचरम नहीं ।

६ दृष्टिद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव समदृष्टि की अपेक्षा चरम है या अचरम है ? हे गौतम ! समदृष्टि समुच्चय जीव १९ दण्डक एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि अचरमा वि । समदृष्टि, सिद्ध भगवान् एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा अचरम हैं, चरम नहीं । मिथ्यादृष्टि समुच्चय जीव २४ दण्डक, मिश्रदृष्टि समुच्चय जीव १६ दण्डक एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि अचरमा वि ।

७ सयतद्वार- अहो भगवन् ! क्या जीव सयतभाव की अपेक्षा चरम्र है या अचरम ? हे गौतम ! सयति समुच्चय जीव और मनुष्य, सयतासयति समुच्चय जीव, मनुष्य, तिर्यंच, असंयति समुच्चय जीव २४ दण्डक एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि अचरमा वि । नोसंयति-नोअसंयति-नोसयतासंयति जीव और सिद्ध एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा अचरम है, चरम नहीं ।

८ कषायद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव कषाय की अपेक्षा चरम है या अचरम ? हे गौतम ! सकषायी, क्रोधकषायी यावत् लोभकषायी समुच्चय जीव २४ दण्डक एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि अचरमा वि, अकषायी जीव और सिद्ध एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा अचरम हैं, चरम नहीं । मनुष्य (अकषायी मनुष्य) एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव की अपेक्षा

चरमा वि अचरमा वि ।

९ ज्ञानद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव ज्ञान की अपेक्षा चरम है या अचरम है ? हे गौतम ! समुच्चय ज्ञानी मतिज्ञानी श्रुतज्ञानी समुच्चय जीव १९ दण्डक, अवधिज्ञानी समुच्चय जीव १६ दण्डक, मन पर्यवज्ञानी समुच्चय जीव और मनुष्य एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि, अचरमा वि । केवलज्ञानी समुच्चय जीव और सिद्ध एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा अचरम है, चरम नहीं । मनुष्य (केवलज्ञानी मनुष्य) एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा चरम है, अचरम नहीं ।

समुच्चय अज्ञानी, मति-अज्ञानी, श्रुत-अज्ञानी समुच्चय जीव २४ दण्डक, विभगज्ञानी समुच्चय जीव १६ दण्डक एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि अचरमा वि ।

१० योगद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव योग की अपेक्षा चरम है या अचरम है ? हे गौतम ! सयोगी काययोगी समुच्चय जीव २४ दण्डक, मनयोगी समुच्चय जीव १६ दण्डक, वचनयोगी समुच्चय जीव १९ दण्डक एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि अचरमा वि । अयोगी समुच्चय जीव और सिद्ध एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा अचरम है, चरम नहीं । मनुष्य (अयोगी) एक जीव की अपेक्षा बहुत जीव की अपेक्षा चरम है, अचरम नहीं ।

११ उपयोगद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव उपयोग की

अपेक्षा चरम है या अचरम है ? हे गौतम ! सागारोवउत्ता (साकार-उपयोग वाला), अणगारोवउत्ता (अनाकार-उपयोग वाला) समुच्चय जीव और सिद्ध एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा अचरम है, चरम नहीं । २४ दण्डक एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि अचरमा वि ।

१२ वेदद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव वेद की अपेक्षा चरम है या अचरम है ? हे गौतम ! सवेदी समुच्चय जीव २४ दण्डक, स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी समुच्चय जीव १५ दण्डक, नपुंसकवेदी समुच्चय जीव ११ दण्डक एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि अचरमा वि । अवेदी जीव और सिद्ध एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा अचरम है, चरम नहीं । मनुष्य एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम, बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि, अचरमा वि ।

१३ शरीरद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव शरीर की अपेक्षा चरम है या अचरम है ? हे गौतम ! सशरीरी समुच्चय जीव २४ दण्डक, औदारिकशरीर समुच्चय जीव १० दण्डक, वैक्रियशरीर समुच्चय जीव १७ दण्डक, आहारकशरीर समुच्चय जीव मनुष्य, तैजस-कार्मण समुच्चय जीव २४ दण्डक एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम । बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि अचरमा वि । अशरीरी जीव सिद्ध एक जीव की अपेक्षा, बहुत जीव की अपेक्षा अचरम है, चरम नहीं ।

१४ पर्याप्तिद्वार– अहो भगवन् ! क्या जीव पर्याप्ति की अपेक्षा चरम है या अचरम है ? हे गौतम ! ४ पर्याप्ति ४

अपर्याप्ति समुच्चय जीव २४ दण्डक, * मन-वचन पर्याप्ति समुच्चय जीव १९ दण्डक एक जीव की अपेक्षा सिय चरम सिय अचरम , बहुत जीव की अपेक्षा चरमा वि अचरमा वि ।

२६. माकन्दीपुत्र अनगार का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक अठारहवा, उद्देशा तीसरा)

१ अहो भगवन् ! बंध कितने प्रकार का है ? हे माकन्दीपुत्र ! बध दो प्रकार का है– द्रव्यबध और भावबध ।

२ अहो भगवन् ! द्रव्यबध के कितने भेद है ? हे माकन्दीपुत्र ! द्रव्यबध के दो भेद है– प्रयोगबध और विस्रसाबध (स्वाभाविकबध) ।

३ अहो भगवन् ! विस्रसाबध के कितने भेद है ? हे माकन्दीपुत्र ! विस्रसाबध के दो भेद है– १ सादि-विस्रसाबध, जैसे बादलो आदि का । २ अनादि- विस्रसाबध, जैसे धर्मास्तिकाय आदि का परस्पर बध । (धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय और लोकाकाश ये तीनो आपस मे परस्पर बधे हुए है) ।

४ अहो भगवन् ! प्रयोगबध के कितने भेद है ? हे माकन्दीपुत्र ! प्रयोगबध के दो भेद है– शिथिलबध (ढीलाबध) और गाढबध (मजबूतबध) ।

५ अहो भगवन् ! भावबध के कितने भेद है ? हे

** यहा मन और भाषा शामिल होने से १९ दण्डक लिये गये है, किन्तु सिर्फ मनपर्याप्ति के १६ दण्डक ही होते है।*

माकन्दीपुत्र ! भावबंध के दो भेद हैं– मूलप्रकृतिबध और उत्तरप्रकृतिबंध । मूलप्रकृतिबंध के ज्ञानावरणीयादि ८ भेद है । उत्तरप्रकृतिबध के १४८ भेद हैं, इनमे १२० प्रकृतियों का बंध होता है । जिस दण्डक में जितनी प्रकृतियों का बंध हो, सो कह देना ।

२७. जीवाजीव के ४८ द्रव्य जीव के परिभोग में आने का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक अठारहवा, उद्देशा चौथा)

अहो भगवन् ! प्राणातिपात आदि १८ पाप और इन १८ पापों का त्याग, पृथ्वीकाय आदि ५ स्थावर, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, अशरीरी जीव, परमाणुपुद्गल, शैलेशी अवस्था को प्राप्त अनगार, स्थूल आकार वाले त्रसकलेवर (द्वीन्द्रियादि), इन ४८ द्रव्यों मे कितनेक जीवरूप है और कितनेक अजीवरूप है । अहो भगवन् ! क्या यह सभी जीव के परिभोग मे आते है ? हे गौतम ! इनमे से २४ (१८ पाप, ५ स्थावर, बादर कलेवर) तो जीव के परिभोग में आते है , शेष २४ जीव के परिभोग में नहीं आते हैं ।

२८. स्पर्शना का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक अठारहवां, उद्देशा दसवा)

१ अहो भगवन् ! क्या भावितात्मा अनगार वैक्रियलब्धि से तलवार की धार पर या उस्तरे की धार पर रह सकते है ? हां,

गौतम ! रह सकते है । अहो भगवन् ! क्या वे वहा छेद, भेद को प्राप्त नहीं होते है ? हे गौतम ! वे वहा छेद, भेद को प्राप्त नहीं होते ।

अहो भगवन् ! क्या भावितात्मा अनगार वैक्रियलब्धि से अग्निशिखा मे से निकल सकते है ? हे गौतम ! हा, अग्निशिखा से निकल सकते है । अहो भगवन् ! वे अग्निशिखा से निकलते है तो क्या जल जाते है ? हे गौतम ! वे जलते नहीं है । अहो भगवन् ! क्या भावितात्मा अनगार पुष्करसवर्त मेघ के बीच मे से निकल सकते है ? हे गौतम ! हा वे निकल सकते है । अहो भगवन् ! पुष्करसवर्त मेघ के बीच मे से वे निकलते है तो क्या भीग जाते है ? हे गौतम ! वे नहीं भीगते है । अहो भगवन् ! क्या भावितात्मा अनगार गगा, सिन्धु महानदियो के प्रतिश्रोत-उल्टे प्रवाह मे से होकर निकल सकते है ? हे गौतम ! हा वे निकल सकते है । अहो भगवन् ! गगा, सिन्धु महानदी के उल्टे प्रवाह मे होकर निकलते हुए क्या वे स्खलित होते है ? हे गौतम ! वे स्खलित नहीं होते । अहो भगवन् ! भावितात्मा अनगार क्या उदकावर्त (पानी के भवर) मे या उदकबिंदु मे प्रवेश कर सकते है ? हे गौतम ! हा प्रवेश कर सकते है । अहो भगवन् ! भावितात्मा अनगार उदकावर्त और उदकबिदु मे प्रवेश करते हुए पानी के शस्त्र को प्राप्त होते है यानी भीजते है ? हे गौतम ! नहीं, वहा शस्त्र का सक्रमण नहीं होता ।

२ अहो भगवन् ! क्या परमाणुपुद्गल वायुकाय से स्पर्शा हुआ है अथवा परमाणुपुद्गल से वायुकाय स्पर्शी हुई है ? हे गौतम !

परमाणुपुद्गल वायुकाय से स्पर्शा हुआ है, किन्तु वायुकाय परमाणुपुद्गल से स्पर्शी हुई नहीं है । इसी तरह दो प्रदेशी स्कन्ध यावत् असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध कह देना चाहिए । अनन्त प्रदेशी स्कन्ध सिय 'कदाचित्' स्पर्शा हुआ है और सिय नहीं स्पर्शा हुआ है ।

३ अहो भगवन् ! क्या मशक (दीवडी) वायुकाय से स्पर्शी हुई है अथवा वायुकाय मशक से स्पर्शी हुई है ? हे गौतम ! मशक वायुकाय से स्पर्शी हुई है, किन्तु मशक से वायुकाय नहीं स्पर्शी हुई है ।

४ अहो भगवन् ! क्या रत्नप्रभापृथ्वी के नीचे वर्णादि २० बोल अन्योन्यबद्ध, अन्योन्यस्पृष्ट यावत् अन्योन्यसंबद्ध है ? हां, गौतम ! है । इसी तरह शेष ६ नरक, १२ देवलोक, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर विमान और इसिपब्भारा (ईषत्प्राग्भारा-सिद्धशिला) इन ३३ स्थानो के नीचे भी वर्णादि २० बोल अन्योन्यबद्ध, स्पृष्ट यावत् संबद्ध हैं ।

२९. सोमिल ब्राह्मण के प्रश्नोत्तरों का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक अठारहवां, उद्देशा दसवा)

१ वाणिज्यग्रामनगर मे दूतीपलाश नामक उद्यान था । उस नगर में सोमिल नाम का ब्राह्मण रहता था । वह धनाढ्य यावत् अपरिभूत था । वह ऋग्वेदादि चारों वेदों मे तथा दूसरे ब्राह्मण शास्त्रों मे कुशल था, उसके पांचसौ शिष्य थे । वह अपने

कुटुम्ब का अधिपतिपना करता हुआ रहता था । एक समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वाणिज्यग्रामनगर के बाहर दूतीपलाश उद्यान मे पधारे । भगवान् के आगमन को सुनकर परिषद् वन्दने को गई । सोमिल ब्राह्मण भी अपने साथ एक सौ शिष्यो को लेकर प्रश्न पूछने के लिए भगवान् के पास गया । भगवान् से बहुत दूर नहीं, बहुत नजदीक नहीं बैठकर भगवान् से इस प्रकार प्रश्न पूछे–

१ अहो भगवन् ! क्या आपके यात्रा, यापनीय (जपनी), अव्याबाध और प्रासुक विहार है ? हे सोमिल ! मेरे यात्रा, यापनीय, अव्याबाध और प्रासुक विहार है।

२ अहो भगवन् ! आपके यात्रा क्या है ? हे सोमिल ! तप, नियम, सयम, स्वाध्याय, ध्यान और आवश्यक योगो मे जो मेरी यतना है, वह मेरी यात्रा है ।

३ अहो भगवन् ! आपके यापनीय क्या है ? हे सोमिल ! यापनीय के दो भेद है– इन्द्रिययापनीय और नोइन्द्रिययापनीय । श्रोत्रेन्द्रिय आदि पाच इन्द्रिया मेरे अधीन (वश मे) प्रवर्तती है, यह मेरे इन्द्रिययापनीय है । क्रोध, मान, माया, लोभ, ये चार कषाय मेरे क्षय हुए है, उदय मे नहीं आते, यह मेरे नोइन्द्रिययापनीय है ।

४ अहो भगवन् ! आपके अव्याबाध क्या है ? हे सोमिल ! वात पित्त कफ और सन्निपात से पैदा होने वाले शरीर सबधी अनेक रोग मेरे उपशान्त हो गये है, उदय मे नहीं आते, यह मेरे अव्याबाध है।

५ अहो भगवन् ! आपके प्रासुक विहार क्या है ? हे

सोमिल ! आराम, उद्यान, देवकुल, सभा आदि स्त्री पशु नपुसक से रहित स्थानों में निर्दोष और एषणीय पट पाटला, शय्या संथारा प्राप्त कर मैं विचरता हूं, यही मेरे प्रासुक विहार है ।

६ अहो भगवन् ! * सरिसव आपके भक्ष्य है या अभक्ष्य है ? हे सोमिल ! सरिसव मेरे भक्ष्य भी है और अभक्ष्य भी है । ब्राह्मणशास्त्रों मे सरिसव दो प्रकार की कही गई है– मित्रसरिसव और धानसरिसव । मित्रसरिसव के तीन भेद है– १ एक साथ जन्मे हुए, २ एक साथ बडे हुए, ३ एक साथ खेले हुए । यह तीन प्रकार की मित्रसरिसव तो अभक्ष्य है । धानसरिसव के २ भेद है– शस्त्रपरिणत और अशस्त्रपरिणत । अशस्त्रपरिणत (अग्नि आदि शस्त्र से जो निर्जीव नही हुए है) तो श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए अभक्ष्य है । शस्त्रपरिणत के दो भेद– एषणीय (निर्दोष) और अनेषणीय (सदोष), अनेषणीय तो अभक्ष्य है । एषणीय के दो भेद– जांची हुई (मांगी हुई) और अजांची हुई (नहीं मागी हुई) । अजाची हुई तो अभक्ष्य है । जाची हुई के दो भेद– मिली हुई और नहीं मिली हुई । नहीं मिली हुई तो अभक्ष्य है और मिली हुई भक्ष्य है ।

७ अहो भगवन् ! + मास आपके भक्ष्य है या अभक्ष्य

** 'सरिसव' यह प्राकृत भाषा का श्लिष्ट शब्द है। इसकी सस्कृत छाया दो होती है– 'सर्षप' और 'सदृश्वया ', सर्षप का अर्थ है सरसों और 'सदृशवया' का अर्थ है मित्र।*

+ मास, यह प्राकृत का श्लिष्ट शब्द है। इसकी सस्कृत छाया दो होती हैं– माष और मास। 'माष' का अर्थ है उडद और 'मास' का अर्थ है महीना–श्रावण, भादरवा आदि।

है ? हे सोमिल ! मास भक्ष्य भी है और अभक्ष्य भी है । अहो भगवन् ! इसका क्या कारण है ? हे सोमिल ! तुम्हारे ब्राह्मण शास्त्रो मे 'मास' दो प्रकार के कहे गये है– द्रव्यमास और कालमास। (कालमास तो श्रावण से लेकर आषाढ तक १२ मास (महीने) होते है, वे अभक्ष्य है । द्रव्यमास के दो भेद है– अर्थमास और धान्यमास । सोना, चादी तोलने के मासे (बाट) को अर्थमास कहते है, यह अभक्ष्य है । धानमास धानसरिसव की तरह कह देना चाहिए ।

८ अहो भगवन् ! कुलत्था आपके भक्ष्य है या अभक्ष्य है ? हे सोमिल ! कुलत्था भक्ष्य भी है और अभक्ष्य भी है । अहो भगवन् ! इसका क्या कारण ? हे सोमिल ! तुम्हारे ब्राह्मणशास्त्रो मे कुलत्था दो प्रकार की कही गई है– स्त्रीकुलत्था (कुलीन स्त्री) और धानकुलत्था । स्त्रीकुलत्था के तीन भेद है– १ कुलकन्या, २ कुलवधू, ३ कुलमाता । ये तीनो श्रमण निर्ग्रन्थो के लिए अभक्ष्य है । धानकुलत्था (कुलथी नाम का एक धान) धानसरिसव की तरह कह देना चाहिए ।

९ अहो भगवन् ! आप एक है या दो है ? आप अक्षय, अव्यय, अवस्थित है या अनेक भूत वर्तमान भावी परिणामो के योग्य है ? हे सोमिल ! मै एक भी हू, दो भी हू यावत् अनेक भूत वर्तमान भावी परिणामो के योग्य भी हू । अहो भगवन् ! इसका क्या कारण ? हे सोमिल ! मै द्रव्य से एक हू, ज्ञान दर्शन रूप से दो हू । आत्मप्रदेश की अपेक्षा अक्षय, अव्यय, अवस्थित हू, उपयोग की अपेक्षा अनेक भूत वर्तमान भावी तीनो ही काल मे

परिणामों के योग्य हू ।

इस प्रकार भगवान् से अपने प्रश्नो का उत्तर सुन कर सोमिल ब्राह्मण प्रतिबोध को प्राप्त हुए । भगवान् को वन्दना नमस्कार कर श्रावक के बारह व्रत अगीकार किये । बहुत वर्षो तक श्रावकपना पाल कर वहा से काल कर देवलोक मे उत्पन्न होंगे और वहां से चवकर महाविदेह क्षेत्र में मनुष्य के भव में दीक्षा लेकर सभी कर्मो का क्षय कर मोक्ष जायेगे ।

३०. बारह द्वार का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक उन्नीसवां, उद्देशा दसवां, शतक बीसवां, उद्देशा पहला)

बारह द्वारों के नाम इस प्रकार है– १ स्याद्द्वार, २ लेश्याद्वार, ३ दृष्टिद्वार, ४ ज्ञानद्वार, ५ योगद्वार, ६ उपयोगद्वार, ७ किमाहारद्वार, ८ प्राणातिपातादिद्वार, ९ उत्पादद्वार, १० स्थितिद्वार, ११ समुद्घातद्वार, १२ उद्वर्तनाद्वार ।

१– स्याद्द्वार– अहो भगवन् ! क्या दो तीन चार पांच पृथ्वीकायिक जीव इकट्ठे होकर एक साधारण शरीर बाधते है, बांधने के बाद आहार करते हैं, पीछे परिणमाते हैं और उसके बाद शरीर का बध करते हैं ? हे गौतम ! ऐसा नहीं करते है, क्योकि पृथ्वीकायिक जीव प्रत्येक आहारी (अलग अलग आहार करने वाले) है और प्रत्येक परिणामी (अलग अलग परिणमाने वाले) है । इसलिए वे अलग अलग शरीर बांधते है, फिर आहार करते हैं,

परिणमाते है और अपना अपना शरीर बाधते है । *

२-लेश्याद्वार— अहो भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवो मे कितनी लेश्याए होती है ? हे गौतम ! चार लेश्या होती है— कृष्ण, नील, कापोत और तेजोलेश्या ।

३- दृष्टिद्वार— क्या पृथ्वीकायिक जीव सम्यग्दृष्टि है या मिथ्यादृष्टि है या सम्यग्मिथ्यादृष्टि (मिश्रदृष्टि) है ? हे गौतम ! पृथ्वीकायिक जीव सम्यग्दृष्टि नहीं है, मिश्रदृष्टि नहीं है किन्तु मिथ्यादृष्टि है ।

---

* *क्या कदाचित् अनेक पृथ्वीकायिक मिलकर साधारण शरीर बाधते है, इसके बाद विशेष आहार करते है, परिणमाते है और पीछे शरीर का विशेष बन्ध करते है ? यह प्रश्न है। इसका आशय यह है कि सामान्य रूप से सब ससारी जीवो को प्रतिसमय निरन्तर आहारग्रहण (पुद्गलग्रहण) होता है, इसलिए प्रथम सामान्य शरीरबध के समय भी आहार तो चालू ही है तथापि पहले शरीर बाधने का और पीछे आहार करने का जो प्रश्न किया गया है वह विशेष आहार की अपेक्षा से जानना चाहिए। जीव उत्पत्तिसमय मे प्रथम ओज-आहार करता है, पीछे शरीर स्पर्श द्वारा लोम-आहार करता है, उसे परिणमाता है और उसके बाद मे विशेष विशेष शरीरबध करता है, यह प्रश्न है।*

इसके उत्तर मे कहा गया है कि पृथ्वीकायिक जीव अलग अलग आहार करते है और अलग अलग परिणमाते है, इसलिए वे अलग अलग शरीर बाधते हैं, साधारणशरीर नहीं बाधते हैं। इसके बाद वे विशेष आहार, विशेष परिणाम और विशेष शरीरबध करते हैं।

४- ज्ञानद्वार-- अहो भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव ज्ञानी है या अज्ञानी है ? हे गौतम ! वे ज्ञानी नहीं, अज्ञानी है, उनको नियमा (अवश्य) दो अज्ञान होते है-- मति-अज्ञान, श्रुत-अज्ञान ।

५- योगद्वार-- अहो भगवन् ! क्या पृथ्वीकायिक जीव मनयोगी है या वचनयोगी है या काययोगी है ? हे गौतम ! वे मनयोगी नहीं है, वचनयोगी नहीं हैं, काययोगी हैं ।

६- उपयोगद्वार-- अहो भगवन् ! क्या पृथ्वीकायिक जीव साकार (ज्ञान) उपयोगी है या निराकार (दर्शन) उपयोगी है ? हे गौतम ! पृथ्वीकायिक जीव साकारोपयोगी भी है और निराकारोपयोगी भी हैं ।

७- किमाहारद्वार-- + अहो भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव कैसा आहार करते है ? हे गौतम ! द्रव्य से अनन्तप्रदेशी पुद्गलो का आहार करते है, क्षेत्र से असख्यात आकाश प्रदेशो मे रहे हुए पुद्गलो का आहार करते है, काल से जघन्य, मध्यम या उत्कृष्ट स्थिति वाले पुद्गलों का आहार करते है और भाव से वर्ण गन्ध रस स्पर्श वाले पुद्गलस्कन्धो का आहार करते है । व्याघात की अपेक्षा कदाचित् तीन दिशा का, कदाचित् चाार दिशा का और कदाचित् ५ दिशा का आहार लेते है, निर्व्याघात की अपेक्षा नियमा छह दिशा का आहार लेते है ।

अहो भगवन् ! क्या पृथ्वीकायिक जीव जो आहार करते है,

+ किमाहार का खुलासा श्री पन्नवणासूत्र के थोकडों के तीसरा भाग में है। (श्री पन्नवणासूत्र के २८ वें पद का पहला उद्देशा)।

उसका चय (सग्रह) होता है ? चय हुए आहार का असार भाग बाहर निकलता है और सार भाग इन्द्रियपने परिणमता है ? हा, गौतम ! चय होता है यावत् सार भाग इन्द्रियपने परिणमता है । अहो भगवन् ! क्या उन जीवो को 'मै आहार करता हू' इस प्रकार की सज्ञा, प्रज्ञा, मन और वचन होता है ? हे गौतम ! उन जीवो को इस प्रकार की सज्ञा, प्रज्ञा, मन, वचन नहीं होता है, तो भी वे आहार तो करते ही है ।

अहो भगवन् ! क्या उन जीवो को 'हम इष्ट या अनिष्ट स्पर्श का अनुभव करते है' ऐसी सज्ञा, प्रज्ञा, मन, वचन होता है ? हे गौतम ! सज्ञा, प्रज्ञा, मन, वचन नहीं होता तो भी अनुभव तो करते ही हैं ।

८- प्राणातिपातादिद्वार- अहो भगवन् ! क्या पृथ्वीकायिक जीव प्राणातिपात, मृषावाद यावत् मिथ्यादर्शनशल्य, इन अठारह पापस्थानो में रहे हुए है ? हा गौतम ! प्राणातिपात, मृषावाद * यावत् मिथ्यादर्शनशल्य इन अठारह पापस्थानो मे रहे हुए है ।

९- उत्पादद्वार- अहो भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव कहा से आकर उत्पन्न होते है ? हे गौतम ! तिर्यच, मनुष्य और देवो से आकर उत्पन्न होते है । +

१०- स्थितिद्वार- अहो भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवो की स्थिति कितनी है ? हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट २२

** पृथ्वीकायिक जीवो मे वचनादि का अभाव है तथामि मृषावाद आदि की अविरति के कारण वे मृषावाद आदि मे रहे हुए हैं, ऐसा जानना चाहिए।*

+ श्रीपन्नवणासूत्र के थोकडो का प्रथम भाग मे विशेष खुलासा है।

हजार वर्ष की है।

११- समुद्घातद्वार– अहो भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवो मे कितने समुद्घात होते है ? हे गौतम ! तीन समुद्घात होते है– वेदनासमुद्घात, कषायसमुद्घात और मारणान्तिकसमुद्घात ।

अहो भगवन् ! क्या पृथ्वीकायिक जीव मारणान्तिकसमुद्घात करके मरते है या मारणान्तिकसमुद्घात किये बिना मरते है । हे गौतम ! मारणान्तिकसमुद्घात करके भी मरते है और समुद्घात किये बिना भी मरते है ।

१२- उद्वर्तनाद्वार– अहो भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव मर कर कहां जाते है ? हे गौतम ! तिर्यंच और मनुष्य इन दो गति मे जाते है ।

१३- जिस तरह पृथ्वीकाय का कहा, उसी तरह अप्काय का कह देना, किन्तु इतनी विशेषता है कि अप्काय की उत्कृष्ट स्थिति सात हजार वर्ष की ।

१४- जिस तरह पृथ्वीकाय का कहा, उसी तरह अग्निकाय का कह देना चाहिए, किन्तु इतनी विशेषता है कि अग्निकाय के जीव तिर्यंच और मनुष्य मे से आकर उत्पन्न होते है । स्थिति तीन अहोरात्र की है । अग्निकाय से निकल कर तिर्यंच मे ही उत्पन्न होते है , इनके तीन लेश्या होती है ।

१५- जिस तरह अग्निकाय का कहा उसी तरह वायुकाय का कह देना चाहिए, किन्तु इतनी विशेषता है कि वायुकाय की उत्कृष्ट स्थिति तीन हजार वर्ष की होती है । समुद्घात चार होते है ।

१६- जिस तरह पृथ्वीकाय का कहा उसी तरह वनस्पतिकाय का कह देना, किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्त वनस्पतिकायिक जीव इकट्ठे होकर एक साधारण शरीर बाधते है । वनस्पतिकायिक जीव की उत्कृष्ट स्थिति दस हजार वर्ष की होती है । इनका आहार नियमा + छह दिशा का होता है ।

अहो भगवन् ! क्या द्वीन्द्रिय जीव दो तीन चार पाच इकट्ठे होकर साधारण शरीर बाधते है ? इसके बाद आहार करते है ? इसको परिणमाते है ? और पीछे विशिष्ट शरीर बाधते है ? हे गौतम ! यह बात नहीं है, क्योकि द्वीन्द्रिय जीव अलग-अलग आहार करने वाले और उसको भिन्न-भिन्न रूप से परिणमाने वाले होते है । इसलिए वे अलग-अलग शरीर बाधते है और अलग-अलग आहार करते है, अलग-अलग रूप से परिणमाते है और पीछे विशिष्ट शरीर बाधते है ।

१७- तीन विकलेन्द्रिय मे तीन लेश्या पाई जाती है और पचेन्द्रिय मे छह लेश्या पाई जाती है ।

+ वनस्पतिकाय का आहार नियमा छह दिशा का होता है, ऐसा जो कहा गया है, उसका आशय समझ मे नही आता, क्योकि लोकान्त मे रही हुई वनस्पतिकाय को तीन, चार अथवा पाच दिशा का भी आहार सभव है। परन्तु बादर निगोद (बादर साधारण वनस्पतिकाय) की अपेक्षा यदि यह सूत्र हो तो नियमा छह दिशा का आहार घटित्त हो सकता है। क्योकि वह लोक के मध्य भाग मे रही हुई होने के कारण उसको नियमा छह दिशा का आहार होता है।

१८- तीन विकलेन्द्रिय मे दो दृष्टि पाई जाती है– समदृष्टि और मिथ्यादृष्टि । पचेन्द्रिय में तीनो दृष्टि पाई जाती है– समदृष्टि, मिथ्यादृष्टि और मिश्रदृष्टि ।

१९- विकलेन्द्रिय में दो ज्ञान, दो अज्ञान पाये जाते है । पंचेन्द्रिय में चार ज्ञान, तीन अज्ञान पाये जाते हैं ।

२०- विकलेन्द्रिय में दो योग पाये जाते है– काया और वचन का । पंचेन्द्रिय में तीनों योग (मन, वचन और काया के) पाये जाते है ।

२१- तीन विकलेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय मे दो उपयोग पाये जाते हैं– साकारोपयोग, निराकारोपयोग ।

२२- तीन विकलेन्द्रिय और पचेन्द्रिय में नियमा छह दिशा का आहार लेते है ।

२३- तीन विकलेन्द्रिय मे १८ ही पाप पाये जाते है, [illegible] मे १८ पाप की भजना है ।

२४- तीन विकलेन्द्रिय मे मनुष्य और तिर्यंच से आकर उत्पन्न होते है । पचेन्द्रिय मे चारों गति से जाव सर्वार्थसिद्ध तक के आकर उत्पन्न होते है ।

२५- द्वीन्द्रिय की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट १२ वर्ष की, त्रीन्द्रिय की जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट ४९ दिन की, चतुरिन्द्रिय की जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट ६ महीने की, पंचेन्द्रिय की जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट ३३ सागर की है ।

२६- तीन विकलेन्द्रिय मे तीन तीन समुद्घात पाई जाती है । पंचेन्द्रिय में ६ समुद्घात पाई जाती है, मारणान्तिकसमुद्घात

करके समोहिया और असमोहिया दोनो मरण मरते है ।

२७- तीन विकलेन्द्रिय मर कर दो गति मे जाते है– मनुष्यगति और तिर्यंचगति । पचेन्द्रिय मर कर चारो गति मे जाव सर्वार्थसिद्ध तक जाते है ।

२८- अल्पाबोधद्वार– सबसे थोडे पचेन्द्रिय, उससे चतुरिन्द्रिय विशेषाधिक, उससे त्रीन्द्रिय विशेषाधिक, उससे द्वीन्द्रिय विशेषाधिक, उससे तेउकाय असख्यातगुणा, उससे पृथ्वीकाय विशेषाधिक, उससे अप्काय विशेषाधिक, उससे वायुकाय विशेषाधिक, उससे वनस्पतिकाय अनन्तगुणा है ।

३१. अवगाहना के ४४ बोलों की अल्पाबोध का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक उन्नीसवा, उद्देशा तीसरा)

१-अहो भगवन् ! सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त अपर्यात पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय और वनस्पतिकाय की जघन्य और उत्कृष्ट अवगाहना किसकी किससे कम, ज्यादा और विशेषाधिक है ? हे गौतम ! १- सबसे थोडी सूक्ष्म निगोद के अपर्याप्ता की जघन्य अवगाहना, २- उससे सूक्ष्म वायुकाय के अपर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असख्यातगुणी, ३ उससे सूक्ष्म तेउकाय के अपर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असख्यातगुणी, ४-उससे सूक्ष्म अप्काय के अपर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असख्यातगुणी, ५- उससे सूक्ष्म पृथ्वीकाय के अपर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असख्यातगुणी, ६- उससे बादर

वायुकाय के अपर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणी, ७- उससे बादर तेउकाय के अपर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असख्यातगुणी, ८- उससे बादर अप्काय के अपर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असख्यातगुणी, ९- उससे बादर पृथ्वीकाय के अपर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणी, १०- ११- उससे प्रत्येक शरीरी बादर वनस्पतिकाय और बादर निगोद के अपर्याप्ता की जघन्य अवगाहना आपस मे तुल्य, असंख्यातगुणी, १२- उससे सूक्ष्म निगोद के पर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणी, १३- उससे सूक्ष्म निगोद के अपर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, १४- उससे सूक्ष्म निगोद के पर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, १५- उससे सूक्ष्म वायुकाय के पर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असख्यातगुणी, १६- उससे सूक्ष्म वायुकाय के अपर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, १७- उससे सूक्ष्म वायुकाय के पर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, १८- उससे सूक्ष्म तेउकाय के पर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणी, १९- उससे सूक्ष्म तेउकाय के अपर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, २०- उससे सूक्ष्म तेउकाय के पर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, २१- उससे सूक्ष्म अप्काय के पर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असख्यातगुणी, २२- उससे सूक्ष्म अप्काय के अपर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, २३- उससे सूक्ष्म अप्काय के पर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, २४- उससे सूक्ष्म पृथ्वीकाय के पर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणी, २५- उससे सूक्ष्म पृथ्वीकाय के अपर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, २६- उससे सूक्ष्म पृथ्वीकाय के

पर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, * २७- उससे बादर वायुकाय के पर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असख्यातगुणी, २८- उससे बादर वायुकाय के अपर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, २९- उससे बादर वायुकाय के पर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, ३०- उससे बादर तेउकाय के पर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असख्यातगुणी, ३१- उससे बादर तेउकाय के अपर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, ३२- उससे बादर तेउकाय के पर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, ३३- उससे बादर अप्काय के पर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असख्यातगुणी, ३४- उससे बादर अप्काय के अपर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, ३५- उससे बादर अप्काय के पर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, ३६- उससे बादर पृथ्वीकाय के पर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असख्यातगुणी, ३७- उससे बादर पृथ्वीकाय के अपर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, ३८- उससे बादर पृथ्वीकाय के पर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक ३९- उससे बादर निगोद के पर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असख्यातगुणी ४०- उससे बादर निगोद के अपर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक,

---

** पन्द्रहवे बोल से लेकर छब्बीसवे बोल तक १२ बोल चार सूक्ष्म स्थावर के कहे गये है, इसी तरह सत्ताईसवे बोल से लेकर अडतीसवे बोल तक १२ बोल बादर के है। ३९ वे बोल से लेकर ४१ वे बोल तक तीन बोल बादर निगोद के है। ४२ वे बोल से लेकर ४४ वे बोल तक तीन बोल प्रत्येक शरीरी बादर वनस्पतिकाय के है।*

४१- उससे बादर निगोद के पर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, ४२- उससे प्रत्येक शरीरी बादर वनस्पतिकाय के पर्याप्ता की जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणी, ४३- उससे प्रत्येक शरीरी बादर वनस्पतिकाय के अपर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना असंख्यातगुणी, ४४- उससे प्रत्येक शरीरी बादर वनस्पति के पर्याप्ता की उत्कृष्ट अवगाहना असंख्यातगुणी है।

३२. सूक्ष्म बादर का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक उन्नीसवा, उद्देशा तीसरा)

१- अहो भगवन् ! पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय इन पांच काय में सबसे सूक्ष्म कौन है ? हे गौतम ! वनस्पतिकाय सबसे सूक्ष्म है * । चार काया में वायुकाय सूक्ष्म है, तीन काया में तेउकाय सूक्ष्म है, दो काया में अप्काय सूक्ष्म है ।

२- अहो भगवन् ! पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय इन पांच काय मे सबसे बादर कौन है ? हे गौतम ! वनस्पतिकाय सबसे बादर है । चार काय में पृथ्वीकाय सबसे बादर है । तीन काय में अप्काय सबसे बादर है। दो काय में तेउकाय बादर है।

३- अहो भगवन् ! पृथ्वीकाय का शरीर कितना बडा है ? हे गौतम ! सबसे छोटा शरीर सूक्ष्म वनस्पतिकाय का है ।

** सूक्ष्म वनस्पतिकाय की अपेक्षा से वनस्पतिकाय सबसे सूक्ष्म है और प्रत्येक वनस्पति की अपेक्षा सबसे अधिक बादर है।*

उससे सूक्ष्म वायुकाय का शरीर असख्यातगुणा बडा है । उससे सूक्ष्म तेउकाय का शरीर असख्यातगुणा बडा है । उससे सूक्ष्म अप्काय का शरीर असख्यातगुणा बडा है । उससे सूक्ष्म पृथ्वीकाय का शरीर असख्यातगुणा बडा है । उससे बादर वायुकाय का शरीर असख्यातगुणा बडा है । उससे बादर तेउकाय का शरीर असख्यातगुणा बडा है । उससे बादर अप्काय का शरीर असख्यातगुणा बडा है । उससे बादर पृथ्वीकाय का शरीर असख्यातगुणा बडा है ।

४- अहो भगवन् ! पृथ्वीकाय के शरीर की कितनी बडी अवगाहना है ? हे गौतम ! जिस प्रकार चक्रवर्ती सम्राट की चन्दन घिसने वाली दासी, जो तीसरे चौथे आरे में उत्पन्न हुई हो, जवान बलवान् नीरोग और स्वस्थ तथा चतुर हो और वज्र हीरे को चिमटी से मसल कर चूर्ण करने वाली हो । वह चूर्ण पीसने की वज्रशिला पर वज्र के लोढे (पत्थर) से पृथ्वीकाय के पिण्ड को २१ बार पीसे तो भी कितने ही पृथ्वीकायिक जीवो का उस शिला और लोढे (बाटने के पत्थर) से मात्र स्पर्श होता है और कितनों ही का स्पर्श भी नहीं होता है कितने ही जीवो का सघट्टा (सघर्ष) होता है और कितनो ही का सघट्टा भी नहीं होता । कितनो ही को पीडा होती है और कितनो ही को पीडा भी नहीं होती है । कितनेक मर जाते है और कितनेक नहीं मरते । कितनेक पीसे जाते है और कितनेक नहीं पीसे जाते । पृथ्वीकाय की इतनी सूक्ष्म अवगाहना है ।

५- अहो भगवन् ! जब पृथ्वीकाय के जीव दबते है तो उन्हे कैसी पीडा का अनुभव होता है ? हे गौतम ! जिस प्रकार

कोई कला मे पारंगत बलवान् जवान पुरुष किसी जीर्ण शरीर वाले, दुर्बल रोगी बूढे आदमी के सिर पर अपने दोनो हाथों से चोट मारे तो हे गौतम ! उस बूढे को कैसी पीडा होती है ? अहो भगवन् ! अत्यन्त अनिष्ट अप्रिय पीडा होती है। हे गौतम ! इसी तरह जब पृथ्वीकाय के जीव पैर आदि के नीचे दबते है तब उनको उस बूढे पुरुष की अपेक्षा अधिक अनिष्ट, अप्रिय और अमनोज्ञ (अनगमती) पीडा होती है ।

जिस प्रकार पृथ्वीकाय की पीडा का कहा, उसी प्रकार अप्काय, तेउकाय वायुकाय और वनस्पतिकाय की पीडा का भी कह देना चाहिए । पांचो स्थावर इस प्रकार की पीडा का अनुभव करते है ।

३३. दस दिशाओं का थोकड़ा

(भगवतीसूत्र, शतक दसवां, उद्देशा पहला)

१- अहो भगवन् ! दिशाएं कितनी कही गई है ? हे गौतम ! दिशाएं दस कही गई है– १ पूर्व, २ पूर्व-दक्षिण (अग्निकोण), ३ दक्षिण, ४ दक्षिण-पश्चिम (नैऋतकोण), ५ पश्चिम, ६ पश्चिम-उत्तर (वायव्यकोण), ७ उत्तर, ८ उत्तर-पूर्व (ईशानकोण) ९ ऊर्ध्वदिशा, १० अधोदिशा ।

२- अहो भगवन् ! इन दिशाओ के क्या-क्या नाम कहे गये है ? हे गौतम ! दस दिशाओ के नाम इस प्रकार है –

इदा अग्गेयी जमा य नेरई वारुणी य वायव्वा ।
सोमा ईसाणी य विमला य तमा य बोद्धव्वा ।।

अर्थ- १ * इदा-ऐन्द्री (पूर्व), २ अग्गेयी-आग्नेयी (अग्निकोण), ३- जमा-याम्या (दक्षिण), ४ नेरई-नैऋती (नैऋतकोण), ५- वारुणी (पश्चिम), ६ वायव्वा-वायव्य (वायव्यकोण), ७ सोमा (उत्तर), ८ ईसाणी-ऐशानी (ईशानकोण), ९ विमला (ऊर्ध्वदिशा), १० तमा (अधोदिशा) ।

३- अहो भगवन् ! ये दस दिशाए कहा से निकली है ? हे गौतम ! मेरु पर्वत के मध्य भाग से निकली है अर्थात् १८०० योजन का यह तिर्च्छालोक है। इसके बीच मे और मेरुपर्वत के भी ठीक मध्यभाग मे ८ रुचक प्रदेश है, चार ऊपर की तरफ है और चार नीचे की तरफ है । यहा से दस दिशाए निकली है– पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण ये चार दिशाए दो-दो प्रदेशी निकली है और आगे दो-दो प्रदेश की वृद्धि होती हुई लोकान्त या अलोक मे चली गई है । लोक मे असख्यात प्रदेश वृद्धि हुई है और अलोक मे अनन्त प्रदेश वृद्धि हुई है।

इनका आकार गाडी के ओढण (झूसण) या अगुली के बेडुक के समान है । अग्निकोण, नैऋतकोण, वायव्यकोण, ईशानकोण ये चार विदिशाए एक एक प्रदेशी निकली है और

---

* *पूर्वदिशा का स्वामी इन्द्र है, इसलिए इसका नाम–इदा (ऐन्द्री) कहा गया है। इसी प्रकार अग्नि, यम, नैऋति, वरुण, वायु, सोम और ईशान देव स्वामी है, इसलिए इन दिशाओ के आग्नेयी आदि गुणनिष्पन्न नाम कहे गये है। प्रकाशयुक्त होने से ऊर्ध्वदिशा को विमला और अन्धकारयुक्त होने से अधोदिशा को 'तमा' कहा गया है।*

लोकान्त तक चली गई हैं, इनका आकार मोतियों की लड के समान है । ऊर्ध्वदिशा और अधोदिशा चार-चार प्रदेशी निकली है और लोकान्त तक या अलोक में चली गई है ।

४- अहो भगवन्! पूर्वदिशा में क्या जीव है, या जीव का देश है, या जीव का प्रदेश है ? अजीव है, या अजीव का देश है, या अजीव का प्रदेश है ? हे गौतम! जीव है, जीव का देश है, जीव का प्रदेश है, अजीव है, अजीव का देश है, अजीव का प्रदेश है । अहो भगवन्! जीव है तो क्या एकेन्द्रिय है, द्वीन्द्रिय हैं, त्रीन्द्रिय हैं, चतुरिन्द्रिय हैं, पंचेन्द्रिय हैं, अनिन्द्रिय हैं ? हे गौतम! एकेन्द्रिय भी हैं यावत् अनिन्द्रिय भी हैं । इन छह के देश भी हैं और इन छह के प्रदेश भी हैं । ये जीव संबंधी १८ भांगे हुए । अहो भगवन्! अजीव है तो क्या धर्मास्तिकाय का देश है या प्रदेश है ? अधर्मास्तिकाय का देश है या प्रदेश है ? आकाशास्तिकाय का देश है या प्रदेश है ? हे गौतम! धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय का एक, एक देश है और बहुत, बहुत प्रदेश हैं । ये ६ भागे हुए और सातवां अद्धासमय, ये ७ भागे अरूपी अजीव के हुए । स्कन्ध, देश, प्रदेश, परमाणु ये चार भागे रूपी अजीव (पुद्गल) के हुए । ये अजीव के ११ भागे हुए । जीव के १८ और अजीव के ११ , ये सब मिला कर २९ भांगे हुए । चारों ही दिशा मे उनतीस-उनतीस भांगे कह देना ।

चारो ही विदिशा में अडतीस-अडतीस भागे कहना । भागे इस तरह से है– १ सव्वे वि ताव हुज्जा एगिंदिय देसा, (बहुत एकेन्द्रिय जीव के बहुत देश), १ बहुत एकेन्द्रिय जीवों के बहुत देश

और एक द्वीन्द्रिय जीव का एक देश, २ बहुत एकेन्द्रिय जीव के बहुत देश और एक द्वीन्द्रिय जीव के बहुत देश, ३ बहुत एकेन्द्रिय जीवो के बहुत देश और बहुत द्वीन्द्रिय जीवों के बहुत देश । इस तरह त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पचेन्द्रिय और अनिन्द्रिय के तीन-तीन भागे कह देना, ये देश सबधी १६ भागे हुए ।

अब प्रदेश संबंधी ११ भागे कहे जाते हैं– १ सव्वे वि ताव हुज्जा एगिंदिय पएसा (बहुत एकेन्द्रिय जीवो के बहुत प्रदेश), १ बहुत एकेन्द्रिय जीवो के बहुत प्रदेश और एक द्वीन्द्रिय जीव के बहुत प्रदेश, २ बहुत एकेन्द्रिय जीवो के बहुत प्रदेश और बहुत द्वीन्द्रिय जीवो के बहुत प्रदेश, इसी तरह त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पचेन्द्रिय, अनिन्द्रिय के दो-दो भागे कह देना, ये ११ भागे हुए । देश संबंधी १६ भांगे और प्रदेश संबंधी ११ भागे, ये सब मिलाकर जीव सबधी २७ भागे हुए । जिस तरह दिशा मे अजीव सबधी ११ भांगे कहे, उसी तरह विदिशा मे भी कह देना । इस तरह जीव के २७ और अजीव के ११ ये सब मिला कर के ३८ भागे हुए । चारो विदिशा मे अडतीस, अडतीस भागे कह देना । ऊर्ध्वदिशा में भी ३८ भागे कह देना और अधोदिशा में ३७ (अद्धासमय को छोड कर) भांगे कह देना ।

श्री भगवती जी सूत्र के ग्यारहवे शतक के दसवे उद्देशे मे तीन लोक मे चार प्रदेशो के भांगो का थोकडा चलता है सो कहते हैं–

जिस तरह पूर्वदिशा मे २९ भागे कहे उसी तरह समुच्चय लोक, अधोलोक और तिर्च्छालोक मे उनतीस-उनतीस भागे कह

देना । ऊर्ध्वलोक मे अट्ठाईस (काल को छोड कर) भागे कहना ।

समुच्चय लोक के एक आकाशप्रदेश पर भागा पावे ३२ (११ देश का, १२ प्रदेश का, ९ अजीव का)– १ सव्वे वि ताव हुज्जा एगिदिय देसा । १ बहुत एकेन्द्रिय जीवो के बहुत देश, एक द्वीन्द्रिय जीव का एक देश, २ बहुत एकेन्द्रिय जीवो के बहुत देश, बहुत द्वीन्द्रिय जीवो के बहुत देश । इसी तरह त्रीन्द्रिय के २, चतुरिन्द्रिय के २, पंचेन्द्रिय के २, अनिन्द्रिय के २, ये ११ भागे देश सबधी हुए । १ सव्वे वि ताव हुज्जा एगिदिय पएसा । १ बहुत एकेन्द्रिय जीवों के बहुत प्रदेश, एक द्वीन्द्रिय जीव के बहुत प्रदेश, २ बहुत एकेन्द्रिय जीवों के बहुत प्रदेश, बहुत द्वीन्द्रिय जीवो के बहुत प्रदेश । इसी तरह त्रीन्द्रिय के २, चतुन्द्रिय के २, पंचेन्द्रिय के २ भागे कह देना । अनिन्द्रिय के ३ भागे– १ बहुत एकेन्द्रिय जीवो के बहुत प्रदेश, एक अनिन्द्रिय का १ प्रदेश. २ बहुत एकेन्द्रिय जीवों के बहुत प्रदेश, एक अनिन्द्रिय के बहुत प्रदेश, ३ बहुत एकेन्द्रिय जीवो के बहुत प्रदेश, बहुत अनिन्द्रिय जीवो के बहुत प्रदेश, ये प्रदेश सबंधी १२ भागे हुए ।

धर्मास्तिकाय का स्कन्ध नहीं है, २ धर्मास्तिकाय का एक देश है, एक प्रदेश है। ३ अधर्मास्तिकाय का स्कन्ध नहीं है, ४ अधर्मास्तिकाय का एक देश है, एक प्रदेश है, ५ अद्धासमय है, ये ५ अरूपी के और १ स्कन्ध, २ देश, ३ प्रदेश, ४ परमाणु , ये चार रूपी के, कुल ९ भागे अजीव के हुए । ११ देश के, १२ प्रदेश के, ९ अजीव के ये सब मिला कर ३२ भागे हुए । ३२ भागे समुच्चय लोक के आकाशप्रदेश में, ३२ भांगे अधोलोक के आकाशप्रदेश मे,

३२ भागे तिर्च्छालोक के आकाशप्रदेश मे और ३१ भांगे (अद्धासमय को छोड कर) ऊर्ध्वलोक के आकाशप्रदेश मे है । ये कुल १२७ भांगे हुए ।

भगवतीसूत्र के १६ वे शतक के आठवे उद्देशे मे २१० चरमान्त के भागे का थोकडा चलता है सो कहते है –

७ नारकी, १२ देवलोक, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर विमान, १ इसीपब्भारापुढवी (ईषत्प्राग्भारापृथ्वी), १ लोक, इन ३५ बोलो के ऊपर का चरमान्त, नीचे का चरमान्त, चारो दिशाओ का चरमान्त, ये २१० (३५ X ६ = २१०) बोल हुए ।

रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊपर के चरमान्त मे भागा पावे ३८ (विदिशा मे कहे सो कह देना) शेष छह नारकी के ऊपर के चरमान्त मे, ७ नारकी के नीचे के चरमान्त मे, १२ देवलोको के ऊपर और नीचे के चरमान्त मे, इन ३७ बोलो मे (६ + ७ + २४ = ३७) भागा पावे । तेतीस तेतीस, (१२ देश के, ११ प्रदेश के, १० अजीव के) । १ सव्वे वि ताव हुज्जा एगिदिय देसा, १ बहुत एकेन्द्रिय जीवो के बहुत देश, एक द्वीन्द्रिय का एक देश, बहुत एकेन्द्रिय जीवों के बहुत देश, बहुत द्वीन्द्रिय जीवो के बहुत देश, इसी तरह त्रीन्द्रिय के २ भागे और चतुरिन्द्रिय के २ भागे कह देना । पंचेन्द्रिय के ३ भागे कहना– १ बहुत एकेन्द्रिय जीवो के बहुत देश, एक पचेन्द्रिय का एक देश, २ बहुत एकेन्द्रिय जीवो के बहुत देश, एक पचेन्द्रिय के बहुत देश ३ बहुत एकेन्द्रिय जीवो के बहुत देश, बहुत पचेन्द्रिय जीवों के बहुत देश । अनिन्द्रिय के २ भागे – एक बहुत एकेन्द्रियो के बहुत देश, एक अनिन्द्रिय का एक देश , २

बहुत एकेन्द्रियो के बहुत देश, बहुत अनिन्द्रियों के बहुत देश । ये देशसंबधी १२ भांगे हुए । १ सव्वे वि ताव हुज्जा एगिदिया पएसा, १ बहुत एकेन्द्रिय जीवो के बहुत प्रदेश, १ द्वीन्द्रिय के बहुत प्रदेश, २ बहुत एकेन्द्रिय जीवो के बहुत प्रदेश, बहुत द्वीन्द्रिय जीवों के बहुत प्रदेश । इसी तरह त्रीन्द्रिय के २, चतुरिन्द्रिय के २, पचेन्द्रिय के २ और अनिन्द्रिय के २, ये प्रदेश सबंधी ११ भागे हुए । जिस तरह अजीव संबधी पूर्वदिशा के ११ भागे कहे, उनमे से काल को छोड कर बाकी १० भागे कह देना । ये ३३ (१२ + ११ + १० = ३३) भागे हुए ।

९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर विमान, १ इसिपब्भारापुढवी, इन १५ के ऊपर का चरमान्त और नीचे का चरमान्त, ये ३० और १ लोक के नीचे का चरमान्त, इन ३१ बोलो मे बोल पावे बत्तीस-बत्तीस (११ देशसंबधी, ११ प्रदेशसबंधी, १० अजीवसंबधी) । जिस तरह ऊपर ३७ बोलो मे ३३ भागे कहे है, उसी तरह कह देना किन्तु 'एक पचेन्द्रिय के बहुत देश' यह भागा नहीं कहना ।

ऊर्ध्वलोक के चरमान्त मे भागा पावे २८ (९ देश के, ९ प्रदेश के, १० अजीव के) – १ सव्वे वि ताव हुज्जा एगिदिय अणिंदिय देसा, १ बहुत एकेन्द्रिय बहुत अनिन्द्रिय जीवो के बहुत देश, एक द्वीन्द्रिय का एक देश, २ बहुत एकेन्द्रिय बहुत अनिन्द्रिय जीवो के बहुत देश, बहुत द्वीन्द्रिय जीवो के बहुत देश । इसी तरह त्रीन्द्रिय के २, चतुरिन्द्रिय के २ और पंचेन्द्रिय के २ भागे कह देना । ये ९ भागे देशसबंधी हुए ।

१ सव्वे वि ताव हुज्जा एगिदिय अणिदिय पएसा, १ बहुत

एकेन्द्रिय बहुत अनिन्द्रिय के बहुत प्रदेश, एक द्वीन्द्रिय के बहुत प्रदेश, २ बहुत एकेन्द्रिय बहुत अनिन्द्रिय जीवो के बहुत प्रदेश, बहुत द्वीन्द्रिय जीवो के बहुत प्रदेश । इसी तरह त्रीन्द्रिय के २, चतुरिन्द्रिय के २, और पंचेन्द्रिय के २ भांगे कहना । ये प्रदेश के ९ भागे हुए । अजीव के १० भांगे ऊपर ३१ बोलो मे कहे, उस तरह कह देना । ये २८ (९ देश के, ९ प्रदेश के, १० काल के = २८) भागे हुए ।

३५ बोलों के पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण इन चार दिशा के चरमान्त के बोल १४० (३५ X ४ = १४०) मे भांगा पावे छत्तीस-छत्तीस, रत्नप्रभापृथ्वी के ऊपर के चरमान्त मे ३८ भागे कहे, उनमे से काल का एक भागा और * एक अनिन्द्रिय के एक

** पूर्वदिशा का चरमान्त–लोक का अन्तिम भाग विषम एक प्रदेश रूप है। इसलिए उसमे असख्यात प्रदेशावगाही जीव नहीं पाया जा सकता है। किन्तु एक प्रदेश के विषय मे जीव मे देशो का और प्रदेशो का अवगाहन हो सकता है, इसलिए वहा 'जीव के देश और प्रदेश होते है' ऐसा कहा गया है। इसी तरह वहा पुद्गलस्कन्ध, धर्मास्तिकाय आदि के देश और उनके प्रदेश होने से 'अजीव' अजीवदेश और अजीवप्रदेश होते है, ऐसा कहा गया है। जो जीव देश है, उनमे पृथ्वीकायादि एकेन्द्रिय जीवो के देश लोकान्त मे अवश्य होते है, यह पहला विकल्प हुवा। दो सयोगी विकल्प इस प्रकार बनते है- १ एकेन्द्रिय के बहुत देश, द्वीन्द्रिय का एक देश। लोकान्त मे द्वीन्द्रिय जीव नहीं होते है किन्तु जो द्वीन्द्रिय जीव मरकर एकेन्द्रिय मे उत्पन्न होने वाला है, जब वह मारणान्तिकसमुद्घात*

देश का एक भांगा ये २ भागे छोड कर बाकी ३६ भागे कह देना।

३५ बोल के ऊपर का चरमान्त और नीचे का चरमान्त, ये ७० बोल और १० दिशा, ३ लोक इन ८३ बोलो मे धर्मास्तिकाय का एक देश, बहुत प्रदेश कहना।

प्रदेशों के ४ बोलो में धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय का एक देश और एक प्रदेश कहना।

१४० बोलो मे (३५ बोल की ४ दिशा मे) धर्मास्तिकाय के बहुत देश, बहुत प्रदेश कहना।

करके उत्पत्तिस्थान को प्राप्त होता है, इस अपेक्षा से यह विकल्प बनता है। इस प्रकार दसवें शतक के प्रथम उद्देशे मे आग्नेयीदिशा के विषय मे भागे कहे है, वे यहां पर भी जान लेना चाहिए। वे इस प्रकार है- १ सव्वे वि ताव हुज्जा एगिंदिय देसा १ बहुत एकेन्द्रिय जीवो के बहुत देश, एक द्वीन्द्रिय जीव का एक देश। २ अथवा बहुत एकेन्द्रिय जीवो के बहुत देश, बहुत द्वीन्द्रिय जीवो के बहुत देश। अथवा ३ बहुत एकेन्द्रियो जीवो के बहुत देश, बहुत द्वीन्द्रिय जीवो के बहुत देश, अथवा ४ बहुत एकेन्द्रिय जीवो के देश, एक त्रीन्द्रिय का एक देश। ५ अथवा बहुत एकेन्द्रिय जीवो के बहुत देश, एक त्रीन्द्रिय जीव का बहुत देश। ६ अथवा बहुत एकेन्द्रिय जीवों के बहुत देश, बहुत त्रीन्द्रिय जीवो के बहुत देश । इसी तरह चतुरिन्द्रिय और पचेन्द्रिय के तीन-तीन भागे जान लेना चाहिए। इसी तरह अनिन्द्रिय के भी भागे कह देना चाहिए किन्तु आग्नेयी दिशा मे तीन भागे कहे है उनमे से पहला भांगा (एकेन्द्रियों के बहुत देश और अनिन्द्रिय का एक देश) यहा नहीं कहना चाहिए क्योंकि

३४. चौबीस ठाणा

१. गति

गतिनामकर्म के उदय से जीव की पर्याय विशेष को गति कहते है, अथवा जीव मरकर भवातर मे जाता है, उसे गति कहते है । वह चार प्रकार की है–

१ नरकगति, २ तिर्यंचगति, ३ मनुष्यगति, ४ देवगति।

२. इन्द्रिय

जीव ज्ञानादि ऐश्वर्य से सम्पन्न है । इसलिये उसे इन्द्र कहते है, उस इन्द्र के चिन्ह को इन्द्रिय कहते है । इन्द्रिय से जीव की पहचान होती है । जैसे स्पर्शनेन्द्रिय से एकेन्द्रिय जीव जाने जाते है । इन्द्रिया ५ है –

१ श्रोत्रेन्द्रिय २ चक्षुरिन्द्रिय ३ घ्राणेन्द्रिय ४ रसनेन्द्रिय

केवलीसमुद्घात मे जब आत्मप्रदेश कपाटाकार होते है, उस समय पूर्वदिशा के चरमान्त मे प्रदेशो की हानि-वृद्धि के द्वारा विषमता होती है। इसलिए लोक के आतरो (कोणो) मे अनिन्द्रिय जीव इन्द्रियो के उपयोग रहित केवलज्ञान के बहुत देशो का सभव है किन्तु एक देश का सभव नहीं है, इसलिए अनिन्द्रिय मे उपरोक्त पहला भागा लागू नहीं होता है।

नोट– भगवतीसूत्र, शतक दसवे का पहिला उद्देशा, ग्यारहवे शतक का दसवा उद्देशा और सोलहवे शतक का आठवां उद्देशा, इन तीनो उद्देशो का १ थोकडा करने का उद्देश्य यह है कि सीखने वाले को सुगम रहे, क्योकि तीनो शतक के भागे प्राय एक माफिक ही है।

५ स्पर्शनेन्द्रिय ।

३. काया

त्रस स्थावर नाम के उदय से जीव जिस पिड मे उत्पन्न हो उसे काया कहते है, काया ६ प्रकार की होती है–

१ पृथ्वीकाय २ अप्काय ३ तेऊकाय ४ वायुकाय ५ वनस्पतिकाय ६ त्रसकाय।

४. योग

मन,वचन,काया की प्रवृत्ति को योग कहते है । वीर्यान्तरायकर्म के क्षयोपशम या क्षय होने पर मन,वचन, काया के निमित्त से आत्मप्रदेशो के चंचल होने को योग कहते है ।

योग १५ प्रकार के हैं–

चार मन के– १ सत्यमनयोग, २ असत्यमनयोग, ३ मिश्रमनयोग, ४ व्यवहारमनयोग ।

चार वचन के– १ सत्यभाषा, २ असत्यभाषा, ३ मिश्रभाषा, ४ व्यवहारभाषा ।

सात काया– १ औदारिककाययोग, २ औदारिकमिश्रकाययोग, ३ वैक्रियकाययोग, ४ वैक्रियमिश्रकाययोग, ५ आहारककाययोग, ६ आहारकमिश्रकाययोग, ७ कार्मणकाययोग ।

५. वेद

नामकर्म के उदय से होने वाले शरीर के स्त्री, पुरुष और नपुंसक रूप चिन्ह को द्रव्यवेद कहते हैं और मोहनीयकर्म के उदय से जीव के विषयभोग की अभिलाषा को भाववेद कहते है । वेद तीन प्रकार के होते है–

१ स्त्रीवेद, २ पुरुषवेद, ३ नपुसकवेद ।

६ कषाय

क्रोधादि रूप आत्मा के विभावपरिणामो को कषाय कहते हैं । कषाय २५ प्रकार के है–

१६ कषाय– अनतानुबन्धि १ क्रोध, २ मान, ३ माया, ४ लोभ । अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ । प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ। सज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ, ये चार चतुष्क ।

नव नोकषाय– १ हास्य, २ रति, ३ अरति, ४ भय, ५ शोक, ६ जुगुप्सा, ७ स्त्रीवेद, ८ पुरुषवेद, ९ नपुसकवेद। कुल १६ कषाय और नव नोकषाय = २५ कषाय ।

७ ज्ञान

किसी विवक्षित पदार्थ के विशेष धर्म को विषय करने वाला ज्ञान है । ज्ञान आठ प्रकार का है–

५ ज्ञान– १ मतिज्ञान, २ श्रुतज्ञान, ३ अवधिज्ञान, ४ मन पर्यायज्ञान, ५ केवलज्ञान ।

३ अज्ञान– १ मति-अज्ञान, २ श्रुत-अज्ञान, ३ विभंग-ज्ञान ।

८ संयम

मन,वचन,काया का नियमन करना अर्थात् इनकी प्रवृत्ति मे यतना करना सयम है । असयम से होने वाले आस्रवो को रोकना संयमधर्म है । सयम ७ प्रकार का है – १ असयम, २ संयमासयम, ५ चरित्र–सामायिकचारित्र, छेदोपस्थापनीयचारित्र,

परिहारविशुद्धचारित्र, सूक्ष्मसंपरायचारित्र , यथाख्यातचारित्र ।

९. दर्शन

जिसमें विवक्षित पदार्थ का सामान्य प्रतिभास हो, उसे दर्शन कहते है । दर्शन के ४ भेद है–

१ चक्षुदर्शन २ अचक्षुदर्शन ३ अवधिदर्शन ४ केवलदर्शन ।

१०. लेश्या

योग को प्रवृत्ति से उत्पन्न आत्मा के शुभाशुभ परिणाम को लेश्या कहते है अथवा योग और संक्लेश से अनुगत आत्मा का परिणामविशेष। लेश्या ६ प्रकार की है–

१ कृष्णलेश्या २ नीललेश्या ३ कापोतलेश्या ४ तेजोलेश्या ५ पद्मलेश्या ६ शुक्ललेश्या ।

११. भव्य

जिस जीव में मोक्षगमन की योग्यता हो, वह भव्य है और जिसमे मोक्षगमन की योग्यता न हो, वह अभव्य है ।

१२. संज्ञी

जिसके मन होता है, वह सज्ञी तथा जिसके मन नहीं, वह असज्ञी है ।

१३. समकित

वीतराग एवम् वीतरागप्ररूपित तत्त्वों पर आस्था होना सम्यग्दर्शन है ।

समकित ७ प्रकार के है –

१ मिथ्यात्व, २ सास्वादन, ३ मिश्र, ४ उपशम, ५

क्षायोपशम, ६ वेदकसम्यकत्व और ७ क्षायिक ।

१४ आहारक

शरीर नामकर्म के उदय से वचन और द्रव्यमन रूप बनने योग्य नोकर्मवर्गणा का जो ग्रहण होता है, उसे आहार कहते है । ३ शरीर और ६ पर्याप्तियो के योग्य पुद्गलो के ग्रहण को आहार कहते है । जब जीव आहार ग्रहण नहीं करता तब अनाहारक होता है ।

१५. गुणस्थान

मोह के क्षय, उपशम, क्षयोपशम और योग के निमित्त से सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यक्चारित्र रूप आत्मा के गुणो की तारतम्य रूप अवस्थाविशेष को गुणस्थान कहते है ।

गुणस्थान १४ प्रकार के है – १ मिथ्यात्वगुणस्थान, २ सास्वादनगुणस्थान, ३ मिश्रगुणस्थान, ४ अविरतसम्यग्दृष्टिगुणस्थान, ५ देशविरत सम्यग्दृष्टि (श्रावक) गुणस्थान, ६ प्रमत्तसयतगुणस्थान, ७ अप्रमत्तसयतगुणस्थान, ८ अपूर्वकरणगुणस्थान, ९ अनिवृत्ति-बादरगुणस्थान, १० सूक्ष्मसपरायगुणस्थान, ११ उपशान्त-मोहनीयगुणस्थान, १२ क्षीणमोहनीयगुणस्थान, १३ सयोगीकेवली-गुणस्थान, १४ अयोगीकेवलीगुणस्थान।

१६ जीव

जो द्रव्यप्राण--इन्द्रियबल, आयु, श्वासोच्छ्वास और भावप्राण (ज्ञान दर्शन आदि स्वाभाविक गुण) से जीता है और जीयेगा उसे जीव कहते है । जीव १४ प्रकार के होते हैं–

सूक्ष्म एकेन्द्रिय का अपर्याप्ता पर्याप्ता, बादर एकेन्द्रिय का

अपर्याप्ता पर्याप्ता, द्वीन्द्रिय का अपर्याप्ता पर्याप्ता, त्रीन्द्रिय का अपर्याप्ता पर्याप्ता, चतुरिन्द्रिय का अपर्याप्ता पर्याप्ता, असंज्ञी पंचेन्द्रिय का अपर्याप्ता पर्याप्ता, संज्ञी पंचेन्द्रिय का अपर्याप्ता पर्याप्ता ।

१७ पर्याप्ति

आहारादि पुद्गलो का ग्रहण करने तथा उन्हे परिणमाने की आत्मा की शक्तिविशेष को पर्याप्ति कहते है । पर्याप्ति ६ प्रकार की है–

१ आहारपर्याप्ति २ शरीरपर्याप्ति ३ इन्द्रियपर्याप्ति ४ श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति ५ भाषापर्याप्ति ६ मनपर्याप्ति ।

१८ प्राण

जीव के आधारभूत पदार्थों को अर्थात् जिनके सद्भाव से जीव किसी शरीर के साथ बन्धा रहे, उसे प्राण कहते हैं । प्राण १० प्रकार के है–

१ श्रोत्रेन्द्रियबलप्राण २ चक्षुरिन्द्रियबलप्राण, ३ घ्राणेन्द्रियबलप्राण, ४ रसनेन्द्रियबलप्राण, ५ स्पर्शेन्द्रियबलप्राण, ६ मनोबलप्राण, ७ वचनबलप्राण, ८ कायाबलप्राण , ९ श्वासोच्छ्वासबलप्राण, १० आयुष्यबलप्राण ।

१९. सज्ञा

आहारादि की अभिलाषा करना सज्ञा है । संज्ञा ४ प्रकार की है– १ आहारसंज्ञा २ भयसंज्ञा ३ मैथुनसज्ञा ४ परिग्रहसंज्ञा ।

२० उपयोग

ज्ञान, दर्शन मे होती हुई आत्मा की प्रवृत्ति को अथवा

आत्मा के ज्ञान रूप व्यापार को उपयोग कहते है । उपयोग के १२ भेद है – ५ ज्ञान, ३ अज्ञान, ४ दर्शन । मूलत दो भेद– १ साकारोपयोग, २ अनाकारोपयोग।

२१ दृष्टि

तत्त्वविचारणा की रुचि को दृष्टि कहते है । दृष्टि ३ प्रकार की होती है – १ मिथ्यादृष्टि, २ सम्यग्दृष्टि, ३ सम्यग्मिथ्यादृष्टि।

२२ कर्म

जीव के राग-द्वेष आदि परिणाम के निमित्त से कर्मवर्गणा रूप पुद्गलस्कन्ध जीव के साथ क्षीर-नीरवत् बन्ध को प्राप्त होते है , उन्हे कर्म कहते है । कर्म आठ प्रकार के होते है –

१ ज्ञानावरणीयकर्म २ दर्शनावरणीयकर्म, ३ वेदनीयकर्म, ४ मोहनीयकर्म, ५ आयुष्यकर्म, ६ नामकर्म, ७ गोत्रकर्म, ८ अन्तरायकर्म ।

२३ शरीर

जो शीर्ण होने वाला अर्थात् विनाश होने वाला है अथवा आत्मा जिसके द्वारा पूर्वबद्ध कर्मो को भोगता है, उसे शरीर कहते है । शरीर ५ प्रकार का होता है – १ औदारिकशरीर, २ वैक्रियशरीर, ३ आहारकशरीर, ४ तैजसशरीर, ५ कार्मणशरीर ।

२४ हेतु

मिथ्यात्व आदि जिन वैभाविक परिणामो से (कर्मजन्य आत्मा के परिणाम से) कर्मयोग्य पुद्गल कर्म रूप मे परिणत हो जाते है, उन वैभाविक परिणामो को हेतु कहते है । हेतु ५७

हैं –

२५ कषाय, १५ योग, १२ अव्रत, ५ मिथ्यात्व = ५७ हेतु ।

चौबीस ठाणा

१ गति, २ इन्द्रिय, ३ काया, ४ योग, ५ वेद, ६ कषाय, ७ ज्ञान, ८ संयम, ९ दर्शन, १० लेश्या, ११ भवी, १२ सन्नी, १३ समकित, १४ आहारक, १५ गुणस्थान, १६ जीव, १७ पर्याप्ति, १८ प्राण, १९ संज्ञा, २० उपयोग, २१ दृष्टि, २२ कर्म, २३ शरीर, २४ हेतु ।

गतिद्वार

गति– गति पावे अपनी अपनी ।

इन्द्रिय– नरकगति, देवगति और मनुष्यगति में इन्द्रिय पावे १ (एक) पंचेन्द्रिय, तिर्यंच गति में इन्द्रिय पावे ५ ही ।

काया– नरक देव मनुष्य गति मे काया पावे त्रसकाया, तिर्यंचगति में काया पावे ६ ही ।

योग– नरकगति, देवगति में योग पावे ११ (४ मन, ४ वचन, ३ काया का) । तिर्यंचगति में योग १३ (आहारक, आहारकमिश्र टला) मनुष्यगति मे योग पावे १५ ।

कषाय– नरकगति में कषाय पावे २३ (स्त्री पुरुष वेद टला), देवगति में कषाय पावे २४, (नपुंसकवेद टला), मनुष्य, तिर्यंचगति मे कषाय पावे २५ ।

ज्ञान– नारक देव तिर्यंचगति मे ज्ञान ६ (३ ज्ञान, ३ अज्ञान) मनुष्य में ८ (५ ज्ञान, ३ अज्ञान) ।

संयम– नरकगति देवगति मे सयम पावे १ (असयम), तिर्यंचगति मे सयम पावे २ (असयम, सयमासयम), मनुष्यगति मे सयम पावे ७ ।

दर्शन– नरकगति, देवगति, तिर्यंचगति मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला) मनुष्यगति मे दर्शन पावे ४ ।

लेश्या– नरकगति मे लेश्या पावे ३ (प्रथम की), तिर्यंचगति, मनुष्यगति देवगति मे लेश्या पावे ६ ही ।

भवी– चारो गति मे भव्य-अभव्य दोनो ही है ।

सन्नी– चारो गति में सन्नी-असन्नी दोनो ही ।

समकित– चारों गति मे सममित पावे ७ ही ।

आहारक– चारो गति मे आहारक, अनाहारक दोनो ही है ।

गुणस्थान– नरकगति, देवगति मे गुणस्थान पावे ४ (प्रथम के) । तिर्यंचगति मे गुणस्थान पावे ५ (प्रथम के), मनुष्यगति मे १४ गुणस्थान है।

जीव– नरकगति, देवगति, मनुष्यगति मे जीव का भेद ३ (सन्नी पचेन्द्रिय का पर्याप्ता, अपर्याप्ता, असन्नी पचेन्द्रिय का अपर्याप्ता), तिर्यंचगति में जीव का भेद पावे १४ ही ।

पर्याप्त– चारो ही गति में पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– चारो ही गति मे प्राण पावे १० ही ।

संज्ञा– चारों ही गति मे सज्ञा पावे ४ ।

उपयोग– नरकगति, देवगति, तिर्यंचगति में उपयोग पावे ९ । (३ ज्ञान, ३ अज्ञान, ३ दर्शन) मनुष्यगति मे उपयोग पावे १२ ही ।

दृष्टि– चारों गति मे दृष्टि पावे ३ ही ।

कर्म– चारों गति मे कर्म पावे ८ ही ।

शरीर– नरकगति, देवगति मे शरीर पावे तीन (वैक्रिय, तैजस, कार्मण) । तिर्यंचगति में शरीर पावे ४ (आहारक टला) मनुष्यगति मे शरीर पावे ५ ही ।

हेतु– नरकगति मे हेतु पावे ५१ । (आहारक, आहारकमिश्र, औदारिक, औदारिकमिश्र, स्त्री पुरुष वेद टला), देवगति मे हेतु ५२ (पूर्वोक्त मे १ वेद बढा), तिर्यचगति मे ५५ (आहारक, आहारकमिश्र टला), मनुष्यगति मे हेतु पावे ५७ ।

इन्द्रियद्वार

गति– एकेन्द्रिय, तीन विकलेन्द्रिय मे गति पावे १ तिर्यंचगति । पंचेन्द्रिय मे गति पावे ४ ही ।

इन्द्रिय– इन्द्रिय पावे अपनी-अपनी ।

काया– एकेन्द्रिय में काया पावे ५ (पृथ्वी, पानी, तेऊ, वायु वनस्पति) । तीन विकलेन्द्रिय, पचेन्द्रिय मे काया पावे १ त्रस ।

योग– एकेन्द्रिय मे योग पावे ५ (औदारिक, औदारिकमिश्र, वैक्रिय , वैक्रियमिश्र, कार्मणयोग) । तीन विकलेन्द्रिय मे योग पावे ४ (औदारिक, औदारिकमिश्र, व्यवहारभाषा, कार्मणयोग), पंचेन्द्रिय मे योग पावे १५ ही ।

वेद– एकेन्द्रिय, तीन विकलेन्द्रिय मे वेद पावे १ नपुंसक वेद । पंचेन्द्रिय में वेद पावे ३ ही ।

कषाय– एकेन्द्रिय और तीन विकलेन्द्रिय मे कषाय पावे २३ (दो वेद टला), पचेन्द्रिय मे कषाय पावे २५ ही ।

ज्ञान– एकेन्द्रिय मे ज्ञान पावे २ (२ अज्ञान), तीन विकलेन्द्रिय मे ज्ञान पावे ४ (२ ज्ञान, २ अज्ञान), पचेन्द्रिय मे ज्ञान पावे ७ (केवलज्ञान टला) ।

सयम– एकेन्द्रिय, तीन विकलेन्द्रिय मे सयम पावे १ (असयम), पंचेन्द्रिय मे सयम पावे ७ ही ।

दर्शन– एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय मे दर्शन पावे १ (अचक्षुदर्शन), चतुरिन्द्रिय मे दर्शन पावे २ (चक्षु-अचक्षुदर्शन), पचेन्द्रिय मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला)।

लेश्या– एकेन्द्रिय मे लेश्या पावे ४ (प्रथम की), तीन विकलेन्द्रिय मे लेश्या पावे ३ (प्रथम की), पचेन्द्रिय मे लेश्या पावे ६ ही ।

भवी– पाचो इन्द्रियो मे भव्य, अभव्य दोनो ।

सन्नी– एकेन्द्रिय और तीन विकलेन्द्रिय असन्नी, पचेन्द्रिय सन्नी, असन्नी दोनो ।

समकित– एकेन्द्रिय मे समकित पावे १ (मिथ्यात्व), तीन विकलेन्द्रिय मे समकित पावे २ (मिथ्यात्व, सास्वादन), पचेन्द्रिय मे समकित पावे ७ ही ।

आहारक– पाचो इन्द्रियो मे आहारक, अनाहारक दोनो ।

गुणस्थान– एकेन्द्रिय मे गुणस्थान पावे १, तीन विकलेन्द्रिय मे गुणस्थान पावे २ (१,२), पचेन्द्रिय मे गुणस्थान पावे १२ ही (१३, १४ टला)।

जीव– एकेन्द्रिय मे जीव का भेद पावे ४ (प्रथम के), द्वीन्द्रिय मे जीव के भेद पावे २ (५, ६ वा), त्रीन्द्रिय मे जीव का भेद पावे २ (७,८ वा), चतुरिन्द्रिय मे जीव का भेद पावे २ (९,१० वा),

पंचेन्द्रिय मे जीव का भेद पावे चार (११, १२, १३, १४ वां) ।

पर्याप्त— एकेन्द्रिय मे पर्याप्ति पावे ४ (प्रथम की), विकलेन्द्रिय मे पर्याप्ति पावे ५, पंचेन्द्रिय मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण— एकेन्द्रिय में प्राण पावे ४, द्वीन्द्रिय मे प्राण पावे ६, त्रीन्द्रिय में प्राण पावे ७, चतुरिन्द्रिय मे प्राण पावे ८, पंचेन्द्रिय मे प्राण पावे १० ही ।

संज्ञा— पांचों इन्द्रियो में संज्ञा पावे ४ ही ।

उपयोग— एकेन्द्रिय मे उपयोग पावे ३ (२ अज्ञान, १ दर्शन), द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय में उपयोग पावे ५, चतुरिन्द्रिय मे उपयोग पावे ६, पंचेन्द्रिय में उपयोग पावे १० ।

दृष्टि— एकेन्द्रिय मे दृष्टि पावे १, तीन विकलेन्द्रिय में दृष्टि पावे २ (मिश्रदृष्टि टली), पंचेन्द्रिय में दृष्टि पावे ३ ही ।

कर्म— पांचों इन्द्रिय में कर्म पावे ८ ही ।

शरीर— एकेन्द्रिय में शरीर पावे ४ (आहारक टला), तीन विकलेन्द्रिय में शरीर पावे ३ (आहारक, वैक्रिय टला), पचेन्द्रिय में शरीर पावे ५ ही ।

हेतु— एकेन्द्रिय मे हेतु पावे ४१ (१० योग, ४ मिथ्यात्व, २ वेद टला), तीन विकलेन्द्रिय में हेतु पावे ४० (११ योग, ४ मिथ्यात्व, २ वेद टला), पंचेन्द्रिय में हेतु पावे ५७ ही ।

कायाद्वार

गति— ५ स्थावर में गति पावे १ (तिर्यंच), त्रसकाया में गति पावे चारों ही ।

इन्द्रिय— ५ स्थावर में इन्द्रिय पावे १ (एकेन्द्रिय), त्रसकाया मे

इन्द्रिय पावे चार (एकेन्द्रिय टली) ।
काया— काया पावे अपनी-अपनी ।
योग— चार स्थावर (वायुकाय को छोडकर) मे योग पावे ३ (औदारिक, औदारिकमिश्र कार्मण), वायुकाय मे योग पावे ५ (पूर्वोक्त ३ एव वैक्रिय, वैक्रियमिश्र बढा) । त्रसकाया मे योग पावे १५ ही .।
वेद— ५ स्थावर मे वेद पावे १ (नपुसक), त्रसकाया मे मे वेद पावे ३ ही ।
कषाय— पाच स्थावर मे कषाय पावे २३ (स्त्री पुरुष वेद टला), त्रसकाया मे कषाय पावे २५ ही ।
ज्ञान— पाच स्थावर मे ज्ञान पावे २ अज्ञान (मति श्रुत अज्ञान), त्रसकाया मे ज्ञान पावे ८ ही ।
संयम— पाच स्थावर मे सयम एक (असयम) त्रसकाया मे सयम पावे ७ ही ।
दर्शन— पाच स्थावर मे दर्शन पावे एक (अचक्षुदर्शन), त्रसकाया मे दर्शन पावे चारो ही ।
लेश्या— पृथ्वी, पानी, वनस्पति मे लेश्या पावे ४(प्रथम की), तेऊकाय मे लेश्या पावे तीन (प्रथम की), त्रसकाया मे लेश्या पावे ६ ही ।
भवी— ६ काया भव्य और अभव्य दोनो ही ।
सन्नी— पाच स्थावर मे असन्नी, त्रसकाया मे सन्नी-असन्नी ।
समकित— पाच स्थावर मे समकित पावे १ मिथ्यात्व , त्रसकाया मे समकित पावे ७ ही ।

आहारक– ६ काया आहारक अनाहारक दोनो ।

गुणस्थान– पांच स्थावर में गुणस्थान पावे १ (मिथ्यात्व), त्रसकाया में गुणस्थान पावे १४ ही ।

जीव– पाच स्थावर मे जीव का भेद पावे ४ (प्रथम के), त्रसकाया मे जीव का भेद पावे १० (५-१४ तक) ।

पर्याप्ति– ५ स्थावर में पर्याप्ति पावे ४ (प्रथम की), त्रसकाया मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– ५ स्थावर मे प्राण पावे ४ (स्पर्शेन्द्रियबलप्राण, कायाबलप्राण, श्वासोच्छ्वासबलप्राण, आयुष्यबलप्राण), त्रसकाया में प्राण पावे १० ही ।

संज्ञा– ६ काया में संज्ञा पावे ४ ही ।

उपयोग– पांच स्थावर में उपयोग पावे ३ (२ अज्ञान, १ दर्शन), त्रसकाया मे उपयोग पावे १२ ही ।

दृष्टि– ५ स्थावर मे दृष्टि पावे १ (मिथ्यादृष्टि), त्रसकाया मे दृष्टि पावे ३ ही ।

कर्म– ६ काया मे कर्म पावे ८ ही ।

शरीर– चार स्थावर में शरीर पावे ३ (औदारिक, तैजस, कार्मण), वायुकाय मे शरीर पावे ४ (वैक्रिय बढा), त्रसकाय मे शरीर पावे ५ ही ।

हेतु– चार स्थावर मे हेतु पावे ३९ (५७ में से १२ योग, ४ मिथ्यात्व, २ कषाय टला), वायुकाय मे हेतु पावे ४१ ही (पूर्वोक्त मे वैक्रिय, वैक्रियमिश्र बढा), त्रसकाया मे ५७ ही हेतु पावे ।

योगद्वार

८ योग (४ मन का, ४ वचन का)

गति– आठ योग मे गति पावे ४ ही ।

इन्द्रिय– सात योग मे इन्द्रिय पावे १ (पचेन्द्रिय),व्यवहारभाषा मे इन्द्रिय पावे ४ (एकेन्द्रिय टला)।

काया– आठ योग मे काया पावे त्रस की ।

योग– आठ योग मे योग पावे १४ (कार्मण टला)।

वेद– आठ योग मे वेद पावे तीनो ही ।

कषाय– आठ योग मे कषाय पावे पच्चीस ही ।

ज्ञान– सत्य के चौक मे ज्ञान पावे आठ ही, असत्य के चौक मे ज्ञान पावे ७ (केवलज्ञान टला) ।

सयम– आठ योग मे सयम पावे सातो ही ।

दर्शन– सत्य के चौक (सत्यमनोयोग, व्यवहारमनोयोग, सत्यभाषा, व्यवहारभाषा) मे दर्शन पावे ४, असत्य के चौक, (असत्यमनोयोग, मिश्रमनोयोग, असत्यभाषा, मिश्रभाषा) मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला)।

लेश्या– आठ योग मे लेश्या पावे ६ ही ।

भवी– आठ योग भव्य अभव्य दोनो ।

सन्नी– ७ योग सन्नी, व्यवहारभाषा सन्नी, असन्नी दोनो ।

समकित– आठ योग मे समकित पावे ७ ही ।

आहारक– आठ योग आहारक है । अनाहारक नहीं ।

गुणस्थान– सत्य के चौक मे गुणस्थान पावे १३ (१४ वा टला), असत्य के चौक मे गुणस्थान पावे १२ (१३-१४ वा टला) ।

जीव– सात योग मे जीव का भेद पावे १ (सन्नी पंचेन्द्रिय का पर्याप्ति), व्यवहारभाषा मे जीव का भेद पावे ५ (द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असन्नी पंचेन्द्रिय, सन्नी पचेन्द्रिय का पर्याप्ता) ।

पर्याप्ति– आठ योग में पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– आठ योग मे प्राण पावे १०' ही ।

संज्ञा– आठ योग मे संज्ञा पावे ४ ही ।

उपयोग– सत्य के चौक मे उपयोग पावे १२ ही, असत्य के चौक मे उपयोग पावे १० (केवलद्विक टला) ।

दृष्टि– आठ योग मे दृष्टि पावे ३ ही ।

कर्म– आठ योग मे कर्म पावे आठों ही ।

शरीर– आठ योग मे शरीर पावे ५ ही ।

हेतु– आठ योग मे हेतु पावे ५६ (कार्मणयोग टला) ।

योगद्वार

(७ योग काया के)

गति– औदारिक, औदारिकमिश्र मे गति पावे २ (मनुष्य, तिर्यंच), वैक्रिय , वैक्रियमिश्र, कार्मणकाय के योग मे गति पावे ४ ही, आहारक, आहारकमिश्र मे गति पावे १ (मनुष्य) ।

इन्द्रिय– औदारिक, औदारिकमिश्र, कार्मण मे इन्द्रिय पावे ५ ही, वैक्रिय, वैक्रियमिश्र मे इन्द्रिय पावे २ (एकेन्द्रिय, पचेन्द्रिय), आहारक, आहारकमिश्र में इन्द्रिय पावे १ (पंचेन्द्रिय) ।

काया– औदारिक, औदारिकमिश्र कार्मण मे काया पावे ६ ही, वैक्रिय, वैक्रियमिश्र में काया पावे दो (वायुकाय, त्रसकाय), आहारक, आहारकमिश्र मे काया पावे १ त्रस ।

योग– ६ योग मे पावे ९ (४ मन, ४ वचन, १ कायायोग पावे अपना-अपना), कार्मण मे १ (कार्मणकाययोग) ।

वेद– औदारिक, औदारिकमिश्र, वैक्रिय, वैक्रियमिश्र, कार्मण मे वेद पावे ३ ही । आहारक, आहारकमिश्र मे वेद पावे २ (पुरुष, नपुसक वेद) ।

कषाय– आहारक, आहारकमिश्र मे कषाय पावे १२ (सज्वलन चतुष्क व नोकषाय मे स्त्रीवेद टला), शेष योग मे कषाय पावे २५ ही ।

ज्ञान– औदारिक, औदारिकमिश्र मे ज्ञान पावे ८ ही, वैक्रिय वैक्रियमिश्र मे ज्ञान पावे ७ (केवलज्ञान टला), आहारक आहारकमिश्र मे ज्ञान पावे ४ (प्रथम के) कार्मणकाययोग मे ज्ञान पावे ७ (मन पर्यायज्ञान टला) ।

सयम– औदारिक मे सयम पावे ७ ही, औदारिकमिश्र मे सयम पावे ५ (परिहारविशुद्ध, सूक्ष्मसम्परायचारित्र टला), वैक्रिय वैक्रियमिश्र मे सयम पावे ४ (प्रथम के ४), आहारक आहारकमिश्र मे सयम पावे २ (सामायिक, छेदोपस्थापनीय), कार्मणकाययोग मे सयम पावे २ (असंयम, यथाख्यात) ।

दर्शन– औदारिक औदारिकमिश्र मे दर्शन पावे ४ ही, वैक्रिय वैक्रियमिश्र, आहारक आहारकमिश्र मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला), कार्मण मे दर्शन पावे ३ (चक्षुदर्शन टला) ।

लेश्या– ७ योग मे लेश्या पावे ६ ही ।

भवी– आहारक, आहारकमिश्र भव्य, शेष योग भव्य अभव्य दोनो ही ।

सन्नी– आहारक, आहारकमिश्र सन्नी, शेष योग सभी सन्नी और असन्नी दोनों ही ।

समकित– औदारिक, वैक्रिय योग मे समकित पावे ७ ही । औदारिकमिश्र, वैक्रियमिश्र, कार्मण में समकित पावे ६ (मिश्र टला) आहारक आहारकमिश्र में समकित पावे ४ (मिथ्यात्व, सास्वादन, मिश्र टला) ।

आहारक– ६ योग आहारक, कार्मणयोग अनाहारक ।

गुणस्थान– औदारिक मे गुणस्थान पावे १३ (प्रथम के), औदारिकमिश्र में गुणस्थान पावे ६ (प्रथम से छठे तक, तीसरा छोडकर), आहारक मे गुणस्थान पावे २ (६-७ गुणस्थान), आहारकमिश्र में गुणस्थान पावे १ (६ वां), कार्मण मे गुणस्थान पावे ४ (१,२,४,१३ गुणस्थान), वैक्रिय मे ७, वैक्रियमिश्र ५ ।

जीव– औदारिक मे जीव का भेद पावे १४ ही, औदारिकमिश्र में जीव का भेद पावे ९ (सात का अपर्याप्त, सन्नी पंचेन्द्रिय का पर्याप्त, एक बादर एकेन्द्रिय का पर्याप्त), वैक्रिय, वैक्रियमिश्र मे जीव का भेद पावे ४ (४, ११, १३, १४), आहारक, आहारकमिश्र में जीव का भेद पावे १ (१४ वा), कार्मण मे जीव का भेद पावे ८ (सात का अपर्याप्त, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय का पर्याप्त) ।

पर्याप्ति– सात योगों मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– ६ योग मे प्राण पावे १० ही, कार्मण में पावे २ (कायबलप्राण आयुष्यबलप्राण) ।

संज्ञा– ७ योग मे सज्ञा पावे ४ ही ।

उपयोग– औदारिक, औदारिकमिश्र मे उपयोग पावे १२ ही, वैक्रिय,

वैक्रियमिश्र मे उपयोग पावे १० (केवलज्ञान, केवलदर्शन टला), आहारक, आहारकमिश्र मे उपयोग पावे ७ (४ ज्ञान, ३ दर्शन), कार्मण मे उपयोग पावे १० (मन पर्यायज्ञान, चक्षुदर्शन टला)।

दृष्टि– औदारिक, वैक्रिय मे दृष्टि पावे ३, औदारिकमिश्र, वैक्रियमिश्र मे दृष्टि पावे २ (मिश्र टली), आहारक, आहारकमिश्र मे दृष्टि पावे १ (सम्यग्दृष्टि), कार्मण मे दृष्टि पावे २ (मिश्रदृष्टि टली) ।

कर्म– सात योग मे कर्म पावे ८ ही ।

शरीर– औदारिक, औदारिकमिश्र, कार्मण मे शरीर पावे ३ (औदारिक, तैजस, कार्मण), वैक्रिय वैक्रियमिश्र मे शरीर पावे ४ (आहारकशरीर टला), आहारक, आहारकमिश्र मे शरीर पावे ४ (वैक्रियशरीर टला) ।

हेतु– औदारिक, औदारिकमिश्र, वैक्रिय, वैक्रियमिश्र मे हेतु पावे ५१ (६ योग टले), आहारक, आहारकमिश्र मे हेतु पावे २१ (१२ कषाय ९ योग), कार्मण मे हेतु पावे ४३ (१४ योग टले) ।

वेदद्वार

गति– पुरुषवेद, स्त्रीवेद मे गति पावे ३ (नरकगति टली), नपुसकवेद मे गति पावे ३ (देवगति टली) ।

इन्द्रिय– पुरुषवेद, स्त्रीवेद मे इन्द्रिय पावे १ (पचेन्द्रिय), नपुसकवेद मे इन्द्रिय पावे ५ ही ।

काया– पुरुषवेद, स्त्रीवेद मे काया पावे १ (त्रस की), नपुसकवेद मे काया पावे ६ ।

योग– पुरुषवेद, नपुसकवेद मे योग पावे १५ । स्त्रीवेद मे योग पावे

१३ (आहारक, आहारकमिश्र टला) ।
वेद– वेद पावे अपना- अपना ।
कषाय– तीनो वेद में कषाय पावे २३, २३ (२ वेद टला) ।
ज्ञान– तीनो वेद मे ज्ञान पावे ७ (केवलज्ञान टला) ।
संयम– स्त्रीवेद मे संयम पावे ४ (प्रथम के ४), पुरुष नपुसक में संयम पावे ५ (छठा सातवा टला) ।
दर्शन– तीनो वेद मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला) ।
लेश्या– तीनो वेद मे लेश्या पावे ६ ही ।
भवी– तीनों वेद मे भव्य, अभव्य दोनो ।
सन्नी– पुरुष स्त्री वेद सन्नी, नपुसक वेद सन्नी, असन्नी दोनो ।
समकित– तीनो वेद मे समकित पावे ७ ही ।
आहारक– तीनो वेद मे आहारक, अनाहारक दोनो ।
गुणस्थान– तीनो वेद में गुणस्थान पावे नौ (प्रथम के) ।
जीव– पुरुषवेद, स्त्रीवेद मे जीव का भेद पावे २ (सज्ञीपंचेन्द्रिय का पर्याप्त, अपर्याप्त) । नपुंसकवेद में जीव का भेद पावे १४ ही ।
पर्याप्ति– तीनो वेद में पर्याप्ति पावे ६ ही ।
प्राण– तीनो वेद मे प्राण पावे १० ही ।
संज्ञा– तीनो वेद मे सज्ञा पावे ४ ही ।
उपयोग– तीनों वेद में उपयोग पावे १० (केवलद्विक टला) ।
दृष्टि– तीनो वेद में दृष्टि पावे ३ ही ।
कर्म– तीनो वेद मे कर्म पावे ८ ही ।
शरीर– पुरुष, नपुसक वेद मे शरीर पावे ५ ही, स्त्रीवेद मे शरीर पावे ४(आहारकशरीर टला) ।

हेतु– स्त्रीवेद मे हेतु पावे ५३ (दो वेद, आहारक, आहारकमिश्र २ योग टला), पुरुष नपुसक वेद मे हेतु पावे पावे ५५ (दो वेद टला) ।

कषायद्वार

(२२ कषाय, ३ वेद को छोडकर)

गति– २२ कषाय मे गति पावे ४ ही ।

इन्द्रिय– २२ कषाय मे इन्द्रिय पावे ५ ही ।

काया– २२ कषाय मे काया पावे ६ ही ।

योग– १२ कषाय मे योग पावे १३ (आहारक, आहारकमिश्र टला), १० कषाय मे योग पावे १५ ही ।

वेद– २२ कषाय मे वेद पावे तीनो ही ।

कषाय– २२ कषाय मे कषाय पावे आप-आपकी ।

ज्ञान– १२ कषाय मे ज्ञान पावे ६ (मनपर्याय केवलज्ञान टला), १० कषाय मे ज्ञान पावे ७ (केवलज्ञान टला) ।

संयम– पहले, दूसरे चतुष्क मे सयम पावे १ (असयम), तीसरे चतुष्क मे सयम २ (असयम, सयमासयम), छ हास्यादिक सज्वलनत्रिक मे सयम पावे ५ (प्रथम के), सज्वलन लोभ मे सयम पावे ६ (यथाख्यातचारित्र टला) ।

दर्शन– २२ कषाय मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला) ।

लेश्या– २२ कषाय में लेश्या पावे ६ ।

भवी– २२ कषाय भवी, अभवी दोनो ।

सन्नी– २२ कषाय सन्नी, असन्नी दोनो ।

समकित– अनन्तानुबन्धीचतुष्क मे समकित पावे २ (मिथ्यात्व,

सास्वादन) अप्रत्याख्यान आदि १८ कषाय में समकित पावे ७ ही ।

आहारक– २२ कषाय आहारक, अनाहारक दोनों ।

गुणस्थान– अनन्तानुबन्धिचतुष्क मे गुणस्थान पावे २ (पहले के), अप्रत्याख्यानावरणचतुष्क में गुणस्थान ४ (पहले के), प्रत्याख्यानावरणचतुष्क में गुणस्थान ५ (प्रथम के), ६ हास्यादिक में गुणस्थान पावे ८, सज्वलनत्रिक मे गुणस्थान पावे ९, सज्वलनलोभ में गुणस्थान पावे १० ।

जीव– २२ कषाय में जीव का भेद पावे १४ ही ।

पर्याप्ति– २२ कषाय मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– २२ कषाय में प्राण पावे १० ही ।

संज्ञा– २२ कषाय में संज्ञा पावे ४ ही ।

उपयोग– १२ कषाय मे उपयोग पावे ९ । १० कषाय में उपयोग पावे १०।

दृष्टि– अनन्तानुबंधिकषाय मे दृष्टि पावे २, शेष १८ कषाय मे दृष्टि पावे ३, तीनो ही ।

कर्म– २२ कषाय में कर्म पावे ८ ही ।

शरीर– १२ कषाय मे शरीर पावे ४ (आहारक टला), १० कषाय में शरीर पावे ५ ही ।

हेतु– १२ कषाय में हेतु पावे ५५ (आहारक, आहारकमिश्र टला), १० कषाय मे हेतु पावे ५७ ही ।

ज्ञानद्वार

गति– ३ ज्ञान ३ अज्ञान मे गति पावे ४ ही, मन पर्यायज्ञान केवलज्ञान मे गति पावे १ (मनुष्य) की ।

इन्द्रिय– २ अज्ञान मे इन्द्रिय पावे ५ ही, २ ज्ञान मे इन्द्रिय पावे ४ (एकेन्द्रिय टली), अवधिज्ञान, विभगज्ञान मन पर्यायज्ञान मे इन्द्रिय पावे १ (पंचेन्द्रिय), केवलज्ञान मे इन्द्रिय पावे नहीं (अनिन्द्रिय) ।

काया– २ अज्ञान मे काया पावे ६ ही, ५ ज्ञान व एक विभगज्ञान मे काया पावे १ (त्रसकाय) ।

योग– ३ अज्ञान मे योग पावे १३ (आहारक, आहारकमिश्र टला), ३ ज्ञान मे योग पावे १५ ही, मन पर्यायज्ञान मे योग पावे १४ (कार्मणकाययोग टला), केवलज्ञान मे योग पावे ५ तथा ७ (सत्यमनोयोग, व्यवहारमनोयोग, सत्यभाषा, व्यवहारभाषा, औदारिक), ७ मे (पूर्वोक्त मे औदारिकमिश्र, कार्मणकाययोग बढा) ।

वेद– ३ अज्ञान, ४ ज्ञान मे वेद पावे ३ ही, केवलज्ञान मे वेद पावे नहीं (अवेदी) ।

कषाय– ३ ज्ञान, ३ अज्ञान मे कषाय पावे २५ ही, मन पर्यायज्ञान मे १३ (प्रथम के ३ चौक टले), केवलज्ञान अकषायी ।

ज्ञान– ज्ञान पावे अपना- अपना ।

सयम– ३ अज्ञान मे १ असंयम, ३ ज्ञान मे सयम पावे ७ ही । मन पर्यायज्ञान मे सयम पावे ५ (प्रथम के २ टले), केवलज्ञान मे सयम पावे १ (यथाख्यातचारित्र) ।

दर्शन– ३ अज्ञान और ४ ज्ञान मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला), केवलज्ञान मे दर्शन पावे १ (केवलदर्शन)

लेश्या– ४ ज्ञान, ३ अज्ञान मे लेश्या पावे ६ ही, केवलज्ञान मे लेश्या पावे १ शुक्ललेश्या ।

भव्य– ३ अज्ञान भव्य अभव्य दोनों, ५ ज्ञान भव्य ।

सन्नी– २ ज्ञान, २ अज्ञान सन्नी-असन्नी दोनो, अवधिज्ञान, मन पर्यायज्ञान, विभंगज्ञान सन्नी, केवलज्ञान (नोसन्नी-नोअसन्नी) ।

समकित– ३ अज्ञान मे समकित पावे २ (१-३), ३ ज्ञान मे समकित पावे ५ (मिथ्यात्व, मिश्र टली), मन·पर्यायज्ञान में समकित पावे ४ (मिथ्यात्व, मिश्र, सास्वादन टली), केवलज्ञान मे समकित पावे १ (क्षायिक समकित) ।

आहारक– मन पर्यायज्ञान आहारक, शेष आहारक, अनाहारक दोनो ।

गुणस्थान– ३ अज्ञान मे गुणस्थान पावे २ (१-३), ३ ज्ञान मे गुणस्थान पावे १० (१, ३, १३, १४ वां ये चार टले), मन पर्यायज्ञान मे गुणस्थान ७ (छठे से १२ तक) केवलज्ञान मे २ (१३, १४) ।

जीव– २ अज्ञान मे जीव का भेद पावे १४ ही, २ ज्ञान मे जीव का भेद पावे ६ (५, ७, ९, ११, १३, १४), अवधिज्ञान-विभगज्ञान मे जीव का भेद २ (१३, १४), मन पर्यायज्ञान केवलज्ञान मे १ (१४) ।

पर्याप्ति– ५ ज्ञान ३ अज्ञान मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– ४ ज्ञान ३ अज्ञान मे प्राण पावे १० ही, केवलज्ञान मे प्राण पावे ५ (५ इन्द्रिय प्राण टले) ।

संज्ञा– ४ ज्ञान, ३ अज्ञान मे सज्ञा पावे ४, केवलज्ञान (नोसंज्ञा नो असज्ञा बहुत।) ।

उपयोग– प्रथम चार ज्ञान मे उपयोग पावे ७ (प्रथम चार ज्ञान, तीन दर्शन), केवलज्ञान मे उपयोग २ (केवलज्ञान, केवलदर्शन), तीन अज्ञान मे उपयोग पावे ६ (तीन अज्ञान, तीन दर्शन)।

दृष्टि– ३ अज्ञान मे दृष्टि पावे २ (मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि), ५ ज्ञान मे दृष्टि पावे १ (सम्यग्दृष्टि) ।

कर्म– ४ ज्ञान, ३ अज्ञान मे कर्म पावे ८ ही, केवलज्ञान मे कर्म पावे ४ (अघाति कर्म) ।

शरीर– ३ अज्ञान मे शरीर पावे ४ (आहारकशरीर टला), ४ ज्ञान मे शरीर पावे ५ ही, केवलज्ञान मे शरीर पावे ३ (औदारिक, तैजस कार्मण शरीर) ।

हेतु– ३ अज्ञान मे हेतु पावे ५५ (आहारक, आहारकमिश्र टला), ३ ज्ञान मे हेतु पावे ५२ (५ मिथ्यात्व टला), मन:पर्यायज्ञान मे हेतु पावे २७ (१४ योग, १३ कषाय), केवलज्ञान मे हेतु पावे ५ तथा ७ (५ या ७ योग) ।

संयमद्वार

(सामायिक, छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसम्पराय, यथाख्यात ।)

गति– असयम मे गति पावे ४ ही, सयमासयम मे गति पावे २ (मनुष्य तिर्यंच गति पावे), ५ सयम मे गति पावे एक मनुष्य की ।

इन्द्रिय– असयम मे इन्द्रिय पावे ५ ही, शेष सयम मे इन्द्रिय पावे १ (पचेन्द्रिय) ।

काया– असयम मे काया पावे ६ ही, शेष सयम मे काया पावे एक

(त्रस) ।

योग– असंयम मे योग पावे १३ (आहारक, आहारकमिश्र छोडकर), संयमासयम में १२ (आहारक, आहारकमिश्र, कार्मण काययोग टला) सामायिक, छेदोपस्थापनीय मे योग १४ (कार्मणकाययोग टला) परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसम्पराय चारित्र मे योग पावे ९ (४ मन, ४ वचन, १ औदारिककाया का), यथाख्यात में ११ (४ मन, ४ वचन, ३ काया– औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग , कार्मणकाययोग) ।

वेद– असयम, सयमासंयम, सामायिक, छेदोपस्थापनीय मे वेद पावे ३ ही, परिहारविशुद्धिचारित्र मे वेद पावे २ (पुरुष, नपुंसक वेद) सूक्ष्मसपराय, यथाख्यात चारित्र अवेदी ।

कषाय– असयम मे कषाय पावे २५ ही, संयमासंयम मे कषाय पावे १७ (प्रथम के २ चौक टले), सामायिक छेदोपस्थापनीय में कषाय पावे १३ (तीन चौक टले), परिहारविशुद्धिचारित्र में कषाय पावे १२ (१ स्त्रीवेद टला), सूक्ष्मसम्परायचारित्र मे कषाय पावे १ (सज्वलन का लोभ), यथाख्यातचारित्र अकषायी ।

ज्ञान– असयम मे ज्ञान पावे ६ (३ ज्ञान, ३ अज्ञान), सयमासंयम में ज्ञान पावे ३ (३ ज्ञान), ४ चारित्र में ज्ञान पावे ४, यथाख्यात में ज्ञान पावे ५ ।

संयम– सयम पावे अपना अपना ।

दर्शन– ६ सयम मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला), १ यथाख्यातचारित्र मे दर्शन पावे ४ ही ।

लेश्या– प्रथम ४ संयम मे लेश्या पावे ६ ही, परिहारविशुद्धिचारित्र

मे लेश्या पावे ३ (प्रथम की), सूक्ष्मसम्पराय यथाख्यात चारित्र मे लेश्या पावे १ (शुक्ललेश्या) ।

भव्य– असयम भव्य अभव्य दोनो, शेष सयम भव्य ।

सन्नी– असयम सन्नी असन्नी दोनो, शेष सभी सन्नी ।

समकित– असयम मे समकित पावे ७ ही, सयमासयम, सामायिक, छेदोपस्थापनीय मे समकित पावे ४ (मिथ्यात्व, सास्वादन, मिश्र समकित टली) परिहारविशुद्धिचारित्र मे समकित पावे ३ (३ पूर्वोक्त, उपसमकित टली), सूक्ष्मसम्पराय, यथाख्यात मे समकित पावे २ (उपशम, क्षायिक) ।

आहारक– असयम यथाख्यातचारित्र आहारक, अनाहारक दोनो, शेष सभी चारित्र आहारक ।

गुणस्थान– असयम मे गुणस्थान पावे ४ (प्रथम के), सयमासयम मे गुणस्थान पावे १ (५ वा), सामायिक छेदोपस्थापनीय मे गुणस्थान पावे ४ (६-७-८-९), परिहारविशुद्धिचारित्र मे गुणस्थान पावे २ (६-७ वा), सूक्ष्मसम्पराय मे गुणस्थान पावे १ (१० वा), यथाख्यातचारित्र मे गुणस्थान पावे ४ (११ से १४ तक) ।

जीव– असयम मे जीव भेद पावे १४ ही, शेष सयम मे जीव का भेद पावे १ (सन्नी पचेन्द्रिय का पर्याप्ता) ।

पर्याप्ति– ७ ही सयम मे पर्याप्ति पावे ६ ।

प्राण– ६ सयम मे प्राण पावे १०, यथाख्यातचारित्र मे ५ तथा १० प्राण ।

सज्ञा– ५ सयम (प्रथम के) मे सज्ञा पावे ४, सूक्ष्मसम्पराय, यथाख्यातचारित्र मे नोसन्ना बहुता ।

उपयोग– असयम में उपयोग पावे ९, सयमासंयम मे उपयोग पावे ६, ४ संयम में उपयोग पावे ७, यथाख्यातचारित्र में उपयोग पावे ९ ।

दृष्टि– असयम में दृष्टि पावे ३ ही, शेष ६ चारित्र मे दृष्टि १ (सम्यग्दृष्टि) ।

कर्म– ६ संयम में कर्म पावे ८ ही । यथाख्यातचारित्र मे कर्म पावे ७ (मोहनीय टला) या ४ कर्म अघाति ।

शरीर– असंयम, सयमासयम मे शरीर पावे ४ (आहारक टला), सामायिक छेदोपस्थापनीय चारित्र मे शरीर पावे ३ (औदारिक तैजस कार्मण) ।

हेतु– असयम मे हेतु पावे ५५ (आहारक, आहारकमिश्र टला), संयमासंयम मे हेतु पावे ४० (प्रथम के २ चौक, ३ योग, ५ मिथ्यात्व, त्रस की अव्रत ये १७ टला), सामायिक छेदोपस्थापनीय मे २७ (१४ योग, १३ कषाय), परिहार मे २१ (९ योग, १२ कषाय), सूक्ष्मसम्परायचारित्र मे हेतु पावे १० (९ योग, १ कषाय), यथाख्यातचारित्र मे हेतु पावे ११ (११ योग) ।

दर्शनद्वार

गति– ३ दर्शन मे गति पावे ४ ही, केवलदर्शन मे गति पावे १ (मनुष्यगति) ।

इन्द्रिय– अचक्षुदर्शन मे इन्द्रिय पावे ५ ही, चक्षुदर्शन मे इन्द्रिय पावे २ (चतुरिन्द्रिय, पचेन्द्रिय), अवधिदर्शन में इन्द्रिय पावे १ पंचेन्द्रिय, केवलदर्शन अनिन्द्रिय ।

काया– अचक्षुदर्शन में काया पावे ६ ही, शेष तीन दर्शन में काया

पावे १ (त्रस)।

योग– चक्षुदर्शन मे योग पावे १४ (कार्मण टला), अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन मे योग १५ ही, केवलदर्शन मे ५ तथा ७ (औदारिक, औदारिकमिश्र, सत्यमनोयोग, व्यवहारमनोयोग, सत्यभाषा, व्यवहारभाषा, कार्मण काययोग)।

वेद– ३ दर्शन मे वेद पावे ३ ही। केवलदर्शन अवेदी।

कषाय– तीन दर्शन मे कषाय पावे २५, केवलदर्शन अकषायी ।

ज्ञान– ३ दर्शन मे ज्ञान पावे ७ (केवलज्ञान टला), केवलदर्शन मे ज्ञान पावे १ केवलज्ञान।

सयम– ३ दर्शन मे सयम पावे ७ ही, केवलदर्शन मे १ यथाख्यातचारित्र।

दर्शन– दर्शन पावे अपना-अपना।

लेश्या– ३ दर्शन मे लेश्या पावे ६ ही, केवलदर्शन मे लेश्या पावे १ (शुक्ललेश्या) ।

भव्य– ३ दर्शन भव्य अभव्य दोनो, केवलदर्शन भव्य ।

सन्नी– चक्षु अचक्षु दर्शन सन्नी असन्नी, अवधिदर्शन सन्नी, केवलदर्शन नोसन्नी-नोअसन्नी ।

समकित– ३ दर्शन मे समकित पावे ७ ही, केवलदर्शन मे समकित पावे १ (क्षायिकसमकित) ।

आहारक– चक्षुदर्शन आहारक, शेष ३ दर्शन आहारक अनाहारक दोनो ही ।

गुणस्थान– ३ दर्शन मे गुणस्थान पावे १२ (१ से १२ तक), केवलदर्शन मे गुणस्थान पावे २ (१३, १४, वा) ।

जीव– चक्षुदर्शन मे जीव का भेद पावे ३ या ६ (चतुरिन्द्रय, असन्नी पंचेन्द्रिय, सन्नी पचेन्द्रिय का पर्याप्त या ६ मे तीनो का अपर्याप्त बढा), अचक्षुदर्शन में जीव का भेद पावे १४ ही, अवधिदर्शन मे जीव का भेद पावे २ (सन्नी पचेन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्त), केवलदर्शन मे जीव का भेद पावे १ (१४ वा) ।

पर्याप्ति– ४ दर्शन मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– ३ दर्शन मे प्राण पावे १० ही, केवलदर्शन मे प्राण पावे ५ (५ इन्द्रियबलप्राण टले) ।

संज्ञा– ३ दर्शन में सज्ञा पावे ४ ही, केवलदर्शन नोसज्ञा बहुत ।

उपयोग– ३ दर्शन मे उपयोग पावे १०, केवलदर्शन मे उपयोग पावे २ ।

दृष्टि– ३ दर्शन मे दृष्टि पावे ३ ही, केवलदर्शन में दृष्टि पावे १ सम्यग्दृष्टि ।

कर्म– ३ दर्शन में कर्म पावे ८ ही, केवलदर्शन मे कर्म पावे ४ (अघातीकर्म) ।

शरीर– ३ दर्शन मे शरीर पावे ५ ही , केवलदर्शन मे ३ शरीर (औदारिक तैजस कार्मण) ।

हेतु– चक्षुदर्शन में हेतु पावे ५६ (कार्मण टला), अचक्षुदर्शन अवधिदर्शन में हेतु पावे ५७ ही, केवलदर्शन मे हेतु पावे ५ या ७ (५ या ७ योग) ।

लेश्याद्वार

गति– ३ लेश्या में गति पावे ४ ही, ३ लेश्या (तेजो पद्म शुक्ल) मे गति पावे ३ (नरकगति टली) ।

इन्द्रिय– ३ लेश्या मे इन्द्रिय पावे ५ ही, तेजोलेश्या मे इन्द्रिय पावे २ (एकेन्द्रिय, पचेन्द्रिय), पद्म शुक्ल लेश्या मे एक पचेन्द्रिय ।

काया– तीन लेश्या (प्रथम की) मे काया पावे ६ ही, तेजोलेश्या मे काया ४ (पृथ्वी, पानी, वनस्पति, त्रसकाय) पद्मलेश्या, शुक्ललेश्या मे काया पावे १ (त्रसकाया) ।

योग– ६ लेश्या मे योग पावे १५ ही ।

वेद– ६ लेश्या मे वेद पावे ३ ही ।

कषाय– ६ लेश्या मे कषाय पावे २५ ही ।

ज्ञान– ५ लेश्या मे ज्ञान पावे ७ (केवलज्ञान टला), शुक्ललेश्या मे ज्ञान पावे ८ ही ।

सयम– ३ लेश्या मे सयम पावे ४ (प्रथम के ४), तेजो पद्म लेश्या में सयम पावे ५, पूर्वोक्त ४ व (परिहारविशुद्धिचारित्र बढा), शुक्ललेश्या मे सयम पावे ७ ही ।

दर्शन– ५ लेश्या मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला), शुक्ललेश्या मे दर्शन पावे ४ ही ।

लेश्या– लेश्या पावे अपनी-अपनी ।

भव्य– ६ लेश्या भव्य-अभव्य दोनो ही ।

सन्नी– ४ लेश्या सन्नी-असन्नी दोनो, पद्म शुक्ल लेश्या सन्नी ।

समकित– ६ लेश्या मे समकित पावे ७ ही ।

आहारक– ६ लेश्या आहारक, अनाहारक दोनो ।

गुणस्थान– ३ लेश्या में गुणस्थान पावे ६ (प्रथम के), तेजो पद्म लेश्या मे गुणस्थान पावे ७, शुक्ललेश्या मे गुणस्थान पावे १३ ।

जीव– ३ लेश्या मे जीव का भेद पावे १४ ही, तेजोलेश्या मे जीव

का भेद ३ (३, १३, १४), पद्म शुक्ल लेश्या मे जीव का भेद पावे २ (१३, १४ वा) ।

पर्याप्ति– ६ लेश्या मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– ६ लेश्या में प्राण पावे १० ही ।

संज्ञा– ६ लेश्या मे सज्ञा पावे ४ ही ।

उपयोग– ५ लेश्या में उपयोग पावे १० (केवलद्विक टला), शुक्ललेश्या में उपयोग पावे १२ ही ।

दृष्टि– ६ लेश्या मे दृष्टि पावे ३ ही ।

कर्म– ६ लेश्या मे कर्म पावे ८ ही ।

शरीर– ६ लेश्या मे शरीर पावे ५ ही ।

हेतु– ६ लेश्या मे हेतु पावे ५७ ही ।

भव्यद्वार

गति– भव्य-अभव्य में गति पावे ४ ही ।

इन्द्रिय– भव्य-अभव्य मे इन्द्रिय पावे ५ ही ।

काया– भव्य-अभव्य में काया पावे ६ ही ।

योग– भव्य मे योग पावे १५, अभव्य मे योग पावे १३ (आहारक, आहारकमिश्र टला) ।

वेद– भव्य-अभव्य में वेद पावे ३ ।

कषाय– भव्य-अभव्य मे कषाय पावे २५ ।

ज्ञान– भव्य मे ज्ञान पावे ८ (५ ज्ञान, ३ अज्ञान), अभव्य मे तीन अज्ञान ।

संयम– अभव्य में संयम पावे १ असयम, भव्य मे सयम पावे ७ ही ।

दर्शन– अभव्य मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला), भव्य मे दर्शन पावे ४ ही ।

लेश्या– भव्य-अभव्य मे लेश्या पावे ६ ही ।

भव्य– भव्य सो भव्य, अभव्य सो अभव्य ।

सन्नी– भव्य-अभव्य मे सन्नी-असन्नी दोनो ही ।

समकित– अभव्य मे समकित पावे १ मिथ्यात्व, भव्य मे समकित पावे ७ ही ।

आहारक– भव्य-अभव्य मे आहारक-अनाहारक दोनो ही ।

गुणस्थान– भव्य मे गुणस्थान पावे १४ ही, अभव्य मे गुणस्थान पावे १ (प्रथम) ।

जीव– भव्य-अभव्य मे जीव का भेद पावे १४ ही ।

पर्याप्ति– भव्य-अभव्य मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– भव्य-अभव्य मे प्राण पावे १० ही ।

सज्ञा– भव्य-अभव्य मे सज्ञा पावे ४ ही ।

उपयोग– भव्य मे उपयोग पावे १२, अभव्य मे उपयोग पावे ६ (३ अज्ञान, ३ दर्शन) ।

दृष्टि– अभव्य मे दृष्टि पावे १ (मिथ्यादृष्टि), भव्य मे दृष्टि पावे ३ ही ।

कर्म– भव्य-अभव्य मे कर्म पावे आठो ही ।

शरीर– अभव्य मे शरीर पावे ४ (आहारकशरीर टला), भव्य मे शरीर पावे ५ ही ।

हेतु– अभव्य मे हेतु पावे ५५ (आहारक, आहारकमिश्र टला), भव्य मे हेतु पावे ५७ ही ।

सन्नी–असन्नीद्वार।

गति– सन्नी, असन्नी मे गति पावे ४ ही ।

इन्द्रिय– असन्नी मे इन्द्रिय पावे ५ ही, सन्नी मे इन्द्रिय पावे १ (पचेन्द्रिय) ।

काया– असन्नी मे काया पावे ६ ही, सन्नी में काया पावे १ (त्रसकाय) ।

योग– असन्नी मे योग पावे ६ (औदारिक, औदारिकमिश्र, वैक्रिय, वैक्रियमिश्र, कार्मणकाययोग, व्यवहारभाषा), सन्नी में योग पावे १५ ही ।

वेद– असन्नी मे वेद पावे १ (नपुंसकवेद), सन्नी मे वेद पावे ३ ही ।

कषाय– असन्नी मे कषाय पावे २३ (दो वेद टला), सन्नी मे कषाय पावे २५ ही ।

ज्ञान– असन्नी मे ज्ञान पावे ४ (२ ज्ञान, २ अज्ञान), सन्नी मे ज्ञान पावे ७ (केवलज्ञान टला) ।

संयम– असन्नी में सयम पावे १ (असयम), सन्नी मे संयम पावे ७ ही ।

दर्शन– असन्नी मे दर्शन पावे २ (चक्षु-अचक्षुदर्शन), सन्नी मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला) ।

लेश्या– असन्नी मे लेश्या पावे ४ (प्रथम), सन्नी मे लेश्या पावे ६ ही ।

भव्य– सन्नी-असन्नी मे भव्य अभव्य दोनो ही ।

सन्नी– सन्नी सो सन्नी, असन्नी सो असन्नी ।

समकित– असन्नी मे समकित पावे २ (मिथ्यात्व, सास्वादन), सन्नी मे समकित पावे ७ ही ।

आहारक– सन्नी-असन्नी आहारक, अनाहारक दोनो ।

गुणस्थान– असन्नी मे गुणस्थान पावे २ (१-२), सन्नी मे गुणस्थान पावे १२ (प्रथम के) ।

जीव– असन्नी मे जीव का भेद पावे १२ (१३, १४ वा टला), सन्नी मे जीव का भेद पावे २ (१३, १४ वा) ।

पर्याप्ति– असन्नी मे पर्याप्ति पावे ५ (प्रथम की), सन्नी मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– असन्नी मे प्राण पावे ९ (मनबलप्राण टला), सन्नी मे प्राण पावे १० ही ।

सज्ञा– सन्नी असन्नी मे सज्ञा पावे ४ ही ।

उपयोग– असन्नी मे उपयोग पावे ६ (२ ज्ञान, २ अज्ञान, २ दर्शन), सन्नी मे उपयोग पावे १० (केवलद्विक टला) ।

दृष्टि– असन्नी मे दृष्टि पावे २ (मिथ्यादृष्टि, सम्यग्दृष्टि), सन्नी मे दृष्टि पावे ३ ही ।

कर्म– सन्नी-असन्नी मे कर्म पावे आठो ही ।

शरीर– असन्नी मे शरीर पावे ४ (आहारकशरीर टला), सन्नी मे शरीर पावे ५ ही ।

हेतु– असन्नी मे हेतु पावे ४२ (९ योग, ४ मिथ्यात्व, २ वेद टला), सन्नी मे हेतु पावे ५७ ही ।

समकितद्वार

गति– ७ समकित मे गति पावे चारो ही ।

इन्द्रिय– मिथ्यात्व मे इन्द्रिय पावे ५ ही, सास्वादन मे इन्द्रिय पावे ४ (एकेन्द्रिय टली), ५ समकित मे इन्द्रिय पावे १ (पचेन्द्रिय) ।

काया– मिथ्यात्व में काया पावे ६ ही, शेष ६ समकित में काया पावे १ त्रसकाय ।

योग– मिथ्यात्व, सास्वादन मे योग पावे १३ (आहारक आहारकमिश्र टला), मिश्र में योग पावे १० (४ मन, ४ वचन, औदारिक और वैक्रिय), शेष ४ समकित मे योग पावे १५ ही ।

वेद– ७ समकित मे वेद पावे तीनो ही ।

कषाय– मिथ्यात्व, सास्वादन मे कषाय पावे २५, शेष ५ समकित मे कषाय पावे २१ (अनतानुबधिचौक टला) ।

ज्ञान– मिथ्यात्व मिश्र मे ज्ञान पावे ३ अज्ञान, सास्वादन में ज्ञान पावे ३ ज्ञान, उपशम, क्षयोपशम, वेदक में ज्ञान पावे ४ (केवलज्ञान टला), क्षायिक समकित मे ज्ञान पावे ५ ज्ञान ।

संयम– मिथ्यात्व, सास्वादन, मिश्र मे संयम पावे १ असयम, औपशमिक समकित मे सयम ६ (परिहारविशुद्धिचारित्र टला) । क्षायोपशमिक, वेदक मे संयम पावे ५ (सूक्ष्मसम्पराय, यथाख्यात चारित्र टला), क्षायिक समकित मे सयम पावे ७ ।

दर्शन– ६ समकित में दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला), क्षायिकसमकित मे दर्शन पावे ४ ही ।

लेश्या– ७ समकित मे लेश्या पावे ६ ही ।

भव्य– मिथ्यात्व मे भव्य अभव्य दोनों, शेष समकित वाले भव्य ।

सन्नी– मिथ्यात्व, सास्वादन समकित सन्नी असन्नी दोनो । शेप समकित वाले सन्नी ।

समकित— समकित पावे अपनी अपनी ।

आहारक— मिश्रसमकित आहारक, शेष समकित आहारक अनाहारक दोनो ।

गुणस्थान— मिथ्यात्व सास्वादन मिश्र मे गुणस्थान पावे अपना-अपना, उपशम समकित मे गुणस्थान पावे ८ (४ से ११ गुणस्थान तक), क्षायोपशमिक समकित और वेदक मे गुणस्थान पावे ४ (४ से ७ तक), क्षायिक समकित मे गुणस्थान पावे ११ (४ से १४ तक) ।

जीव— मिथ्यात्व मे जीव का भेद पावे १४, सास्वादन मे ६ (५, ७, ९, ११, १३, १४), मिश्र मे जीव का भेद पावे १ (सन्नी पचेन्द्रिय का पर्याप्त), शेष ४ समकित मे जीव का भेद पावे २ (१३, १४ वा) ।

पर्याप्ति— ७ समकित मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण— ७ समकित मे प्राण पावे १० ही ।

सज्ञा— ७ समकित मे सज्ञा पावे ४ ही ।

उपयोग— मिथ्यात्व, मिश्र, सास्वादन मे उपयोग पावे ६ (३ अज्ञान, ३ दर्शन), क्षयोपशम, वेदक में उपयोग पावे ७ (४ ज्ञान, ३ दर्शन), क्षायिक मे उपयोग पावे ९ (५ ज्ञान, ४ दर्शन) ।

दृष्टि— मिथ्यात्व, मिश्र मे दृष्टि पावे अपनी-अपनी, शेष ५ समकित मे दृष्टि पावे १ सम्यक् दृष्टि ।

कर्म— ७ समकित मे कर्म पावे आठो ही ।

शरीर— मिथ्यात्व, मिश्र, सास्वादन मे शरीर पावे ४ (आहारकशरीर टला), शेष समकित मे शरीर पावे ५ ही ।

हेतु— मिथ्यात्व मे हेतु पावे ५५ (आहारक, आहारकमिश्र टला),

सास्वादन में हेतु पावे ५० (पूर्वोक्त में से ५ मिथ्यात्व टला), मिश्र में ४३ (५ योग, ५ मिथ्यात्व, अनंतानुबधि का चौक टला), शेष समकित में हेतु पावे ४८ (५ मिथ्यात्व, अनन्तानुबंधिचतुष्क टला) ।

आहारक- अनाहारकद्वार

गति– आहारक, अनाहारक मे गति पावे चारो ही ।

इंद्रिय– आहारक, अनाहारक मे इंद्रिय पावे ५ ही ।

काया– आहारक, अनाहारक मे काया पावे ६ ही ।

योग– आहारक मे योग पावे १४ (कार्मणयोग टला), अनाहारक मे योग पावे १ (कार्मणयोग) ।

वेद– आहारक, अनाहारक में वेद पावे तीन ही ।

कषाय– आहारक, अनाहारक मे कषाय पावे २५ ही ।

ज्ञान– आहारक मे ज्ञान पावे ८ ही, अनाहारक मे ज्ञान पावे ७ (मनपर्यायज्ञान टला) ।

संयम– आहारक मे संयम पावे ७ ही, अनाहारक मे सयम २ (असंयम, यथाख्यातचरित्र) ।

दर्शन– आहारक मे दर्शन पावे ४ ही, अनाहारक मे दर्शन पावे ३ ही (चक्षुदर्शन टला) ।

लेश्या– आहारक, अनाहारक मे लेश्या पावे ६ ही ।

भव्य– आहारक, अनाहारक भव्य अभव्य दोनो ही ।

सन्नी– आहारक, अनाहारक सन्नी, असन्नी दोनो ही ।

समकित– आहारक में समकित पावे ७ ही, अनाहारक मे समकित पावे ६ (मिश्र टली) ।

आहारक– आहारक सो आहारक, अनाहारक सो अनाहारक ।
गुणस्थान– आहारक मे गुणस्थान पावे १३ (१४ वा टला), अनाहारक मे ५ (१, २, ४, १३, १४ वा टला) ।
जीव– आहारक मे जीव का भेद पावे १४ ही, अनाहारक मे जीव का भेद पावे ८ (सात का अपर्याप्ता, सन्नी पचेन्द्रिय का पर्याप्ता) ।
पर्याप्ति– आहारक, अनाहारक मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।
प्राण– आहारक मे प्राण पावे १० ही, अनाहारक मे प्राण पावे २ (आयुषबलप्राण, कायाबलप्राण) ।
सज्ञा– आहारक, अनाहारक मे सज्ञा पावे ४ ही ।
उपयोग– आहारक मे उपयोग पावे १२ ही, अनाहारक मे उपयोग पावे १० ही (मन पर्यायज्ञान, चक्षुदर्शन टला) ।
कर्म– आहारक, अनाहारक मे कर्म पावे आठो ही ।
शरीर– आहारक मे शरीर पावे ५ ही, अनाहारक मे शरीर पावे ३ (आहारक, वैक्रिय शरीर टला) ।
हेतु– आहारक मे हेतु पावे ५६ (कार्मण टला), अनाहारक मे हेतु पावे ४३ (१४ योग टला) ।

गुणस्थानद्वार

गति– पहले से चौथे गुणस्थान मे गति पावे ४ ही, ५ वे गुणस्थान मे गति पावे २ (मनुष्य, तिर्यंच), छठे से १४ गुणस्थान मे गति पावे १ मनुष्य की।
इन्द्रिय– पहले गुणस्थान मे इन्द्रिय पावे ५ ही, दूसरे गुणस्थान मे इन्द्रिय पावे ४ (एकेन्द्रिय टली), तीसरे से बारहवे गुणस्थान मे इन्द्रिय पावे १ पचेन्द्रिय, १३, १४ गुणस्थान मे इद्रिय पावे नहीं

(अनिन्द्रिय) ।

काया– पहले गुणस्थान मे काया पावे ६, शेष गुणस्थान मे काया पावे १ (त्रस) ।

योग– १, २, ४ गुणस्थान मे योग पावे १३ (आहारक, आहारकमिश्र टला), ३ रे गुणस्थान के योग पावे १० (४ मन, ४ वचन, औदारिक, वैक्रिय), ५ वे गुणस्थान मे योग पावे १२ (आहारक, आहारकमिश्र, कार्मण टला), छठे गुणस्थान मे योग पावे १४ (कार्मणयोग टला), ७ वे गुणस्थान में योग पावे ११ (तीनो मिश्र टले), ८ से १२ गुणस्थान तक योग पावे ९ (४ मन, ४ वचन, एक औदारिक), १३ गुणस्थान मे योग पावे ५ या ७, १४ वा गुणस्थान अयोगी ।

वेद– १ से ९ गुणस्थान मे वेद पावे ३ ही, १० से १४ वे गुणस्थान वाले अवेदी ।

कषाय– १-२ गुणस्थान में कषाय पावे २५ ही, ३-४ गुणस्थान मे कषाय पावे २१ (अनतानुबन्धिचतुष्क टला), ५ वे गुणस्थान मे कषाय पावे १७ (अप्रत्याख्यानावरणचतुष्क टला), ७, ८ वे गुणस्थान मे कषाय पावे १३ (प्रत्याख्यानावरणचतुष्क टला), ९ वे गुणस्थान मे कषाय पावे ७ (६ हास्यादिक षट्क टला), १० वे गुणस्थान में कषाय पावे १ (संज्वलन लोभ), ११ से १४ वे गुणस्थान अकषायी ।

ज्ञान– १, ३, गुणस्थान मे ज्ञान पावे ३ अज्ञान, २, ४, ५ वें गुणस्थान मे ज्ञान पावे ३ ज्ञान, ६ से १२ वे गुणस्थान मे ४ ज्ञान पावे, १३ १४ वे गुणस्थान मे ज्ञान पावे १ केवलज्ञान ।

सयम– १ से ४ गुणस्थान मे सयम पावे १ असयम, ५ वे गुणस्थान मे सयम पावे १ सयमासयम, ६, ७ वे गुणस्थान मे सयम पावे ३ चारित्र (सामायिक, छेदोपस्थापनीय, परिहारविशुद्धिचारित्र) ८, ९ वे गुणस्थान मे सयम पावे २ (सामायिक, छेदोपस्थापनीय), १० वे गुणस्थान मे सयम पावे १ सूक्ष्मसम्पराय, ११ से १४ गुणस्थान मे सयम पावे १ (यथाख्यातचारित्र) ।

दर्शन– १ से १२ गुणस्थान मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला), १३, १४ वा गुणस्थान मे दर्शन पावे १ (केवलदर्शन) ।

लेश्या– १ से छठे गुणस्थान मे लेश्या पावे ६ ही, ७ वे गुणस्थान मे लेश्या पावे ३ (तेजो, पद्म, शुक्ल लेश्या), ८ से १३ वे गुणस्थान मे लेश्या पावे १ शुक्ल, १४ वा गुणस्थान अलेशी ।

भव्य– प्रथम गुणस्थान मे भव्य, अभव्य दोनो, २ से १४ तक सभी गुणस्थान वाले भव्य ।

सन्नी– प्रथम, दूसरे गुणस्थान मे सन्नी असन्नी दोनो, शेष ३ से १२ वे गुणस्थान वाले सन्नी, १३ १४ वा गुणस्थान नोसन्नी-नोअसन्नी ।

समकित– १ ले गुणस्थान मे समकित पावे एक (मिथ्यात्व), दूसरे मे सास्वादन, तीसरे मे मिश्र, ४ से ७ वे गुणस्थान मे समकित पावे ४ (उपशम, क्षायोपशम, क्षायिक, वेदक समकित), ८ से ११ वे गुणस्थान मे समकित पावे २ (उपशम, क्षायिक), १२, १३, १४ वे गुणस्थान मे क्षायिक समकित ।

आहारक– १, २, ४, १३ वां गुणस्थान आहारक अनाहारक दोनो, १४ वा गुणस्थान अनाहारक, शेष गुणस्थान आहारक ।

गुणस्थान– अपना-अपना ।

जीव– पहले गुणस्थान मे जीव का भेद पावे १४ ही, २ रे गुणस्थान मे जीव का भेद पावे ६ (५, ७, ९, ११, १३, १४), ४ थे गुणस्थान मे जीव का भेव पावे २ (१३ १४ वा), ३ रे और ५ से १४ गुणस्थान मे जीव का भेद पावे १४ वा ।

पर्याप्ति– १४ ही गुणस्थान मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– १ से १२ गुणस्थान मे प्राण पावे १० ही, १३ वे गुणस्थान मे प्राण पावे ५ (५ इन्द्रियबलप्राण टला), १४ वे गुणस्थान में प्राण पावे २ (आयुष्य, कायाबलप्राण) ।

सज्ञा– १ से छठे गुणस्थान तक सज्ञा पावे ४ ही, शेष गुणस्थान मे नोसज्ञा बहुता ।

उपयोग– १, ३ गुणस्थान मे उपयोग पावे ६ (३ अज्ञान, ३ दर्शन), २, ४, ५ वे गुणस्थान मे उपयोग पावे ६ (३ ज्ञान, ३ दर्शन), ६ से १२ वे गुणस्थान मे उपयोग पावे ७ (४ ज्ञान, ३ दर्शन), १३, १४ वे गुणस्थान मे उपयोग पावे २ केवलज्ञान और केवलदर्शन ।

दृष्टि– पहले गुणस्थान मे १ मिथ्यादृष्टि, तीसरे गुणस्थान मे मिश्रदृष्टि, शेष गुणस्थान मे सम्यगदृष्टि ।

कर्म– १ से १० गुणस्थान मे कर्म आठ ही, ११, १२ गुणस्थान मे कर्म पावे ७ (मोहनीय टला), १३ १४ वे गुणस्थान मे कर्म पावे ४ (घातीकर्म टले) ।

शरीर– पहले से पाचवे गुणस्थान मे शरीर पावे ४ (आहारकशरीर टला), ६-७ वे गुणस्थान मे शरीर पावे ५ ही, ८ से १४ वे गुणस्थान मे शरीर पावे ३ (औदारिक, तैजस, कार्मण) ।

हेतु– पहले गुणस्थान मे हेतु पावे ५५ (आहारक आहारकमिश्र टला), दूसरे गुणस्थान मे हेतु पावे ५० (५५ मे से ५ मिथ्यात्व टला), तीसरे गुणस्थान मे हेतु पावे ४३ (५० मे से अनतानुबधिचतुष्क, ३ योग टले), चौथे गुणस्थान मे हेतु पावे ४६ (४३ मे ३ योग बढे), पाचवे गुणस्थान मे हेतु पावे ४० (४६ मे से अप्रत्याख्यानचतुष्क, कार्मणयोग, त्रस की अव्रत टले) । छठे गुणस्थान मे २७ (१४ योग १३ कषाय), ७ वे मे हेतु २४ (२७ मे से ३ मिश्रयोग टले), ८ वे गुणस्थान मे हेतु पावे २२ (आहारक, वैक्रिययोग टला), ९ वे गुणस्थान मे हेतु पावे १६ (हास्यादिकषट्क टला), १० वे गुणस्थान मे हेतु पावे १० (सज्वलन की त्रिक, ३ वेद टले), ११, १२, गुणस्थान मे हेतु पावे नौ (योग), १३ वे गुणस्थान मे हेतु पावे ५ अथवा ७ (५ या ७ योग), १४ वे गुणस्थान मे हेतु पावे नहीं ।

जीव का भेदद्वार

गति– ११ जीव के भेद मे गति पावे १ (तिर्यंच की), ११, १३, १४ वे जीव के भेद मे गति पावे ४।

इन्द्रिय– १, २, ३, ४, जीव के भेद मे इन्द्रिय पावे १ (एकेन्द्रिय), ५-६ जीव के भेद मे इन्द्रिय पावे १ (द्वीन्द्रिय), ७-८ जीव के भेद मे इन्द्रिय पावे १ (त्रीन्द्रिय), ९-१० जीव के भेद मे इन्द्रिय पावे १ (चतुरिन्द्रिय), ११ से १४ तक जीव के भेद मे इन्द्रिय पावे १ (पंचेन्द्रिय) ।

काया– १ से ४ जीव के भेद मे काया पावे ५ (स्थावर), ५ से १४ वें जीव के भेद मे काया पावे एक त्रस ।

योग– पहले, तीसरे जीव के भेद में योग पावे ३ (औदारिक, औदारिकमिश्र, कार्मण योग) दूसरे जीव के भेद में योग पावे १ (औदारिक), चौथे जीव के भेद में योग पावे ४ (औदारिक, औदारिकमिश्रयोग, वैक्रिय, वैक्रियमिश्र), ५, ७, ९ जीव के भेद मे योग पावे ३ (औदारिक, औदारिकमिश्र, कार्मणकाययोग), ६, ८, १०, १२, जीव के भेद मे योग पावे २ (औदारिक, व्यवहारभाषा) ११, १३ वे जीव के भेद मे योग पावे ५ (औदारिक, औदारिकमिश्र, वैक्रिय, वैक्रियमिश्र, कार्मण योग) १४ वे जीव के भेद मे योग पावे १५ ही ।

वेद– १ से १२ जीव के भेद मे वेद पावे १ नपुसकवेद, १३, १४ वे जीव के भेद मे वेद पावे ३ ही ।

कषाय– १ से १२ वें जीव के भेद मे कषाय पावे २३ (स्त्रीवेद पुरुषवेद टला), १३, १४ वे जीव के भेद मे कषाय पावे २५ ही ।

ज्ञान– १ से ४, ६, ८, १०, १२ मे २ अज्ञान, ५, ७, ९, ११ मे ज्ञान पावे ४ (२ ज्ञान, २ अज्ञान), १३ में ज्ञान पावे ६ (३ ज्ञान, ३ अज्ञान), १४ मे ज्ञान पावे ८ ही ।

संयम– १ से १३ जीव के भेद मे सयम पावे १ असयम, १४ वे जीव के भेद मे संयम पावे सातों ही ।

दर्शन– १ से ८ जीव के भेद मे दर्शन पावे १ अचक्षुदर्शन, ९ से १२ तक में दर्शन पावे २ चक्षुदर्शन अचक्षुदर्शन । १३ वे जीव के भेद मे दर्शन ३ (केवलदर्शन टला), १४ वे मे दर्शन पावे ४ ही ।

लेश्या– ११ जीव के भेद में लेश्या पावे ३ (प्रथम की), तीसरे जीव

के भेद मे लेश्या पावे ४ (प्रथम की) १३, १४ जीव के भेद मे लेश्या पावे ६ ही ।

भव्य– १४ ही जीव के भेद मे भव्य-अभव्य दोनो ही ।

सन्नी– १ से १२ तक जीव के भेद असन्नी, १३, १४ वा जीव भेद सन्नी ।

समकित– १ से ४, ६, ८, १०, १२ वें जीव के भेद मे समकित पावे (मिथ्यात्व), ५, ७, ९, ११ वे जीव के भेद मे समकित पावे २ (मिथ्यात्व, सास्वादन), १३ वे मे समकित पावे ६ (मिश्र टली), १४ वे समकित पावे ७ ही ।

आहारक– आठ जीव के भेद आहारक, अनाहारक (७ का पर्याप्ता, एक सन्नी का पर्याप्ता १४ वा), शेष ६ जीव के भेद आहारक ।

गुणस्थान– १ से ४, ६, ८, १०, १२ जीव के भेद मे गुणस्थान पावे १ (मिथ्यात्व गुणस्थान), ५, ७, ९, ११, वे जीव के भेद मे गुणस्थान पावे २ (१, २, गुणस्थान), १३ वे जीव के भेद मे गुणस्थान पावे ३ (१, २, ४ गुणस्थान), १४ वा जीव के भेद मे गुणस्थान पावे १४ ही ।

जीव– जीव पावे अपनी-अपनी ।

पर्याप्ति– १, ३, जीव के भेद मे पर्याप्ति पावे ३ (पहली), २, ४, जीव के भेद मे पर्याप्ति पावे ४ पहली, ५, ७, ९, ११ वे जीव के भेद मे पर्याप्ति पावे ४ (पहली), ६, ८, १०, १२, १३ वे जीव के भेद मे पर्याप्ति पावे ५ (पहली), १४ वे जीव के भेद मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

योग– पहले, तीसरे जीव के भेद मे योग पावे ३ (औदारिक, औदारिकमिश्र, कार्मण योग) दूसरे जीव के भेद में योग पावे १ (औदारिक), चौथे जीव के भेद में योग पावे ४ (औदारिक, औदारिकमिश्रयोग, वैक्रिय, वैक्रियमिश्र), ५, ७, ९ जीव के भेद मे योग पावे ३ (औदारिक, औदारिकमिश्र, कार्मणकाययोग), ६, ८, १०, १२, जीव के भेद में योग पावे २ (औदारिक, व्यवहारभाषा) ११, १३ वे जीव के भेद मे योग पावे ५ (औदारिक, औदारिकमिश्र, वैक्रिय, वैक्रियमिश्र, कार्मण योग) १४ वे जीव के भेद मे योग पावे १५ ही ।

वेद– १ से १२ जीव के भेद मे वेद पावे १ नपुसकवेद, १३, १४ वे जीव के भेद में वेद पावे ३ ही ।

कषाय– १ से १२ वे जीव के भेद मे कषाय पावे २३ (स्त्रीवेद पुरुषवेद टला), १३, १४ वे जीव के भेद मे कषाय पावे २५ ही ।

ज्ञान– १ से ४, ६, ८, १०, १२ मे २ अज्ञान, ५, ७, ९, ११ मे ज्ञान पावे ४ (२ ज्ञान, २ अज्ञान), १३ में ज्ञान पावे ६ (३ ज्ञान, ३ अज्ञान), १४ में ज्ञान पावे ८ ही ।

संयम– १ से १३ जीव के भेद मे संयम पावे १ असयम, १४ वे जीव के भेद में संयम पावे सातो ही ।

दर्शन– १ से ८ जीव के भेद मे दर्शन पावे १ अचक्षुदर्शन, ९ से १२ तक में दर्शन पावे २ चक्षुदर्शन अचक्षुदर्शन । १३ वे जीव के भेद में दर्शन ३ (केवलदर्शन टला), १४ वे मे दर्शन पावे ४ ही ।

लेश्या– ११ जीव के भेद मे लेश्या पावे ३ (प्रथम की), तीसरे जीव

के भेद मे लेश्या पावे ४ (प्रथम की) १३, १४ जीव के भेद मे लेश्या पावे ६ ही ।

भव्य– १४ ही जीव के भेद मे भव्य-अभव्य दोनो ही ।

सन्नी– १ से १२ तक जीव के भेद असन्नी, १३, १४ वा जीव भेद सन्नी ।

समकित– १ से ४, ६, ८, १०, १२ वे जीव के भेद मे समकित पावे (मिथ्यात्व), ५, ७, ९, ११ वे जीव के भेद मे समकित पावे २ (मिथ्यात्व, सास्वादन), १३ वे मे समकित पावे ६ (मिश्र टली), १४ वे समकित पावे ७ ही ।

आहारक– आठ जीव के भेद आहारक, अनाहारक (७ का पर्याप्ता, एक सन्नी का पर्याप्ता १४ वा), शेष ६ जीव के भेद आहारक ।

गुणस्थान– १ से ४, ६, ८, १०, १२ जीव के भेद मे गुणस्थान पावे १ (मिथ्यात्व गुणस्थान), ५, ७, ९, ११, वे जीव के भेद मे गुणस्थान पावे २ (१, २, गुणस्थान), १३ वें जीव के भेद मे गुणस्थान पावे ३ (१, २, ४ गुणस्थान), १४ वा जीव के भेद मे गुणस्थान पावे १४ ही ।

जीव– जीव पावे अपनी-अपनी ।

पर्याप्ति– १, ३, जीव के भेद मे पर्याप्ति पावे ३ (पहली), २, ४, जीव के भेद मे पर्याप्ति पावे ४ पहली, ५, ७, ९, ११ वे जीव के भेद मे पर्याप्ति पावे ४ (पहली), ६, ८, १०, १२, १३ वे जीव के भेद मे पर्याप्ति पावे ५ (पहली), १४ वे जीव के भेद मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

आहारक– ६ पर्याप्ति आहारक अनाहारक दोनो ।

गुणस्थान– ६ पर्याप्ति मे गुणस्थान पावे चौदह ।

जीव– ३ पर्याप्ति मे जीव का भेद पावे १४ ही, श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति में जीव का भेद पावे १२ (१, ३, टला), भाषापर्याप्ति मे जीव का भेद पावे ६ (६, ८, १०, १२, १३, १४ वा), मन पर्याप्ति में जीव का भेद पावे १ (१४ ही) ।

पर्याप्ति– पर्याप्ति अपनी-अपनी ।

प्राण– ६ पर्याप्ति मे प्राण पावे १० ही ।

संज्ञा– ६ पर्याप्ति में सज्ञा पावे ४ ही ।

उपयोग– ६ पर्याप्ति में उपयोग पावे १२ ही ।

दृष्टि– ६ पर्याप्ति मे दृष्टि पावे ३ ही ।

कर्म– ६ पर्याप्ति मे कर्म पावे ८ ही ।

शरीर– ६ पर्याप्ति में शरीर पावे ५ ही ।

हेतु– ६ पर्याप्ति मे हेतु पावे ५७ ही ।

प्राणद्वार

गति– १० प्राण मे गति पावे चार ही ।

इन्द्रिय– श्रोत्रेन्द्रिय एव मनबलप्राण मे इन्द्रिय पावे १ (पचेन्द्रिय) चक्षुरिन्द्रियबलप्राण में इन्द्रिय पावे २ (चतुरिन्द्रिय बढी), घ्राणेन्द्रियबलप्राण मे इन्द्रिय पावे ३ (त्रीन्द्रिय बढी), रसनेन्द्रियबलप्राण, वचनबलप्राण मे इन्द्रिय पावे ४ (एकेन्द्रिय टली), स्पर्शनेन्द्रियबलप्राण, कायाबलप्राण, श्वासोच्छ्वासबलप्राण, आयुष्यबलप्राण मे इन्द्रिय पावे पाचो ही ।

काया– ६ बलप्राण मे काया पावे १ (त्रस), ४ बलप्राण मे काया

पावे ६ ही।

योग– आठ बलप्राण मे योग पावे १४ (कार्मण टला), दो बलप्राण (आयुष, काया) मे योग पावे १५ ही ।

वेद– १० प्राण मे वेद पावे ३ ही ।

कषाय– १० प्राण मे कषाय पावे २५ ही ।

ज्ञान– ५ इन्द्रियबलप्राण मे ज्ञान पावे ७ ही (केवलज्ञान टला), ५ बलप्राण मे ज्ञान पावे आठो ही ।

सयम– १० बलप्राण मे सयम पावे सात ही ।

दर्शन– ५ बलप्राण (५ इन्द्रियबलप्राण) मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला), शेष ५ बलप्राण मे दर्शन पावे ४ ही ।

लेश्या– १० बलप्राण मे लेश्या पावे ६ ही ।

भव्य– १० बलप्राण मे भव्य, अभव्य दोनो ही ।

सन्नी– मन बलप्राण सन्नी, शेष ९ प्राण सन्नी-असन्नी दोनो ही ।

समकित– १० बलप्राण मे समकित पावे सातो ही ।

आहारक– आठ प्राण आहारक, आयुष एव काया बलप्राण आहारक, अनाहारक दोनो ही ।

गुणस्थान– ५ प्राण (५ इन्द्रियबलप्राण) मे गुणस्थान पावे १२ (प्रथम के), मन, वचन, श्वासोच्छ्वासबलप्राण मे गुणस्थान पावे १३ (प्रथम के), २ बलप्राण (आयुषबलप्राण, कायाबलप्राण) मे गुणस्थान पावे १४ ही ।

जीव– श्रोत्रेन्द्रियबलप्राण मे जीव का भेद पावे ४ (११, १२, १३, १४ वा), चक्षुरिन्द्रियबलप्राण मे जीव का भेद पावे ६ (९, १० वा

बढा), घ्राणेन्द्रियबलप्राण मे जीव का भेद पावे ८ (७ ८ बढा), रसनेन्द्रियबलप्राण मे जीव का भेद पावे १० (५, ६ बढा), मनबलप्राण मे जीव का भेद १ (१४ वां), वचनबलप्राण मे जीव का भेद पावे ५ (६, ८, १०, १२, १४), शेष ४ बलप्राण में जीव का भेद पावे १४ ही ।

पर्याप्ति– १० प्राण में पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– प्राण पावे अपना-अपना ।

संज्ञा– १० प्राण में सज्ञा पावे ४ ही ।

उपयोग– ५ इन्द्रियबलप्राण मे उपयोग पावे १० (केवलद्विक टली), ५ प्राण मे उपयोग पावे १२ ही ।

दृष्टि– १० प्राण मे दृष्टि पावे ३ ही ।

कर्म– १० प्राण मे कर्म पावे आठो ही ।

शरीर– १० प्राण मे शरीर पावे ५ ही ।

हेतु– ८ बलप्राण मे हेतु पावे ५६ (कार्मण टला), आयुषबलप्राण, कायाबलप्राण में हेतु पावे ५७ ही ।

संज्ञाद्वार

गति– चार संज्ञा मे गति पावे ४ ही ।

इन्द्रिय– चार सज्ञा मे इन्द्रिय पावे ५ ही ।

काया– चार सज्ञा में काया पावे ६ ही ।

योग– चार संज्ञा में योग पावे १५ ही।

वेद– ४ संज्ञा में वेद पावे ३ ही ।

कषाय– ४ संज्ञा में कषाय पावे २५ ही ।

ज्ञान– ४ संज्ञा मे ज्ञान पावे ७ (केवलज्ञान टला)।

सयम– ४ सज्ञा मे सयम पावे ५ (सूक्ष्मसम्पराय यथाख्यात चारित्र टला) ।

दर्शन– ४ संज्ञा मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला) ।

लेश्या– ४ सज्ञा मे लेश्या पावे ६ ही ।

भव्य– ४ सज्ञा मे भव्य, अभव्य दोनो ही ।

सन्नी– ४ सज्ञा मे सन्नी, असन्नी दोनो ही ।

समकित– ४ सज्ञा मे समकित पावे ७ ही ।

आहारक– ४ सज्ञा मे आहारक, अनाहारक दोनो ही ।

गुणस्थान– ४ सज्ञा मे गुणस्थान पावे ६ (प्रथम के) ।

जीव– ४ सज्ञा मे जीव का भेद पावे १४ ही ।

पर्याप्ति– ४ संज्ञा मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– ४ संज्ञा मे प्राण पावे १० ही ।

संज्ञा– सज्ञा अपनी अपनी।

उपयोग– ४ सज्ञा में उपयोग पावे १० (केवलद्विक टला) ।

दृष्टि– ४ सज्ञा मे दृष्टि पावे ३ ही ।

कर्म– ४ सज्ञा मे कर्म पावे आठो ही ।

शरीर– ४ सज्ञा मे शरीर पावे ५ ही ।

हेतु– ४ सज्ञा मे हेतु पावे ५७ ही ।

उपयोगद्वार

गति– साकार-उपयोग, अनाकार- उपयोग मे गति पावे ४ ही ।

इन्द्रिय– दोनो उपयोग मे इन्द्रिय पावे ५ ही ।

काया– दोनो उपयोग मे काया पावे ६ ही ।

योग– दोनो उपयोग मे योग पावे १५ ही ।

बढा), घ्राणेन्द्रियबलप्राण में जीव का भेद पावे ८ (७ ८
रसनेन्द्रियबलप्राण में जीव का भेद पावे १० (५, ६
मनबलप्राण मे जीव का भेद १ (१४ वां), वचनबलप्राण
का भेद पावे ५ (६, ८, १०, १२, १४), शेष ४ बलप्राण
का भेद पावे १४ ही ।

पर्याप्ति– १० प्राण में पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– प्राण पावे अपना-अपना ।

संज्ञा– १० प्राण मे सज्ञा पावे ४ ही ।

उपयोग– ५ इन्द्रियबलप्राण में उपयोग पावे १० (केव
टली), ५ प्राण मे उपयोग पावे १२ ही ।

दृष्टि– १० प्राण मे दृष्टि पावे ३ ही ।

कर्म– १० प्राण में कर्म पावे आठों ही ।

शरीर– १० प्राण में शरीर पावे ५ ही ।

हेतु– ८ बलप्राण मे हेतु पावे ५६ (कार्मण टला), आयुषब
कायाबलप्राण में हेतु पावे ५७ ही ।

संज्ञाद्वार

गति– चार संज्ञा में गति पावे ४ ही ।

इन्द्रिय– चार संज्ञा मे इन्द्रिय पावे ५ ही ।

काया– चार सज्ञा में काया पावे ६ ही ।

योग– चार सज्ञा मे योग पावे १५ ही।

वेद– ४ सज्ञा में वेद पावे ३ ही ।

कषाय– ४ सज्ञा में कषाय पावे २५ ही ।

ज्ञान– ४ संज्ञा मे ज्ञान पावे ७ (केवलज्ञान टला)।

संयम– ४ सज्ञा में सयम पावे ५ (सूक्ष्मसम्पराय यथाख्यात चारित्र टला) ।

दर्शन– ४ सज्ञा मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला) ।

लेश्या– ४ सज्ञा मे लेश्या पावे ६ ही ।

भव्य– ४ सज्ञा मे भव्य, अभव्य दोनो ही ।

सन्नी– ४ सज्ञा मे सन्नी, असन्नी दोनो ही ।

समकित– ४ संज्ञा मे समकित पावे ७ ही ।

आहारक– ४ सज्ञा मे आहारक, अनाहारक दोनो ही ।

गुणस्थान– ४ सज्ञा मे गुणस्थान पावे ६ (प्रथम के) ।

जीव– ४ सज्ञा मे जीव का भेद पावे १४ ही ।

पर्याप्ति– ४ सज्ञा मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– ४ सज्ञा मे प्राण पावे १० ही ।

संज्ञा– सज्ञा अपनी अपनी।

उपयोग– ४ सज्ञा में उपयोग पावे १० (केवलद्विक टला) ।

दृष्टि– ४ सज्ञा मे दृष्टि पावे ३ ही ।

कर्म– ४ सज्ञा मे कर्म पावे आठो ही ।

शरीर– ४ सज्ञा मे शरीर पावे ५ ही ।

हेतु– ४ सज्ञा मे हेतु पावे ५७ ही ।

उपयोगद्वार

गति– साकार-उपयोग, अनाकार- उपयोग मे गति पावे ४ ही ।

इन्द्रिय– दोनो उपयोग मे इन्द्रिय पावे ५ ही ।

काया– दोनो उपयोग मे काया पावे ६ ही ।

योग– दोनो उपयोग मे योग पावे १५ ही ।

वेद– दोनों उपयोग मे वेद पावे ३ ही ।
कषाय– दोनो उपयोग मे कषाय पावे २५ ही ।
ज्ञान– दोनों उपयोग में ज्ञान पावे आठो ही ।
सयम– साकार-उपयोग में सयम पावे ७, अनाकार-उपयोग मे संयम पावे ६ (सूक्ष्मसम्पराय टला) ।
दर्शन– दोनों उपयोग में दर्शन पावे ४ ही ।
लेश्या– दोनों उपयोग मे लेश्या पावे ६ ही ।
भव्य– दोनो उपयोग में भव्य, अभव्य दोनो ही ।
सन्नी– दोनो उपयोग में सन्नी, असन्नी दोनो ही ।
समकित– दोनो उपयोग मे समकित पावे ७ ही ।
आहारक– दोनो उपयोग में आहारक, अनाहारक दोनो ही ।
गुणस्थान– साकार-उपयोग में गुणस्थान पावे १४ ही, अनाकार-उपयोग मे गुणस्थान पावे १२ (१० वा टला) ।
जीव– दोनो उपयोग मे जीव का भेद पावे १४ ।
पर्याप्ति– दोनो उपयोग पर्याप्ति पावे ६ ही ।
प्राण– दोनो उपयोग मे प्राण पावे १० ही ।
संज्ञा– दोनों उपयोग में सज्ञा पावे ४ ही ।
उपयोग– उपयोग अपना अपना ।
दृष्टि– दोनों उपयोग में दृष्टि पावे ३ ही ।
कर्म– दोनों उपयोग मे कर्म पावे ८ ही ।
शरीर– दोनो उपयोग में शरीर पावे ५ ही ।
हेतु– दोनो उपयोग मे हेतु पावे ५७ ही ।

दृष्टिद्वार

गति– ३ दृष्टि मे गति पावे ४ ही ।

इन्द्रिय– मिथ्यादृष्टि मे इन्द्रिय पावे ५ ही, सम्यग्दृष्टि मे इन्द्रिय पावे ४ (एकेन्द्रिय टली), मिश्रदृष्टि मे इन्द्रिय पावे १ (पंचेन्द्रिय) ।

काया– मिथ्यादृष्टि मे काया पावे ६ ही । सम्यग्दृष्टि, मिश्रदृष्टि मे काया पावे १ (त्रसकाय) ।

योग– मिथ्यादृष्टि मे योग पावे १३ (आहारक, आहारकमिश्र टला), मिश्रदृष्टि मे योग पावे १० (४ मन, ४ वचन, औदारिक, वैक्रिय), सम्यग्दृष्टि मे योग पावे १५ ही ।

वेद– ३ दृष्टि मे वेद पावे तीनो ही ।

कषाय– मिथ्यादृष्टि, सम्यग्दृष्टि मे कषाय पावे २५ ही, मिश्रदृष्टि मे २१ (अनतानुबधिचतुष्क टला) ।

ज्ञान– मिथ्यादृष्टि मिश्रदृष्टि मे ज्ञान पावे ३ अज्ञान, सम्यग्दृष्टि मे ज्ञान पावे ५ ज्ञान ।

सयम– मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि मे सयम पावे १ असयम, सम्यग्दृष्टि मे सयम पावे सातो ही ।

दर्शन– मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला), सम्यग्दृष्टि मे दर्शन पावे चारो ही ।

लेश्या– ३ दृष्टि मे लेश्या पावे ६ ही ।

भव्य– मिथ्यादृष्टि भव्य अभव्य दोनो, दो दृष्टि भव्य ।

सन्नी– सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टि सन्नी असन्नी दोनो, मिश्रदृष्टि सन्नी ।

समकित– मिथ्यादृष्टि में १ मिथ्यात्व, मिश्रदृष्टि मे १ मिश्र, सम्यगदृष्टि में पांच समकित ।

आहारक- मिश्रदृष्टि आहारक, शेष दोनो दृष्टि आहारक अनाहारक दोनों ही ।

गुणस्थान– मिथ्यादृष्टि में गुणस्थान पावे १, मिश्रदृष्टि मे गुणस्थान १ (३ रा), सम्यगदृष्टि मे १२ गुणस्थान ।

जीव– मिथ्यादृष्टि में जीव का भेद पावे १४, ही । मिश्रदृष्टि में जीव का भेद १ (१४ वा), सम्यगदृष्टि मे जीव का भेद पावे ६ (५, ७, ९, ११, १३, १४ वा) ।

पर्याप्ति– तीनो दृष्टि मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– तीनो दृष्टि मे प्राण पावे १० ही ।

संज्ञा– तीन दृष्टि में सज्ञा पावे चारों ही ।

उपयोग– मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि मे उपयोग पावे ६ (३ अज्ञान, ३ दर्शन), सम्यगदृष्टि मे उपयोग पावे ९ (पाच ज्ञान, ४ दर्शन) ।

दृष्टि– दृष्टि पावे अपनी-अपनी ।

कर्म– ३ दृष्टि में कर्म पावे आठों ही ।

शरीर– मिथ्यादृष्टि मिश्रदृष्टि मे शरीर पावे ४ (आहारकशरीर टला), सम्यगदृष्टि मे शरीर पावे ५ ही ।

हेतु– मिथ्यादृष्टि में हेतु पावे ५५ (आहारक आहारकमिश्र टला), मिश्रदृष्टि मे हेतु पावे ४३ (५ योग, ४ अनतानुबंधीचतुष्क, ५ मिथ्यात्व टले), सम्यगदृष्टि में हेतु पावे ५२ (५ मिथ्यात्व टले) ।

कर्मद्वार

गति– आठ कर्म मे गति पावे ४ ही ।

इन्द्रिय– आठ कर्म मे इन्द्रिय पावे पाच ही ।
काया– आठ कर्म मे काया पावे ६ ही ।
योग– आठ कर्म मे योग पावे १५ ही ।
वेद– आठ कर्म मे वेद पावे ३ ही ।
कषाय– आठ कर्म में कषाय पावे २५ ही ।
ज्ञान– चार कर्म में ज्ञान पावे ७ ही (केवलज्ञान टला), चार कर्म मे ज्ञान पावे ८ ही ।
संयम– मोहनीय कर्म मे सयम पावे ६ (यथाख्यातचारित्र टला), ७ कर्म मे सयम पावे ७ ही ।
दर्शन– चार कर्म मे दर्शन पावे ३ ही (केवलदर्शन टला), ४ कर्म (अघाती) में दर्शन पावे ४ ही ।
लेश्या– आठ कर्म मे लेश्या पावे ६ ही ।
भव्य– आठ कर्म मे भव्य-अभव्य दोनो ही ।
सन्नी– आठ कर्म मे सन्नी-असन्नी दोनो ही ।
समकित– आठ कर्म मे समकित पावे ७ ही ।
आहारक– आठ कर्म मे आहारक, अनाहारक दोनो ही ।
गुणस्थान– मोहनीयकर्म मे गुणस्थान पावे १० (प्रथम के), ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय, अन्तराय मे गुणस्थान पावे १२ (प्रथम के), चार अघाती कर्म मे गुणस्थान पावे १४ ही ।
जीव– आठ कर्म मे जीव का भेद पावे १४ ही ।
पर्याप्ति– आठ कर्म मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।
प्राण– आठ कर्म मे प्राण पावे १० ही ।
संज्ञा– आठ कर्म मे सज्ञा पावे ४ ही ।

उपयोग– चार कर्म मे उपयोग पावे १० (केवलद्विक टला), चा
कर्म (अघाती) में उपयोग पावे १२ ही ।

दृष्टि– आठ कर्म में दृष्टि पावे ३ ही ।

कर्म– कर्म पावे अपने अपने ।

शरीर– आठ कर्म में शरीर पावे ५ ही ।

हेतु– आठ कर्म में हेतु पावे ५७ ही ।

शरीरद्वार

गति– औदारिक शरीर में गति पावे २ (मनुष्य, तिर्यच) वैक्रिय, तैजस कार्मण शरीर मे गति पावे ४ ही । आहारक शरीर मे गति पावे १ (मनुष्य की) ।

इन्द्रिय– औदारिक, तैजस कार्मण शरीर मे इन्द्रिय पावे ५ ही, वैक्रिय शरीर में इन्द्रिय पावे २ (एकेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय), आहारकशरीर मे इन्द्रिय पावे १ (पंचेन्द्रिय) ।

काया– औदारिक, तैजस, कार्मण शरीर मे काया पावे ६ ही, वैक्रिय शरीर मे काया पावे २ (वायुकाय, त्रसकाय,), आहारकशरीर मे काया पावे १ (त्रसकाया) ।

योग– औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर में योग पावे १५ ही, वैक्रियशरीर मे योग पावे १० (४ मन, ४ वचन, वैक्रिय, वैक्रियमिश्र), आहारकशरीर मे योग पावे १० (४ मन, ४ वचन, आहारकद्विक) ।

वेद– ४ शरीर मे वेद पावे ३ ही, आहारकशरीर में वेद पावे २ (पुरुष, नपुंसक वेद) ।

कषाय– ४ शरीर में कषाय पावे २५ ही, आहारकशरीर मे कषाय

पावे १२ (प्रथम के तीन चौक, वेद टला) ।

ज्ञान– औदारिक, तैजस, कार्मण शरीर मे ज्ञान पावे ८ (५ ज्ञान, ३ अज्ञान), वैक्रिय शरीर मे ज्ञान पावे ७ (४ ज्ञान, ३ अज्ञान), आहारकशरीर मे ज्ञान पावे ४ (४ ज्ञान) ।

सयम– औदारिक, तैजस, कार्मण शरीर मे सयम पावे ७ ही, वैक्रियशरीर मे सयम पावे ४ (प्रथम के), आहारकशरीर मे सयम पावे २ (सामायिक, छेदोपस्थापनीय) ।

दर्शन– औदारिक, तैजस, कार्मण मे दर्शन पावे ४ ही, वैक्रिय, आहारकशरीर मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला) ।

लेश्या– ५ शरीर मे लेश्या पावे ६ ही ।

भव्य– ४ शरीर भव्य, अभव्य, आहारकशरीर भव्य ।

सन्नी– ४ शरीर सन्नी, असन्नी, आहारकशरीर सन्नी ।

समकित– ४ शरीर मे समकित पावे ७ ही, आहारकशरीर मे समकित पावे ४ (३ मिथ्यात्व, सास्वादन, मिश्र टली) ।

आहारक– औदारिक, तैजस, कार्मण शरीर आहारक, अनाहारक दोनो, वैक्रिय आहारकशरीर अनाहारक ।

गुणस्थान– औदारिक, तैजस, कार्मण शरीर मे गुणस्थान पावे १४, वैक्रिय शरीर मे गुणस्थान पावे ७, आहारकशरीर मे गुणस्थान पावे २ (६-७) ।

जीव– औदारिक तैजस कार्मण शरीर मे जीव का भेद १४ ही, वैक्रियशरीर मे जीव का भेद ४ (४, ११, १३, १४) आहारक मे जीव का भेद पावे १ (१४ वा) ।

पर्याप्ति– ५ शरीर मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– ५ शरीर में प्राण पावे १० ही ।

संज्ञा– ५ शरीर में संज्ञा पावे ४ ही ।

उपयोग– औदारिक तैजस कार्मण शरीर में उपयोग पावे १२ ही, वैक्रिय में उपयोग पावे १०, आहारक मे उपयोग पावे ७ ।

दृष्टि– ४ शरीर मे दृष्टि पावे ३ ही, आहारकशरीर मे दृष्टि पावे १ (सम्यग्दृष्टि) ।

कर्म– ५ शरीर मे कर्म पावे ८ ही ।

शरीर– औदारिक तैजस कार्मण शरीर में शरीर पावे ५ ही, वैक्रिय शरीर मे ४ (आहारक टला), आहारक मे ४ (वैक्रिय टला) ।

हेतु– औदारिक तैजस कार्मण शरीर मे हेतु पावे ५० ही, वैक्रिय मे हेतु पावे ५२ (५ योग टला), आहारकशरीर मे हेतु पावे २२ (१० योग १२ कषाय) ।

हेतुद्वार

(१२ अव्रत) ५ इन्द्रिय, ६ काया, १ मन, ५ मिथ्यात्व, = १७ हेतु)

गति– १७ हेतु में गति पावे चारो ही ।

इन्द्रिय– ४ मिथ्यात्व (आभिनिवेशिक को छोडकर) इन्दिय पावे १ (पंचेन्द्रिय), १३ हेतु मे इन्द्रिय पावे ५ ही ।

काया– ४ मिथ्यात्व मे काया पावे १ (त्रस), १३ हेतु मे काया पावे ६ ही ।

योग– १७ हेतु में योग पावे १३ (आहारक, आहारकमिश्र टला) ।

वेद– १७ हेतु मे वेद पावे ३ ही ।

कषाय– १७ हेतु मे कषाय पावे २५ ही ।

ज्ञान– ५ मिथ्यात्व मे ज्ञान पावे ३ (३ अज्ञान), १२ हेतु मे ज्ञान पावे ६ (मन पर्यायज्ञान, केवलज्ञान टला) ।

सयम– ५ मिथ्यात्व, त्रस की अव्रत मे सयम पावे १ असयम, ११ हेतु मे सयम पावे २ (असयम, सयमासयम) ।

दर्शन– १७ हेतु मे दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला) ।

लेश्या– १७ हेतु मे लेश्या पावे ६ ही ।

भव्य– १७ हेतु मे भव्य, अभव्य दोनो ही ।

सन्नी– ४ मिथ्यात्व मे सन्नी, शेष १३ हेतु सन्नी, असन्नी दोनो ।

समकित– ५ मिथ्यात्व मे समकित पावे १ (मिथ्यात्व) । शेष १२ हेतु मे समकित पावे सातो ही ।

आहारक– १७ हेतु मे आहारक, अनाहारक दोनो ही ।

गुणस्थान– ५ मिथ्यात्व मे गुणस्थान पावे १ (मिथ्यात्व), त्रस की अव्रत मे गुणस्थान पावे ४ (प्रथम के), ११ हेतु मे गुणस्थान पावे ५ (प्रथम के) ।

जीव– ४ मिथ्यात्व मे जीव का भेद पावे २ (१३ वा, १४ वा), १३ हेतु मे जीव का भेद पावे १४ ही ।

पर्याप्ति– १७ हेतु मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– १७ हेतु मे प्राण पावे १० ही ।

संज्ञा– १७ हेतु मे सज्ञा पावे ४ ही ।

उपयोग– ५ मिथ्यात्व मे उपयोग पावे ६ (३ अज्ञान, ३ दर्शन), १२ हेतु मे उपयोग पावे ९ (३ ज्ञान, ३ अज्ञान, ३ दर्शन) ।

दृष्टि– ५ मिथ्यात्व मे दृष्टि पावे १ (मिथ्यात्वदृष्टि), १२ हेतु मे दृष्टि पावे ३ ही ।

कर्म– १७ हेतु में कर्म पावे ८ ही ।
शरीर– १७ हेतु मे शरीर पावे ५ ही ।
हेतु– १७ हेतु में हेतु पावे ५५ (आहारक, आहारकमिश्र टला) ।

आत्माद्वार

गति– चारित्रात्मा मे गति पावे १ (मनुष्य), ७ आत्मा मे गति पावे ४ ही ।
इन्द्रिय– चारित्र-आत्मा इन्द्रिय पावे १ (पंचेन्द्रिय), ज्ञान-आत्मा में इन्द्रिय पावे ४ (एकेन्द्रिय टली), शेष ६ आत्मा में इन्द्रिय पावे ५ ही ।
काया– ज्ञानात्मा, चारित्रात्मा मे काया पावे १ (त्रस), ६ आत्मा में काया पावे ६ ही ।
योग– आठो ही आत्मा मे योग पावे १५ ही ।
वेद– आठो ही आत्मा में वेद पावे ३ ही ।
कषाय– चारित्र-आत्मा मे कषाय पावे १३ (४ संज्वलनचतुष्क कषाय, नव नौकषाय), शेष आत्मा मे कषाय पावे २५ ही ।
ज्ञान– ज्ञान-आत्मा, चारित्र-आत्मा, मे ज्ञान पावे ५, कषाय-आत्मा में ज्ञान पावे ७ (केवलज्ञान टला), शेष ५ आत्मा मे ज्ञान पावे ८ ही ।
संयम– चारित्र-आत्मा मे संयम पावे ५, कषाय-आत्मा मे संयम पावे ६ (यथाख्यात टला), शेष ६ आत्मा मे संयम पावे ७ ही ।
दर्शन– कषाय-आत्मा में दर्शन पावे ३ (केवलदर्शन टला), शेष ७ आत्मा में दर्शन पावे ४ ही ।
लेश्या– ८ आत्मा मे लेश्या पावे ६ ।

भव्य– ज्ञान-आत्मा, चारित्र-आत्मा भव्य, शेष आत्मा भव्य-अभव्य दोनो ही ।

सन्नी– चारित्र- आत्मा मे सन्नी, शेष ७ आत्मा सन्नी, असन्नी दोनो ।

समकित– ज्ञान-आत्मा मे समकित पावे ५ (मिथ्यात्व, मिश्र टली), चारित्र– आत्मा मे समकित पावे ४ ही, (मिथ्यात्व, सास्वादन, मिश्र टली), शेष ६ आत्मा मे समकित पावे ७ ही ।

आहारक– आठो आत्मा आहारक-अनाहारक दोनों ही ।

गुणस्थान– द्रव्य-आत्मा, उपयोग-आत्मा, दर्शन-आत्मा, वीर्य-आत्मा में गुणस्थान पावे १४ ही । कषाय- आत्मा मे गुणस्थान पावे १० ही (प्रथम के), योग-आत्मा मे गुणस्थान पावे १३ (१४ वा टला), ज्ञान-आत्मा मे गुणस्थान पावे १२ (१, ३ रा टला), चारित्र-आत्मा मे गुणस्थान पावे ९ (१ से ५ गुणस्थान टला) ।

जीव– चारित्र-आत्मा मे जीव का भेद पावे १ (१४ वां), ज्ञान-आत्मा मे जीव का भेद पावे ६ (५, ७, ९, ११, १३, १४ टले), शेष आत्मा मे जीव का भेद १४ ।

पर्याप्ति– ८ आत्मा मे पर्याप्ति पावे ६ ही ।

प्राण– ८ आत्मा मे प्राण पावे १० ही ।

संज्ञा– ८ आत्मा मे सज्ञा पावे ४ ही ।

उपयोग– ज्ञान- आत्मा मे उपयोग पावे ९, कषाय-आत्मा मे उपयोग पावे १०, शेष ५ आत्मा मे उपयोग पावे १२ ही ।

दृष्टि– ज्ञान-आत्मा, चारित्र-आत्मा मे दृष्टि पावे १ (सम्यग्दृष्टि), शेष ६ आत्मा मे दृष्टि पावे ३ ही।

कर्म– ८ आत्मा में कर्म पावे ८ ही ।

शरीर– ८ आत्मा मे शरीर पावे ५ ही ।

हेतु– चारित्र-आत्मा में हेतु पावे २८ (१५ योग, १३ कषाय), ज्ञान-आत्मा मे हेतु पावे ५२ (५ मिथ्यात्व टला), ६ आत्मा मे हेतु पावे ५७ ही ।

बाटे(मार्ग) बहताद्वार

गति– बाटे बहता (अन्तराल मे) जीव में गति पावे चारो ।

इन्द्रिय– बाटे बहता जीव में इन्द्रिय पावे ५ ही ।

काया– बाटे बहता जीव में काया पावे ६ ही ।

योग– बाटे बहता जीव मे योग पावे १ (कार्मण) ।

वेद– बाटे बहता जीव में वेद पावे ३ ।

कषाय– बाटे बहता जीव में कषाय पावे २५ ।

ज्ञान– बाटे बहता जीव मे ज्ञान पावे ६ (मन पर्यायज्ञान, केवलज्ञान टला) ।

संयम– बाटे बहता जीव में सयम पावे १ (असंयम) ।

दर्शन– बाटे बहता जीव मे दर्शन पावे २ (चक्षुदर्शन, केवलदर्शन टला) ।

लेश्या– बाटे बहता जीव मे लेश्या पावे ६ ।

भव्य– बाटे बहता जीव मे भव्य, अभव्य दोनो ही ।

सन्नी– बाटे बहता जीव में सन्नी, असन्नी दोनो ही ।

समकित– बाटे बहता जीव मे समकित पावे ६ (मिश्रसमकित टली) ।

आहारक– बाटे बहता जीव मे अनाहारक ।

गुणस्थान– बाटे बहता जीव मे गुणस्थान पावे ३ (१, २, ४) ।
जीव– बाटे बहता जीव मे जीव का भेद पावे ७ (७ का अपर्याप्ता) ।
पर्याप्ति– बाटे बहता जीव मे पर्याप्ति पावे नहीं ।
प्राण– बाटे बहता जीव मे प्राण पावे २ (आयुष, काया), कोई एक भी कहते है (आयुषबलप्राण) ।
सज्ञा– बाटे बहता जीव मे सज्ञा पावे ४ ।
उपयोग– बाटे बहता जीव मे उपयोग पावे ८ ही ।
दृष्टि– बाटे बहता जीव मे दृष्टि पावे २ (मिश्रदृष्टि टली) ।
कर्म– बाटे बहता जीव मे कर्म पावे ८ ही ।
शरीर– बाटे बहता जीव में शरीर पावे २ (तैजसशरीर, कार्मणशरीर) ।
हेतु– बाटे बहता जीव मे हेतु पावे ४३ (१४ योग टला) ।